श्रीपरमात्मने नमः ।

स्वर्गीय कविवर द्यानतरायजी विरचित

धर्मविलास ।

(द्यानतविलास)

प्रकाशक—

श्रीजैनग्रन्थरत्नाकरकार्यालय–बंबई ।

मुद्रक—

निर्णयसागर प्रेस–बम्बई ।

श्रीवीरनिर्वाण संवत् २४४०

छोटी मोटी
ही छोटे रूपमें
छप गये हैं और
नहीं समझी गई ।

Published by Nathuram Premi Propritor Shri Jain Granth Ratnakar Karyalaya Hirabag, near C. P. Tank Bombay.

Printed by R. Y. Shedge, at the Niranaya-Sagar Press 23 Kolbhat Lane, BOMBAY.

निवेदन ।

पाठक महाशय,

लगभग दो वर्ष पहले इस ग्रन्थके छपानेका कार्य प्रारंभ किया गया था, आज इतने समयके बाद तैयार होकर यह आपके हाथोंमें पहुँचता है। इच्छा थी कि इसके साथ कविवर द्यानतरायजीका परिचय और उनकी रचनाकी आलोचना आपकी भेंट की जाय; परन्तु इस समय मेरे शरीरकी जो अवस्था है उसके अनुसार यही बहुत है कि यह ग्रन्थ किसी तरह पूरा होकर आपतक पहुँच जाता है। लगभग चार महीनेसे मैं अस्वस्थ हूँ और इस कारण बहुत कुछ सावधानी रखनेपर भी इसमें कहीं कहीं कुछ अशुद्धियाँ रह गई हैं उनके लिए मैं आपसे क्षमा चाहता हूँ। यदि कभी इसके दूसरे संस्करणका अवसर मिला तो ये अशुद्धियाँ भी न रहेंगीं और ग्रन्थकर्त्ताका परिचय और ग्रन्थालोचन भी लिख दिया जायगा।

धर्मविलास बहुत बड़ा ग्रन्थ है। द्यानतरायजीकी प्रायः सब ही छोटी मोटी रचनाओंका इसमें संग्रह है। परन्तु आप इस ग्रन्थको बहुत ही छोटे रूपमें देखेंगे। इसका कारण यह है इसमेंके कई अंश जुदा छप गये हैं और इस लिए उनकी इसमें शामिल करनेकी आवश्यकता नहीं समझी गई।

इसका एक अंश तो जैनपदसंग्रह (चौथा भाग) है जिसमें द्यानतरायजीके सबके सब पदोंका संग्रह है। यह हमने जुदा छपवाया है।

दूसरा अंश प्राकृत द्रव्यसंग्रहका पद्यानुवाद है जो द्रव्यसंग्रह सान्वयार्थके साथ साथ छपा है।

तीसरा अंश चरचाशतक है जो इसी वर्ष सुन्दर भाषाटीकासहित प्रकाशित किया गया है।

चौथा अंश भाषापूजाओंका संग्रह है। यह लगभग चार पाँच फार्मका होगा। इसे हम इसीमें शामिल करना चाहते थे; परन्तु सर्वसाधारण पूजाप्रेमी लोगोंके लिए इसका जुदा छपवाना ही उचित समझा गया। इसकी कापी तैयार है। बहुत शीघ्र छप जायगा।

इस तरह इन सब अंशोंके मिलानेसे धर्मविलास पूर्ण हो जायगा।

बम्बई }
३०-१२-१३ }

नाथूराम प्रेमी।

विषयसूची।

जैनग्रन्थरत्नाकरकार्यालय बम्बईके छपाये हुए जैनग्रन्थ।

१ प्रद्युम्नचरित्र–हिन्दी भाषामें बहुत ही बढ़ियां ... ... २॥)
२ मोक्षमार्गप्रकाश–पं० टोडरमलजीकृत ... ... १॥)
३ सप्तव्यसनचरित्र–हिंदीवचनिका ... ... ॥=)
४ बनारसीविलास–बनारसीदासजीके विस्तृत जीवनचरित्रसहित १॥)
५ प्रवचनसारपरमागम–कविवर वृंदावनजीकृत अध्यात्मका ग्रन्थ १)
६ वृंदावनविलास–वृन्दावनजीकी समस्त कविताका संग्रह ... ॥)
७ क्षत्रचूड़ामणिकाव्य–हिन्दी भाषानुवादसहित ... ... ॥)
८ भाषापूजासंग्रह– ... ... ॥)
९ मनोरमा उपन्यास–बाबू जैनेन्द्रकिशोरजीकृत ... ... ॥)
१० ज्ञानसूर्योदयनाटक–श्रीनाथूरामप्रेमीकृत ... ... ॥)
११ तत्त्वार्थसूत्र–बालबोधिनी भाषाटीकासहित ... ... ॥)
१२ जैनपदसंग्रह प्रथमभाग–दौलतरामजीकृत, बड़ा अक्षर ... ।=)
१३ जैनपदसंग्रह दूसरा भाग–भागचंदजीकृत, ... ।)
१४ जैनपदसंग्रह तीसरा भाग–भूधरदासजीकृत भजन ... ।-)
१५ जैनपदसंग्रह चौथा भाग–द्यानतरायजीकृत भजन ... ॥=)
१६ जैनपदसंग्रह पांचवाँ भाग–बुधजनजीकृत ... ... ।=)
१७ उपमितिभवप्रपंचकथा–पहलाभाग ... ... ॥)
१८ उपमितिभवप्रपंचकथा–दूसरा भाग ... ... ।-)
१९ चर्चाशतक–सरल भाषाटीकासहित ... ... ॥)
२० न्यायदीपिका–सरल भाषाटीकासहित... ... ... ॥)
२१ धर्मप्रश्नोत्तर–प्रश्नोत्तर रूपमें धर्मके सब विषयोंका वर्णन है ... २)

श्रीवीतरागाय नमः ।

स्व० कविवर द्यानतरायजी विरचित ।

धर्मविलास ।

(द्यानतविलास ।)

मंगलाचरण ।

छप्पय ।

बन्दौं आदि जिनेस, पापतमहरन दिनेस्वर ।
बन्दत हौं प्रभु चंद, चंद दुख तपन हनेस्वर ॥
सांतिनाथ बंदामि, मेघसम सान्तिप्रकासक ।
नमौं नमौं महावीर, वीर भौ-पीर-विनासक ॥
चौवीसौं जिनराजका, धर्म जगतमैं विस्तरौ ।
सुभ ज्ञान भगति वैरागमय, धर्म विलास प्रगट करौ ॥१॥

उपदेशशतक ।

तीर्थंकरस्तुति, छप्पय ।

गुण अनंतकरि सहित, रहित दस आठ दोषकर ।
विमल जोति परगास, भास निज आन विषैहर ॥
सकल सुरासुरवृंदवंद्य, नर इंद्र चंद्र गन ।
राग द्वेष मद मोह क्रोध, छल लोभ सकल हन ॥

१ माया ।

महिमा अनंत भगवंत प्रभु,
जगत जीव असरन सरन।
कर जोरि भविक बंदत चरन,
तारि तारि तारन तरन ॥ १ ॥

सहित अनंत चतुष्ट, नष्ट हुव चारि घाति जब।
कहत वेद मुख चारि, चारि मुख लखत जगत सब ॥
दहिय चौकरी चारि, [1]चारि संज्ञा बल चुक्कौ।
[2]चारि प्रान संजुगत, चारिगति गमन विमुक्कौ ॥
चहुसंघसरन बंधन हरन, अजर अमर सिवपदकरन।
कर जोरि भविक बंदत चरन, तारि तारि तारन तरन ॥२॥

सवैया इकतीसा (मनहर)।

धर्मको बखानत है कर्मनिको [3]भानत है,
लोकालोक जानत है ज्ञानको प्रकासकैं।
ममता तजै खिरी है वानी जो अनच्छरी है,
सुधारूप ह्वै झरी है इच्छाविना जासकैं ॥
सिंघासन सोहत है सक्र मन मोहत है,
तीनि छत्र चौंसठि चमर ढरैं तासकैं।
आनंदकौ कारक है भव्यनकौ तारक है,
ऐसौ अरहंत देव बंदौं मद नासकैं ॥ ३ ॥

रागभाव टार्‌यौ तातैं परिगह गहै नाहिं,
दोषभाव जार्‌यौ तातैं [4]आयुध न पेखिये।

---

१ आहार, भय, मैथुन, परिग्रह। २ काय, श्वासोच्छ्वास, भाषा, आयु। ३ नष्ट करता है। ४ शस्त्र हथियार।

मोहभाव मार्यौ तातैं गहलता दूरि भई,
अंतराय नासतैं अनंत बल पेखिये ॥
ज्ञानावरनी विनासि केवल प्रकास भयौ,
दर्शनावरनी गएँ लोकालोक देखिये ।
ऐसे महाराज जिनराज हैं जिहाज सम,
तिनकौं सरूप लखि आपकौं विसेखिये ॥ ४ ॥
जान्यौ जिनदेव जिन और देव त्याग कीयौ,
कीयौ सिववास जगवास उदवासकै[1] ।
पूज्यौ जिनराज सो तौ पूजनीक जिन भयौ,
पायौ निज थान सब करम विनासकै ॥
ध्यायौ वीतराग तिन पायौ वीतराग पद,
भयौ है अडोल[2] फेरि भववन नासकै ।
जिनकी दुहाई जिन[3] गहौ और देव कोऊ,
जातैं लहै मोक्ष कभी जगमैं न आ सकै ॥ ५ ॥

सवैया तेईसा (मत्तगयन्द)।

जो जिनराज भजै तजि राज, वहै शिवराज लहै पलमाहीं।
जो जिननाथ करै भवि साथ, सु होत अनाथ[4] सबै गुण पाहीं॥
जो जिन ईस नमैं निज सीस, वहै जगदीस तजै परछाई[5]।
जो जिनदेव करै नित सेव, लहै शिव एव महा सुखदाई॥६॥

छंद मल्लिकमाला।

देखि भव्य वीतराग कीन घातिकर्म त्याग,
तास रूप पेखि भाग लज्ज कामरूप ।

---

१ छोड़कर । २ निश्चल । ३ मत गहो । ४ अनाथ अर्थात् जिसका कोई नाथ न हो, स्वयं सबका नाथ । ५ पराई अर्थात् पुद्गलकी छायाको छोड़ देता है, उससे रहित हो जाता है । अथवा छायारहित (केवली) हो जाता है ।

आठ वर्ष घाटि जोय कोटि पुव्व आयु होय,
लेत ना अहार सोय जोर है अनूप ॥
इंद औ फनिंद चंद जच्छ औ नरिंद विंद,
तीन काल तास बंदि होत मोखभूप ।
सर्वज्ञेयकौ प्रमान तुच्छ कालमाहिं जान,
ताहि वंदिये सुजान छांड़ि दौरधूप ॥ ७ ॥

करखा छन्द ।

सर्व तिहुँ लोक सु अलोक तिहुँकालके,
सहित परजाय निज ज्ञानमाहीं ।
देखियौ जास परतच्छ जिमि करतलैं,
तीन हू रेख आंगुरी पाहीं ॥
जासकैं राग औ द्वेष भय चपलता,
लोभ जम जरा गद आदि नाहीं ।
सो महादेव मैं नमौं मन वचन तन,
दीजियै नाथ मुझ मोक्ष ठाहीं ॥ ८ ॥

कुंडलिया ।

बीते जाके घातिया, राग दोष भ्रम नास ।
सुरपति सत वंदत चरन, केवलज्ञान प्रकास ॥
केवलज्ञान प्रकास, भास केवलसुख जाकैं ।
दरसन जास अपार, सार वल प्रगव्यौ ताकैं ॥
गुण अनंत घनरास, आस त्रासा भय जीते ।
ताकौं वंदौं सदा, घातिया जाके वीते ॥ ९ ॥

१ यह छन्द अकलंकाष्टकके "त्रैलोक्यं सकलं त्रिकालविषयं" आदि श्लोकका भावानुवाद है ।

छप्पय ।

भरम हरिय मन मरिय, जरिय मद टरिय मदनवल ।
सकलि फुरिय[1] अघ दुरिय[2], तुरिय[3] गज तजिय सुरथ दल ॥
परम लखिय पर नसिय, चखिय निजरस रस विरचिय ।
धरम वसिय दुख नसिय, खसिय[4] गद जनम मरण तियँ[5] ॥
वसु करम दलन भव भय हरन,
त्रिभुवनपतिनुत तुम चरन ।
तुम अभय अखय निरमल अचल,
जय जिनवर असरन सरन ॥ १० ॥

जै जै स्वामी आदिनाथ, मैं तेरा बंदा ।
जै जै स्वामी आदिनाथ, काटौ भव फंदा ॥
जै जै स्वामी आदिनाथ, देवोंके देवा ।
जै जै स्वामी आदिनाथ, मैं कीनी सेवा ॥
तू जै जै स्वामी आदिजी, मेरी सेवा जानही ।
तातैं मोपै कीजै कृपा, वासा दीजै पास ही ॥ ११ ॥

करखा ।

करम-घनहर[6] पवन, परम निजसुखभवनँ[7],
भरमतम रवि मदन-तपत-चंदा[8] ।
कोपगिरि वज्रधर[9], मान गज हरन हँर[10],
कपट वन हर दँहन[11] लोभ मंदा ॥

१ स्फुरायमान हुई । २ भाग गये । ३ तुरग–घोड़ा । ४ खिसक गये, दूर हो गये । ५ तीन अर्थात् रोग जन्म और मरण । ६ वादल । ७ घर । ८ कामदेवरूपी तापको शमन करनेके लिये चन्द्रमाके समान शीतल । ९ इन्द्र । १० सिंह । ११ आग ।

करन अहि मंत्र वर, मरण रिपु हनन सेर,
पतित उद्धरण जिन नाभिनंदा।
सकल दुख दहन घन, दिपत जस कनक तन,
सरव सुर असुर नर चरन वंदा ॥ १२ ॥

दर्शनस्तुति, छप्पय।

तुव जिनिंद दिट्ठियौ, आज पातक सब भज्जे।
तुव जिनिंद दिट्ठियौ, आज वैरी सब लज्जे॥
तुव जिनिंद दिट्ठियौ, आज मैं सरवस पायौ।
तुव जिनिंद दिट्ठियौ, आज चिंतामणि आयौ॥
जै जै जिनिंद त्रिभुवन तिलक,
आज काज मेरो सर्यौ।
कर जोरि भविक विनती करत,
आज सकल भवदुख टर्यौ॥ १३॥

तुव जिनिंद मम देव, सेव मैं तुमरी करिहौं।
तुव जिनिंद मम देव, नाम तुम हिरदैं धरिहौं॥
तुव जिनिंद मम देव, तुही साहिव मैं बंदा।
तुव जिनिंद मम देव, मही कुमुदनि तुव चंदा॥
जै जै जिनिंद भवि कमल रवि, मेरो दुःख निवारिकैं।
लीजै निकाल भव जालतैं, अपनो भक्त विचारिकैं॥१४॥

अष्टद्रव्य चढ़ानेका फल, सवैया इकतीसा।

नीरके चढ़ायैं भवनीर-तीर पावै जीव,
चंदन चढ़ायैं चंद सेवैं दिन रात है।

१ इन्द्रिय। २ बाण।

अक्षतसौं पूजतैं न पूजै अक्ष सुख जाकौ,
फूलनिसौं पूजैं फूलजातिमैं न जात है॥
दीजै नइवेद तातैं लीजै निरवेद पद,
दीपक चढ़ायैं ज्ञानदीपक विख्यात है।
धूप खेये सेती भ्रम दौर धूप खइ जाय,
फलसेती मोक्ष फल अर्घ अघ घात है॥ १५॥

वर्तमान चौवीसीके नाम, कवित्त (३१ मात्रा)।

ऋषभ अजित संभव अभिनंदन, सुमति पद्म सुपास प्रभु चंद।
पुहपदंत शीतल श्रेयांस प्रभु, वासपूज्य प्रभु विमल सुछंद॥
स्वामि अनंत धर्म प्रभु शांति सु, कुंथु अरह जिन मल्लि अनंद।
मुनिसुव्रत नमि नेमि पास, वीरेश सकल बंदौं सुखकंद॥१६॥

सिद्धस्तुति, सवैया इकतीसा।

ज्ञान भावके विलासी छैदी जिनौं भवफाँसी,
कर्म शत्रुके विनासी त्रासी दुःख दोषके।
चेतन दरबभासी अचल सुधामवासी,
जिनकै है निधि खासी पोषे सुधा चोषके॥
मन वच काय नासी सिद्ध खेतके निवासी,
ऐसे सिद्ध सुखरासी ज्ञाता ज्ञेयकोषके।
भव्य जगतैं उदासी ह्वैकै मनमैं हुलासी,
तीन काल तिन्हैं ध्यासी वासी सुख मोषके॥१८॥

साधुस्तुति, कुंडलिया।

पंच महाव्रत जे धरैं, पंच समिति प्रतिपाल।
पाँचौं इंद्री वसि करैं, षडावसिक गहि चाल।

१ अचल मोक्ष स्थान। २ जीवादि पदार्थ समूहके। ३ ध्यान करेगा।

षडावसिक गहि चाल, टाल मंजन कच लुंचे ।
एक बार ठाड़े अहार, लघु अंबर मुंचैं ॥
भूमिसैन दंतवन त्याग, निजभावविषैं रत ।
ते वंदौं मुनिराज, धरैं जे पंच महाव्रत ॥ १९ ॥

सर्वगुरुस्तुति, सवैया इकतीसा-(सर्व गुरु एक लघु)।

काहूसौं ना बोलैं बैना जो बोलैं तौ साता दैना,
देखैं नाहीं नैनासेती रागी दोषी होइकै ।
आसा दासी जानैं पाखैं माया मिथ्या दूर नाखैं,
राधा[1] हीयेमाहीं राखैं सूधी दृष्टी जोइकै ॥
इंद्री कोई दौरै नाहीं आपा जानै आपामाहीं,
तेई पावैं मोख ठांहीं कर्मैं मैले धोइकै ।
ऐसे साधू वंदौ प्रानी हीया वाचा काया ठानी,
जातैं कीजै आपा ज्ञानी भर्मैं बुद्धी खोइकै ॥ २० ॥

करखा (सर्व लघु, एक गुरु)।

नगन नगपर[2] रहत, मदन[3] मद नहिं गहत,
ममत[4] मत नहिं लहत, दहत आसा ।
करनसुख[5] घटत जस, मरन भय हटत तस,
सरन बुध छुटत पुनि, मद विनासा ॥
अमल पद लखत जब, समल पद नखत सब,
परम रस चखत तब, मन निरासा ।
नमत मन वचन तन, सकल भव भय हरन,
अज अमर पद करन, शिव निवासा ॥ २१ ॥

१ सुमतिरूपी स्त्रीको । २ पर्वतपर । ३ कामदेव । ४ यह मेरा है, इस प्रकार ममत्वबुद्धि । ५ इन्द्रियसुख ।

पंचपरमेष्ठीको नमस्कार, छप्पय ।

प्रथम नमूं अरहंत, जाहि इंद्रादिक ध्यावत ।
वंदूं सिद्ध महंत, जासु सुमिरत सुख पावत ॥
आचारज वंदामि, सकल श्रुत ज्ञान प्रकासत ।
वंदत हौं उवझाय, जास वंदत अघ नासत ॥
जे साधु सकल नरलोकमैं, नमत तास संकट हरन ।
यह परम मंत्र नित प्रति जपौ, विघन उलटि मंगल करन ॥

सद्बुद्धिकृतजिनस्तुति, करखा ।

राग रंगति नहीं दोष संगति नहीं,
मोह व्यापै न निजकला जागी ।
घातिया[1] खै गयौ, ज्ञान परगट भयौ,
ज्ञेयकौं जानि परदर्व त्यागी ॥
सकल औगुण गये, सकल गुणनिधि भये,
सकल तन जस सुकुल रीति पागी ।
कृपा करि कंतकौं मोख पद दीजिये,
कहत है सुबुधि जिनपाय लागी ॥ २३ ॥

करखा छंद ।

कहत है सुबुद्धि जिननाथ बिनती सुनो,
कंत तौ मूढ़ समुझै न क्यौं ही
घोर संसारके हेत जे विषय हैं,
तिन्हैं भोगत चहै सुक्ख स्यौं ही ॥
जाइगौ नर्क तब विषय फल जानसी,
तहां पिछतात सिर धुनै यौं ही ।

१ ज्ञानावरण पांच, दर्शनावरण नव, मोहनीय अट्ठाईस, अंतराय पांच ।

देहु उपदेश अब रहै जु सुहागमुझ,
छांड़ि जग चलै शिव ओर त्यौं ही ॥ २४ ॥
कहौं इस भाँति सुनि चिदानँद बावरे,
कौन विधि नारि पर हियें पैठी ।
कुजसकी खानि दुख दोषकी बहिनि है,
तुमैं दुख देति जो महाहेठी ॥
छांड़ि वह संग तुम परम सुख भोगवो,
सुमतिके संग निज हिये बैठी ।
छांड़ि जगवास शिववास पलमैं लहौ,
परत हौं पाय कहुं जीव ऐठी ॥ २५ ॥

व्यवहार हितोपदेश वर्णन, सवैया तेईसा (मत्तगयन्द) ।

चेतनजी तुम चेतत क्यौं नहिं, आव घटै जिम अंजुलिपानी ।
सोचत सोचत जात सबै दिन, सोवत सोवत रैनि बिहानी ॥
"हारि जुवारि चले कर झारि," यहै कहनावत होत अज्ञानी ।
छांड़ि सबै विषयासुखस्वाद, गहौ जिनधर्म सदा सुखदानी २६
पुन्य उदै गज वाजि महारथ, पाँइक दौरत हैं अगवानी ।
कोमल अंग सरूप मनोहर, सुंदर नारि तहां रति मानी ॥
दुर्गति जात चलै नहिं संग, चलै पुनि संग जु पाप निदानी ।
यौं मनमाहिं विचारि सुजान, गहौ जिनधर्म सदा सुखदानी ॥
मानुष भौ लहिकै तुम जो न, कर्यौ कछु तौ परलोक करौगे ।
जो करनी भवकी हरनी, सुखकी धरनी इस माहिं वरौगे ॥
सोचत हौ अब वृद्धि लहैं, तब सोचत सोचत काठ जरौगे ।
फेरि न दाव चली यह आव, गहौ निज भाव सु आप तरौगे २८

१ नीच स्वभाववाली । २ आयु । ३ पयादे सेवक ।

आव घटै छिन ही छिन चेतन, लागि रह्यौ विषयारसहीको ।
फेरि नहीं नर आव तुमैं, जिम छांड़त अंध बटेर गहीको ॥
आगि लगैं निकसै सोई लाभ, यही लखिकैं गहु धर्म सहीको ।
आव चली यह जात सुजान, "गई सुगई अब राखि रहीको"

कुंडलिया ।

यह संसार असार है, कदली वृक्ष समान ।
यामैं सारपनो लखै, सो मूरख परधान ॥
सो मूरख परधान, मानि कुसुमनि नभ देखै ।
सलिल मथै घृत चहै, शृंग सुंदर खर पेखै ॥
अगनिमाहिं हिम लखै, सर्पमुखमाहिं सुधा चह ।
जान जान मनमाहिं, नाहिं संसार सार यह ॥ ३० ॥

कवित्त (३१ मात्रा) ।

तात मात सुत नारि सहोदर, इन्हैं आदि सब ही परिवार ।
इनमैं वास सराय सरीखो, 'नदी नाव संजोग' विचार ॥
यह कुटुंब स्वारथकौ साथी, स्वारथ विना करत है ख्वार ।
तातैं ममता छांड़ि सुजान, गहौ जिनधर्म सदा सुखकार ३१
चेतनजी तुम जोरत हो धन, सो धन चलैं नहीं तुम लार ।
जाकौं आप जानि पोषत हौ, सो तन जरिकैं ह्वै है छार ॥
विषै भोगिकैं सुख मानत हौ, ताकौ फल है दुःख अपार ।
यह संसार वृक्ष सेमरकौ, मानि कह्यौ मैं कहूं पुकार ॥३२॥

सवैया इकतीसा ।

सीस नाहिं नम्यौ जैन कान न सुन्यौ सुवैन,
देखे नाहिं साधु नैन ताकौं नेह भान रे ।

१ पकड़ी हुई बटेरको । २ आकाशके कुसुम अर्थात् फूलोंको । ३ गधेके सींग । ४ ठंडापन । ५ सेमरका वृक्ष जिसका फूल तो सुहावना होता है, पर फलमें निस्सार धुआ निकलता है । ६ त्याग दे ।

बोल्यौ नाहिं भगवान करतैं न दयौ दान,
उरमें न दया आन यौं ही परवान रे ॥
पाप करि पेट भरि पीठि दी न तीय पर,
पाँव नाहिं तीर्थ कर सही सेती(?) जान रे।
स्याल कहै बार बार अरे सुनि श्वान यार,
इसकौं तू डारि डारि देह निंद्यखान रे ॥ ३३ ॥

देखो चिदानंद राम ज्ञान दिष्टि खोल करि,
तात मात भ्रात सुत स्वारथ पसारा है।
तू तौ इन्हैं आपा मानि ममता मगन भयौ,
बह्यौ भ्रममाहिं जिनधरम विसारा है ॥
यह तौ कुटुंब सब दुःखहीकौ कारन है,
तजि मुनिराज निजकारज विचारा है।
तातैं गहौ धर्म सार स्वर्गमोक्षसुखकार,
सोई लहै भवपार जिन धर्म धारा है ॥ ३४ ॥

सोचत हौ रैनि दिन किहिं विधि आवै धन,
सो तौ धन धर्म विना किनहू न पायौ है।
यह तौ प्रसिद्ध बात जानत जिहान सब,
धर्मसेती धन होय पापसौं विलायौ है ॥
धर्मके कियेतैं सब दुःखकौ विनास होत,
सुखकौ निवास परंपरा मोख गायौ है।
तातैं मन वच काय धर्मसौं लगन लाय,
यह तौ उपाय वीतरागजी बतायौ है ॥ ३५ ॥

व्यवसायचतुष्क ।

केई सुर[1] गावत हैं केई तौ बजावत हैं,
केई तौ बनावत हैं भांडे[2] मृत्ति सानिके ।
केई खाक फटकै हैं केई खाक गटकै हैं,
केई खाक लपटै हैं केई स्वांग आनिकें ॥
केई हाट बैठत हैं अंबुधिमैं[3] पैठत हैं,
केई कान ऐंठत हैं आप चूक जानिके ।
एक सेर नाज काज अपनो सरूप त्याज,
डोलत हैं लाज काज धर्म काज हानिके ॥ ३६ ॥
शिष्यकौं पढ़ावत हैं देहकौं बढ़ावत हैं,
हेमकौं[4] गढ़ावत हैं नाना छल ठानिके ।
कौड़ी कौड़ी मांगत हैं कायर ह्वै भागत हैं,
प्रात उठि जागत हैं स्वारथ पिछानिके ॥
कागदको लेखत हैं केई नख पेखत हैं,
केई कृषि[5] देखत हैं अपनी प्रवानिके ।
एक सेर नाज काज अपनो सरूप त्याज,
डोलत हैं लाज काज धर्म काज हानिके ॥ ३७ ॥
केई नटकला खेलैं केई पटकला वेलैं,
केई घटकला झेलैं आप वैद मानिके ।
केई नाच नाचि आवैं केई चित्रकौं बनावैं,
केई देश देश धावैं दीनता बखानिके ॥
मूरखको पास चहैं नीचनकी सेवा बहैं,
चोरनके संग रहैं लोक लाज मानिके ।

१ राग । २ वर्तन, मिट्टीके । ३ समुद्रमें । ४ सोनेको । ५ खेती ।

एक सेर नाज काज अपनो सरूप त्याज,
डोलत हैं लाज काज धर्म काज हानिके ॥ ३८ ॥
केई सीसको कटावें केई सीस बोझ लावें,
केई भूपद्वार जावैं चाकरी निदानकै ।
केई हरी तोरत हैं पाहनको फोरत हैं,
केई अंग जोरत हैं हुंनर विनोनकै ।
केई जीव घात करैं केई छंदकों उचरैं,
नानाविधि पेट भरैं इन्हैं आदि ठानकै ।
एक सेर नाज काज अपनो सरूप त्याज,
डोलत हैं लाज काज धर्म काज हानकै ॥ ३९ ॥

गृहदुःखचतुष्क ।

रुजगार बनै नाहिं धन तौ न घरमाहिं,
खानेकी फिकर बहु नारि चाहै गहना ।
दैनेवाले फिरि जाहिं मिलै तौ उधार नाहिं,
साझी मिलैं चोर धन आवै नाहिं लहना ॥
कोऊ पूत ज्वारी भयौ घरमाहिं सुत थयौ,
एक पूत मरि गयौ ताकौ दुःख सहना ।
पुत्री वर जोग भई व्याही सुता जम लई,
एते दुःख सुख जानै तिसै कहा कहना ॥ ४० ॥
देहमाहिं रोग आयौ चाहिजै जिया भरायौ,
फटि गये अंबर चरणदासी हैं नही ।
नारी मन जार भायौ तासौं चित्त अति लायौ,
यह तौ निवल वह देत दुःख अतिही ॥

१ नौकरीकी इच्छा करके । २ विज्ञान ।

गृहमाहिं चोर परैं आगी लगै सब जरैं,
राजा लेहि लूट बांधै मारैं सीस पनही ।
इष्टकौ वियोग औ अनिष्टकौ संजोग होइ,
एते दुःख सुख मानै सो तौ मूढ़मति ही ॥ ४१ ॥
जेठमास धूप परै प्यास लगै देह जरै,
कहीं सुनी शादी गमी तहां जायौ चहिये ।
वर्षामैं चुचात भौन लकरी निवरि गई,
ताकौं चलौ लैन पाँव डिगौ दुःख लहिये ॥
शीतके सहायमाहिं अंबर नवीन नाहिं,
भूख लगै प्रात मिलै नाहिं कष्ट सहिये ।
जे जे दुःख गृहमाहिं कहांलौं वखाने जाहिं,
तिन्हैं सुख जानै सो तौ महामूढ़ कहिये ॥ ४२ ॥
तिनकौ पुरानो घर कौड़ी सौ न धान जामैं,
मूसे विल्ली सांप वीछू न्योले जु रहत हैं ।
भाजन तौ मृत्तिकाके फूटे खाली धान नाहिं,
टूटी जो खरैरी खाट मत्किौं लहत हैं ॥
कुटिल कुरूप नारी कानी काली कलहारी,
कर्कश वचन बोलै औगुन महत हैं ।
हाहा मोहकर्मकी विटंवना कही न जाइ,
ऐसौ गृह पाय मूढ़ त्यागौ ना चहत है ॥ ४३ ॥

उपदेश ।

जिंदगी सैंहलपै नाहक धरम खोवै,
जाहिर जहान दीखै ख्वावका तमासा है ।

१ फूसका । २ चुभनेवाली । ३ खटमल । ४ थोड़ीसी । ५ स्वप्न ।

फकीरीके खातिर तू काम बद करता है,
अपना मुलक छोड़ि हाथ लिया कांसौ है ॥
कौड़ी कौड़ी जोरि जोरि लाख कोरि जोरता है,
कालकी कुमक आएँ चलना न मासा है।
सौहत न फरामोश हूजिये गुसईयाको,
यही तौ सुखन खूब ये ही काम खासा है ॥ ४४ ॥

कवित्त (३१ मात्रा)।

हर छिन नाव लेइ सांईका, दिलका कुँफर सबै करि दूर।
पाक बेऐब हमेश भिर्स्त दे, दोजकँ-फंद करै चकचूर ॥
हँमां सुमां जहान सब बूझैं, नाहीं बूझैं बंदैं ते कूर।
वेचि मूल वेचमन साहिब, चैसमौं अंदर खड़ा हुजूर॥४५॥

जीवके वैरी वर्णन, सवैया इकतीसा।

सफरस फास चाहै रसना हू रस चाहै,
नासिका सुवास चाहै नैन चाहै रूपकौं।
श्रवन शबद चाहै काया तौ प्रमाद चाहै,
वचन कथन चाहै मन दौर धूपकौं ॥
क्रोध क्रोध कर्यौ चाहै मान मान गह्यौ चाहै,
माया तौ कपट चाहै लोभ लोभ कूपकौं।
परिवार धन चाहै आशा विषै-सुख चाहै,
एते वैरी चाहैं नाहीं सुख जीव भूपकौं ॥ ४६ ॥

वैरी दूर करनेका उपाय।

जीव जो पै स्याना होय पांचौं इंद्री वसि करै,
फास रस गंध रूप सुर राग हरिकै।

१ परिवार। २ अपना राज्य। ३ भिक्षाका पात्र। ४ चढ़ाई। ५ क्षण-भर भी। ६ भूल जाना। ७ मलिनता। ८ मोक्ष। ९ नर्कका जंजाल। १० हम तुम सब। ११ आखोंके।

आसन बतावै काय वचकौं सिखावै मौन,
ध्यानमाहिं मन लावै चंचलता गरिकै ॥
क्षमा करि क्रोध मारै विनै धरि मान गारै,
सरलसौं छल जारै लोभदसा टरिकै।
परिवार नेह त्यागै विषै-सैन छांड़ि जागै,
तब जीव सुखी होय वैरी वस करिकै ॥ ४७ ॥

नरकनिगोददुःख कथन।

बसत अनंतकाल बीतत निगोदमाहिं,
अखर अनंत भाग ग्यान अनुसरै है।
छासठि सहस तीनसै छतीस बार जीव,
अंतर मुहूरतमैं जन्मै और मरै है ॥
अंगुल असंखभाग तहां तन धारत है,
तहांसेती क्यौं ही क्यौं ही क्यौं ही कै निसरै है।
इहां आय भूलि गयौ लागि विषै भोगनिमैं,
ऐसी गति पाय कहा ऐसे काम करै है ॥ ४८ ॥

निगोदके छत्तीस कारण।

मन वच काय जोग जाति रूप लाभ तप,
कुल बल विद्या अधिकार मद करना।
फरस रसन घ्रान नैन कान मगनता,
भूपति असन नारि चोरका उचरना ॥

१ संख्या प्रमाण; श्रुतज्ञानके अक्षरोंका भाग श्रुतकेवलीके ज्ञानमें देनेपर जो लब्ध आवे, उसको अक्षर कहते हैं। उसमें अनन्तका भाग दिया जाय फिर जो लब्ध आवे, उसका एक भाग सूक्ष्म निगोद लब्ध्यपर्याप्तकका ज्ञान होता है। २ राजकथा, भोजनकथा, स्त्रीकथा और चोरकथाका कहना।

कँवीलेके खातिर तू काम वद करता है,
अपना मुलक छोड़ि हाथ लिया कासा है ॥
कौड़ी कौड़ी जोरि जोरि लाख कोरि जोरता है,
कालकी कुँमक आएँ चलना न मासा है।
सांइत न फ़रामोश हूजिये गुसईंयाको,
यही तौ सुखन खूब ये ही काम खासा है ॥ ४४ ॥

कवित्त (३१ मात्रा)।

हर छिन नाव लेइ सांईका, दिलका कुँफ़र सबै करि दूर।
पाक बेऐब हमेश भिर्स्त दे, दोजकके-फंद करै चकचूर ॥
हँमां सुमां जहान सब बूझैं, नाहीं बूझैं वंदैं ते कूर।
वेचि मूल वेचमन साहिब, चैसमों अंदर खड़ा हुजूर॥४५॥

जीवके वैरी वर्णन, सवैया इकतीसा।

सफरस फास चाहै रसना हू रस चाहै,
नासिका सुवास चाहै नैन चाहै रूपकौं।
श्रवन शवद चाहै काया तौ प्रमाद चाहै,
वचन कथन चाहै मन दौर धूपकौं ॥
क्रोध क्रोध कर्यौ चाहै मान मान गह्यौ चाहै,
माया तौ कपट चाहै लोभ लोभ कूपकौं।
परिवार धन चाहै आशा विषै-सुख चाहै,
एते वैरी चाहैं नाहीं सुख जीव भूपकौं ॥ ४६ ॥

वैरी दूर करनेका उपाय।

जीव जो पै स्याना होय पांचौं इंद्री वसि करै,
फास रस गंध रूप सुर राग हरिकें।

१ परिवार। २ अपना राज्य। ३ भिक्षाका पात्र। ४ चढ़ाई। ५ क्षण-भर भी। ६ भूल जाना। ७ मलिनता। ८ मोक्ष। ९ नर्कका जंजाल। १० हम तुम सब। ११ आखोंके।

आसन वतावै काय वचकौं सिखावै मौन,
ध्यानमाहिं मन लावै चंचलता गरिकै ॥
क्षमा करि क्रोध मारै विनै धरि मान गारै,
सरलसौं छल जारै लोभदसा टरिकै।
परिवार नेह त्यागै विषै-सैन छांड़ि जागै,
तव जीव सुखी होय वैरी वस करिकै ॥ ४७ ॥

नरकनिगोददुःख कथन।

वसत अनंतकाल वीतत निगोदमाहिं,
अखर अनंत भाग ग्यान अनुसरै है।
छासठि सहस तीनसै छतीस बार जीव,
अंतर मुहूरतमैं जन्मै और मरै है ॥
अंगुल असंखभाग तहां तन धारत है,
तहांसेती क्यौं ही क्यौं ही क्यौं ही कै निसरै है।
इहां आय भूलि गयौ लागि विषै भोगनिमैं,
ऐसी गति पाय कहा ऐसे काम करै है ॥ ४८ ॥

निगोदके छत्तीस कारण।

मन वच काय जोग जाति रूप लाभ तप,
कुल वल विद्या अधिकार मद करना।
फरस रसन घ्रान नैन कान मगनता,
भूपति असन नारि चोरका उचरना ॥

१ संख्या प्रमाण; श्रुतज्ञानके अक्षरोंका भाग श्रुतकेवलीके ज्ञानमें देनेपर जो लब्ध आवे, उसको अक्षर कहते हैं। उसमें अनन्तका भाग दिया जाय फिर जो लब्ध आवे, उसका एक भाग सूक्ष्म निगोद लब्ध्यपर्याप्तकका ज्ञान होता है। २ राजकथा, भोजनकथा, स्त्रीकथा और चोरकथाका कहना।

जूवा मांस मद दारी आखेट चोरी पर,-
नारी विसन क्रोध मान माया लोभ धरना।
एकांत विनय विपरीत संसय अग्यान,
एई भाव त्यागिकै निगोद पंथ हरना ॥ ४९ ॥

नरकदुःख।

सीत नर्कमाहिं परै मेरुसम उस्न गोला,
उस्न नर्क सीत गोला बीचमैं विलायौ है।
छेदनता भेदनता काटनता मारनता,
चीरनता पीरनता नाना भाँति तायौ है ॥
रोग छयानवै विख्यात एक एक अंगुलमैं,
परनारी भोगी आगि-पूतली जलायौ है।
सागरौंकी थिति पूरी करी तैं अनंती बार,
अजहूं न समुझै है तोहि कहा भायौ है ॥ ५० ॥
भूख तौ विसेस जो असेस अन्न खाइ जाइ,
मिलै नाहिं एक कन एतौ दुःख पायौ है।
तृषा तौ अपार सब अंबुधिकौ नीर पीवै,
पावै नाहिं एक बूँद एतौ कष्ट गायौ है ॥
आँखकी पलक मान साता तौ तहां न जान,
क्रोधभाव भूरि वैर उद्धत बतायौ है।
सागरोंकी थिति पूरी करी तैं अनंती बार,
अजहूं न समझै है तोहि कहा भायौ है ॥ ५१ ॥

पुण्यपाप कथन, छप्पय।

कबहुं चढ़त गजराज, बोझ कबहूं सिर भारी।
कबहुं होत धनवंत, कबहुं जिम होत भिखारी ॥

१ रंडीबाजी।

कबहुं असन लहि सरस, कबहुं नीरस नहिं पावत।
कबहुं वसन सुभ सघन, कबहुं तन नगन दिखावत ॥
कबहूं सुछंद बंधन कबहुं, करमचाल बहु लेखिये।
यह पुन्यपाप फल प्रगट जग, राग दोष तजि देखिये ॥ ५२ ॥
कबहुं रूप अति सुभग, कबहुं दुर्भग दुखकारी।
कबहुं सुजस जस प्रगट, कबहुं अपजस अधिकारी ॥
कबहुं अरोग सरीर, कबहुं बहु रोग सतावत।
कबहुं वचन हित मधुर, कबहुं कछु बात न आवत ॥
कबहूं प्रवीन कबहूं मुगध, विविधरूप जन पेखिये।
यह पुन्यपापफल प्रगट जग, राग दोष तजि देखिये ॥ ५३ ॥

मिथ्यादृष्टि कथन, सवैया इकतीसा।

नारीरस राचत है आठौं मद माचत है,
रीझि रीझि नाचत है मोहकी मगनमैं।
ग्रंथनकौं वांचत है विषैकौं न वांचत है,
आपनेंपो वांचत है भ्रमकी पगनमैं ॥
स्वारथकौं जांचत है स्वारथ न जांचत है,
पाप भूरि सांचत है कामकी जगनमैं।
पोषत है पांचनकौं सहै नर्क आंचनकौं,
ऐसी करतूति करै लोभकी लगनमैं ॥ ५४ ॥
ग्रंथनके पढ़ें कहा पर्वतके चढ़ें कहा,
कोटि लच्छि बढ़ैं कहा कहा रंकपनमैं।

१ स्वच्छन्द, स्वतंत्र। २ मुग्ध, मूर्ख। ३ विषयोंको नहीं छोड़ता है। ४ आत्मत्वसे वंचित होता है। ५ अपने मतलबके लिये याचना करता है। ६ आत्महित। ७ संचित करता है। ८ पांचों इंद्रियोंको।

संजम आचरैं कहा मौनव्रत धरैं कहा,
तपस्याके करैं कहा कहा फिरैं वनमैं ॥
छंद करैं नये कहा जोगासन भये कहा,
दानहूके दये कहा बैठें साधुजनमैं ।
जौलौं ममता न छूटै मिथ्याडोरी हू न टूटै,
ब्रह्मज्ञान विना लीन लोभकी लगनमैं ॥ ५५ ॥

सवैया तेईसा ।

मौन रहैं वनवास गहैं, वर काम दहैं जु सहैं दुख भारी ।
पाप हरैं सुभरीति करैं, जिनवैन धरैं हिरदे सुखकारी ॥
देह तपैं वहु जाप जपैं, न वि आप जपैं ममता विसतारी ।
ते मुनि मूढ़ करैं जगरूढ़, लहैं निजगेह न चेतनधारी॥५६॥

गुरु शिष्यके प्रश्नोत्तर ।

सोचत जात सबै दिनरात, कछू न वसात कहा करिये जी ।
सोच निवार निजातम धारहु, राग विरोध सबै हरिये जी ॥
यौं कहिये जु कहा लहिये, सु वहै कहिये करुना धरिये जी ।
पावत मोख मिटावत दोष, सु यौं भवसागरकौं तरिये जी ५७

वीतरागस्तुति, छप्पय ।

वीतरागकौ धर्म, सर्व जीवनकौ तारन ।
वीतरागकौ धर्म, कर्मकौ करै निवारन ॥
वीतरागकौ धर्म, प्रगट क्रोधादिक नासै ।
वीतरागकौ धर्म, ग्यान केवल परगासै ॥
जय वीतरागकौ धर्म यह, राग दोष जामैं नही ।
संसार परत इस जीवकौं, धर्म सरन जिनवर कही ५८

धर्मका महत्त्व, सवैया इकतीसा ।

चिंतामनि पोरसा (?) रसायन कलपवृच्छ,
कामधेनु चिंतावेलि पारस प्रमान रे ।
इन्हैं आदि उत्तम पदारथ हैं जगतमैं,
मिलैं एक भव सुख देत परधान रे ॥
परभौ गमन किये चलत न संग कोऊ,
विना पुन्य उदै एऊ मिलत न आन रे ।
धर्मसौं अनेक सुख पावै भव भव जीव,
तातैं गहौ धर्म परंपरा निरवान रे ॥ ५९ ॥

मिथ्यादृष्टिवर्णन ।

असिधारी देव मानैं लोभी गुरु चित्त आनैं,
हिंसामैं धरम जानैं दूरि सो धरमसौं ।
माटी जल आगि पौन वृच्छ पशु पंखी जौन,
इन्हैं आदि सेवैं कैसैं छूटैं ते करमसौं ॥
रोम चाम हाड़ विष्टा आदि जे अपावन हैं,
तिन्हैं सुचि मानैं आंखि मूंदी है भरमसौं ।
दीरघ संसारी तिन्हैं देखि संत चुप्पु धारी,
सवसौं वसाय न वसाय वेसरमसौं ॥ ६० ॥

सम्यग्दृष्टीकी इच्छा, सवैया (मदिरा) ।

आगमकौ पढ़िवौ जिनवंदन, संगति साधरमीजनकी ।
संजमवंत गुनज्ञ कथा, गहि मौन कथा सठ लोगनकी ॥
सर्वनिसौं हितवैन उचारन, भावन पावन चेतनकी[1] ।
ए प्रगटौ भवभौ मुझ तौ लग, जौलग मोख न कर्मनकी॥६१॥

---

१ पवित्र आत्माकी भावना ।

व्यवहारसम्यक्त्व तथा निश्चयसम्यक्त्व, छप्पय ।

नमौं देव अरहंत, अष्टदश दोष रहित हैं ।
बंदौं गुरु निरग्रंथ, ग्रंथ ते नाहिं गहत हैं ॥
बंदौं करुनाधर्म, पापगिरि दलन वज्र वर ।
बंदौं श्रीजिनवचन, स्यादवादांक सुधाकर ॥
सरधान द्रव्य छह तत्त्वकौ, यह सम्यक विवहार मत ।
निहचैं विसुद्ध आतम दरव, देव धरम गुरु ग्रंथ नुत॥६२॥

सोचके छोड़नेका वर्णन, सवैया तेईसा ।

काहेकौं सोच करै मन मूरख, सोच करैं कछु हाथ न ऐ है।
पूरव कर्म सुभासुभ संचित, सो निहचैं अपनो रस दै है॥
ताहि निवारन को वलवंत, तिहूं जगमाहिं न कोइ लसै है।
तातैं हि सोच तजौ समता गहि, ज्यौं सुख होइ जिनंद कहै है॥

उद्यम वर्णन, सवैया इकतीसा ।

रोजगार विना यार यारसौं न करै प्यार,
रोजगार विना नार नाहर ज्यौं घूरै है ।
रोजगार विना सब गुण तौ विलाय जाय,
एक रोजगार सब औगुनकौं चूरै है ॥
रोजगार विना कछू बात बनि आवै नाहिं,
विना दाम आठौं जाम बैठो धाम झूरै है।
रोजगार बनै नाहिं रोज रोज गारी खाहिं,
ऐसौ रोजगार एक धर्म कीये पूरै है ॥ ६४ ॥

ज्ञानीचिन्तवन, सवैया तेईसा ।

कर्म सुभासुभ जो उदयागत, आवत हैं जब जानत ज्ञाता।
पूरव भ्रामक भाव किये बहु, सो फल मोहि भयौ दुखदाता॥

सो जड़रूप सरूप नहीं मम, मैं निज सुद्ध सुभावहि[१] राता।
नास करौं पलमैं सबकौं अब, जाय बसौं सिवखेत विख्याता॥
सिद्ध हुए अब होंइ जु होंइगे, ते सब ही अनुभौगुनसेती।
ताविन एक न जीव लहै सिव, घोर करौ किरिया बहु केती॥
ज्यौं तुषमाहिं नहीं कनलाभ, किये नित उद्यमकी विधि जेती।
यौं लखि आदरिये निजभाव, विभाव विनास कला सुभ एती,

ज्ञानीका बलवर्णन, छप्पय ।

धाम तजत धन तजत, तजत गज वर तुरंग रथ ।
नारि तजत नर तजत, तजत भुवपति प्रमादपथ ॥
आप भजत अघ भँजत[२], भजत सब दोष भयंकर ।
मोह तजत मन तजत, सजत दल कर्म सत्रुपर ॥
अरि चट्टचट्ट[३] सब कट्टकरि[४], पट्टपट्ट[५] महि[६] पट्ट[७] किय ।
करि अट्ठ नट्ठ[८] भवकट्ठ[९] दहि, सट्ट सट्ट सिव संट्ट[१०] लिय॥६७॥
तजत अंग अरधंग, करत थिर अंग पंग मन ।
लखि अभंग सरबंग, तजत वचननि तरंग मन ॥
जित अनंग थिति सैलसिंग[११], गहि भावलिंग वर ।
तप तुरंग चढ़ि समर रंग रचि, करम जंग करि ॥
अरि झट्ट झट्ट मद हट्ट करि, सट्ट सट्ट चौपट्ट किय ।
करि अट्ठ नट्ठ भव कट्ठ दहि, सट्ट सट्ट सिव सट्ट लिय॥६८॥
भरम नष्ट भय नष्ट, कष्ट तन सहत धीर धर ।
वचन मिष्ट गहि रहत, लहत निज धाम पुष्टकर ॥

---

१ मैं अपने शुद्ध स्वभावमें रक्त हूं। २ भागते हैं। ३ चटाचट, चटपट। ४ काटकरके। ५ पटापट। ६ पृथ्वीपर। ७ पछाड़ दिये। ८ नष्ट। ९ भवकष्ट। १० पा लिया। ११ शैलश्रृंग, पर्वतका शिखर।

सुद्धदृष्टि लखि दुष्ट, सिष्टकौ हेत विहंडित ।
करम थान करि भिष्ट, भाव उतकिष्ट सुमंडित ॥
सुभ परम मिष्ट समता सुधा, गट्ट गट्ट तिन गट्ट किय ।
करि अट्ठ नट्ठ भव कट्ठ दहि, सट्ट सट्ट सिव सट्ट लिय॥६९॥
गहत पंच व्रत सार, रहित परपंच करन पंन ।
समिति पंच प्रतिपाल, जपत नित इष्ट पंचे[२] मन ॥
धरत पंच आचार, पंच विग्यान विचारत ।
लहत पंच सिवहेत, पंच चारित्त चितारत ॥
अरि छट्ट छट्ट परिकट्ट करि, तट्ट तट्ट दहवट्ट किय ।
करि अट्ठ नट्ठ भवकट्ठ दहि, सट्ट सट्ट सिव सट्ट लिय ॥७०॥

मिथ्यात्वादि सिद्धपर्य्यंत अवस्थाएँ, सवैया इकतीसा ।

मिथ्या भाव मारत हैं सम्यककौं धारत हैं,
अव्रतकौं टारत हैं गारत हैं ममता ।
महाव्रत पारत हैं श्रेणीकौं सँभारत हैं,
वेदभाव जारत हैं लोभ भाव ममता ॥
घातिया निवारत हैं ज्ञानकौं पसारत हैं,
लोकालोककौं निहारैं इंद्र आय नमता ।
जोगकौं विडारत हैं मोखकौं विहारत हैं,
ऐसी गति धारैं सुख होत अनोपमता ॥ ७१ ॥

सर्वगुरुस्तुति वर्णन, छंद करखा ।

मोहकौं भानिकै, आपकौं जानिकै,
ज्ञानमैं आनिकै, होत ग्याता ।

१ पांच इंद्रिय । २ पंचपरमेष्ठी ।

मारकौं[१] मारिकै, वामकौं[२] टारिकै,
पापकौं डारिकै, पुन्य पाता ॥
क्रोधकौं जारिकै, मानकौं गारिकै,
वंककौं दारिकै, लोभ हाता ।
कर्मकौं नासिकै, मोखमैं वासिकै,
ताहिकौं चित्तमैं, भव्य ध्याता ॥ ७२ ॥

उपदेश, सवैया इकतीसा ।

जगतके निवासी जगहीमैं रति मानत हैं,
मोखके निवासी मोखहीमैं ठहराये हैं ।
जगके निवासी काल पाय मोख पावत हैं,
मोखके निवासी कभी जगमैं न आये हैं ॥
एतौ जगवासी दुखवासी सुखरासी नाहिं,
वे तो सुखरासी जिनवानीमैं बताये हैं ।
तातैं जगवासतैं उदास होइ चिदानंद,
रत्नत्रयपंथ चलैं तेई सुखी गाये हैं ॥ ७३ ॥
याही जगमाहिं चिदानंद आप डोलत है,
भरम भाव धरै हरै आतमसकतकौं ।
अष्टकर्मरूप जे जे पुद्गलके परिनाम,
तिनकौं सरूप मानि मानत सुमतकौं ॥
जाहीसमै मिथ्या मोह अंधकार नासि गयौ,
भयौ परगास भान चेतनके ततकौं ।
तहीसमै जानौ आप आप पर पररूप,
भानि भव-भांवरि[३] निवास मोख गतकौं ॥ ७४ ॥

१ कामदेवको । २ मायाको । ३ भ्रमण ।

रागदोष मोहभाव जीवकौ सुभावनाहिं,
जीवकौ सुभाव सुद्धचेतन वखानियै ।
दर्व कर्मरूप ते तौ भिन्न ही विराजते हैं,
तिनकौ मिलाप कहो कैसैं करि मानियै ॥
ऐसो भेद ज्ञान जाके हिरदैं प्रगट भयौ,
अमल अवाधित अखंड परमानियै ।
सोई सु विचंच्छन मुकत भयौ तिहुँकाल,
जानी निज चाल पर चाल भूलि भानियै ॥ ७५ ॥

मूढ़दशा वर्णन ।

जैसैं गजराज कोई पाहनफटिक जोई,
प्रतिविंव लखि सोई दंत दंतसौं अर्यौ ।
वानर मूठी विसेख पराधीन धरै भेख,
कूपमाहिं सिंह देख सिंह देखकै पर्यौ ॥
कांचभौनमाहिं स्वान सोर करै आप जान,
नलिनीकौ सूवा मान मोहि किन पकर्यौ ।
तैसैं पसु-मोह व्याप परहीकौं कहै आप,
भ्रमसेती आपनपो आपन ही विसर्यौ ॥ ७६ ॥

जीवकी पूर्वदशा ।

स्वपर न भेद पायौ परहीसौं मन लायौ,
मन न लगायौ निजआतम सरूपसौं ।
रागदोषमाहिं सूतौं विभ्रम अनेक गूतौं,
भयौ नाहिं वूतौं जो निकसौं भवकूपसौं ॥

१ विद्वान् । २ स्फटिक पत्थर । ३ देखकरके । ४ कांचका घर । ५ सोता । ६ गूंथा, उलझा रहा । ७ सामर्थ्य ।

अव मिथ्यातम सान प्रगटौ प्रवोध-भान,
महा सुखदान आन मोह दौर भूपसौं ।
आप आपरूप जान्यौ परहीकौं पर मान्यौ,
आपरस सान्यौ ठान्यौ नेह सिवभूपसौं ॥ ७७ ॥

ज्ञानवर्णन ।

सरसौं समान सुख नहीं कहूं गृहमाहिं,
दुःख तौ अपार मन कहांलौं वताइयै ।
तात मात सुत नारि स्वारथके सगे भ्रात,
देह तौ चलै न साथ और कौन गाइयै ॥
नरभौ सफल कीजै और स्वाद छांड़ि दीजै,
क्रोध मान माया लोभ चित्तमैं न लाइयै ।
ज्ञानके प्रकासनकौं सिद्धथान वासनकौं,
जीमैं ऐसी आवै है कि जोगी होइ जाइयै ॥ ७८

अशोकपुष्पमंजरी छंद ।

रागभाव टारिकै सु दोषकौं विडारिकै,
सु मोहभाव गारिकै निहारि चेतनामई ।
कर्मकौं प्रहारिकै सु भर्मभाव डारिकै,
सुचर्म दृष्टि दारिकै विचार सुद्धता लई ॥
ज्ञानभाव धारिकै सु दृष्टिकौं पसारिकै,
लखौ सरूप तारिकै अपार मुद्धता खई ।
मत्तभाव मारिकै सु मारभाव छारिकै,
सु मोखकौं निहारिकै विहारकौं विदा दई

१ ज्ञानसूर्य्य । २ मुग्धता, अज्ञान ।

भर्मभाव भानिकै सुभावकौं पिछानिकै,
सुध्यानमाहिं आनिकै सु आर्न-बुद्धि खै गई।
धर्मकौं वखानिकै सुधासुभाव पानिकै,
सुप्रानभाव जानिकै सुजान चेतनामई ॥
सुद्धभाव ठानिकै सुवानिकौं प्रवानकै,
सुरूप सुद्ध मानिकै सु मान सुद्धता नई।
अष्टकर्म हानिकै सुदिष्टिकौं प्रधानकै,
सुग्यानमाहिं आनिकै अग्यानकौं बिदा दई॥८०॥
चेतना सरूप जीव ज्ञानदृष्टिमैं सदीव,
कुंभ आन आन घीव त्यौं सरीरसौं जुदा।
तीनलोकमाहिं सार सास्वतो अखंडधार,
मूरतीककौं निहार नीरकौं बुदैबुदा॥
सुद्धरूप बुद्धरूप एकरूप आपभूप,
आतमा यही अनूप पर्मजोतिकौ उदा।
स्वच्छ आपने प्रमानि रागदोष मोह भानि,
भव्यजीव ताहि जानि छांड़ि शोक औ मुँदा॥८१॥
सुद्ध आतमा निहारि राग दोष मोह टारि,
क्रोध मान वंक गारि लोभ भाव भानु रे।
पापपुन्यकौं विडारि सुद्धभावकौं सँभारि,
भर्मभावकौं विसारि पर्मभाव आनु रे॥
चर्मदृष्टि ताहि जारि सुद्धदृष्टिकौं पसारि,
देहनेहकौं निवारि सेतध्यान ठानु रे।

१ परबुद्धि। २ सम्यग्दर्शन। ३ बुदबुदा। ४ मोद, हर्ष। ५ नष्टकर। ६ शुक्लध्यान।

जागि जागि सैन छार भव्य मोखकौं विहार,
एक बारके कहे हजार बार जानु रे॥८२॥

छप्पय।

जीव चेतनासहित, आपगुन परगुन जानै।
पुग्गलद्रव्य अचेत, आप पर कछु न पिछानै॥
जीव अमूरतिवंत, मूरती पुग्गल कहियै।
जीव ज्ञानमयभाव, भाव जड़ पुग्गल लहियै॥
यह भेद ज्ञान परगट भयौ, जो पर तजि अनुभौ करै।
सो परम अतिंद्री सुखै सुधा, भुंजत भौसागर तिरै॥८३॥
यहै असुद्ध मैं सुद्ध, देह परमान अखंडित।
असंख्यातपरदेस, नित्य निरभै मैं पंडित॥
एक अमूरति निर उपाधि, मेरो छैय नाहीं।
गुनअनंतज्ञानादि, सर्व ते हैं मुझमाहीं॥
मैं अतुल अचल चेतन विमल, सुखअनंत मोमैं लसै।
जब इस प्रकार भावत निपुन, सिद्धखेत सहजैं बसै॥८४॥

सवैया तेईसा।

केवलग्यानमई परमातम, सिद्धसरूप लसै सिवठाहीं।
ग्यायकरूप अखंड प्रदेस, लसै जगमैं जग सौं वह नाहीं॥
चेतन अंक लियैं चिनमूरति, ध्यान धरौ तिसकौं निजमाहीं।
राग विरोधं निरोध सदा, जिम होइ वही तजिकै विधिं-छाहीं॥
राग विरोध नहीं उरअंतर, आप निरंतर आतम जानै।
भोगसँयोगवियोगविषैं, ममता न करै समता परवानै॥

१ सोना छोड़। २ सुखरूपी अमृत। ३ पुद्गलद्रव्य। ४ नाश। ५ चिह्न। ६ द्वेष। कर्मोंकी छाया।

आन बखान सुहाइ नहीं, परधान पदारथसौं रति मानै।
सो बुधिवान निदानं[1] लहै सिव, जो जगके दुख यौं सुख मानै॥
ज्ञायकरूप सदा चिनमूरति, राग विरोध उभै परछाहीं।
आप सँभार करै जब आतम, वे परभाव जुदे कछु नाहीं॥
भाव अज्ञान करै जबलौं, तबलौं नहिं ग्यान लखै निजमाहीं।
भ्रामकभाव बढ़ाव करै जग, चेतनभाव करै सिवठाहीं॥८७॥

सिंहावलोकन—छप्पय।

सुनहु हंसे[2] यह सीख, सीख मानौ सदगुरकी।
'गुरकी आँन[3] न लोपि, लोपि मिथ्यामति उरकी॥
उरकी समता गहौ, गहौ आतम अनुभौ सुख।
सुख सरूप थिर रहै, रहै जगमैं उदास रुख॥
रुखें[4] करौ नहीं तुम विषयपर, पर तजि परमातम मुनंहु[5]।
मुनहु न अजीव जड़ नाहिं निज, निज आतम वर्नन सुनहु॥
भजत देव अरहंत, हंत मिथ्यात मोहकर।
करत सुगुरु परनाम, नाम जिन जपत सुमन धर॥
धरम दयाजुत लखत, लखत निजरूप अमलपद।
पदमभाव[6] गहि रहत, रहतँ[7] हुव दुष्ट अष्ट मद॥
मदनं[8]बल घटत समता प्रगट, प्रगट अभय ममता तजत।
तजत न सुभाव निज अपर तज,तज सुदुःख सिव सुख भजत
लहत भेदविज्ञान, ज्ञानमय जीव सु जानत।
जानत पुग्गल अन्य, अन्यसौं नातौ भानंत[9]॥

---

१ अखिरकार। २ हे आत्मन्। ३ आज्ञा। ४ अभिलाषा। ५ समझो। ६ कमलकी तरह अलिप्त रहकर। ७ रहित। ८ कामदेवका जोर। ९ नाश करता है।

भानत मिथ्या-तिमिर, तिमिर जासम नहिं कोई।
कोई विकलप नाहिं, नाहिं दुविधा जस होई॥
होई अनंत सुख प्रगट जब, जब प्रानी निजपद गहत।
गहत न ममत लखि गेय सब, सब जग तजि सिवपुर लहत॥
जपत सुद्धपद एक, एक नहिं लखत जीव तन।
तनक परिग्रह नाहिं, नाहिं जहँ राग दोष मन॥
मन वच तन थिर भयौ, भयौ वैराग अखंडित।
खंडित आस्रव[1]द्वार, द्वार[2]संवर प्रभु मंडित॥
मंडित समाधिसुख सहित जब, जब कषाय अरिगन खपत।
खप तनममत्त निरमत्त नित, नित तिनके गुण भवि जपत॥

ज्ञाता साता कथन, सवैया (सुन्दरी)।

जिनके घटमैं प्रगट्यौ परमारथ,
रागविरोध हिये न विथारैं[3]।
करकैं अनुभौ निज आतमकौ,
विषया सुखसौं हित मूल निवारैं॥
हरिकैं ममता धरिकैं समता,
अपनौ बल फोरि जु कर्म विडारैं।
जिनकी यह है करतूति सुजान,
सुआप तिरैं पर जीवन तारैं॥ ९२॥

सवैया इकतीसा।

चेतनासहित जीव तिहुंकाल राजत है,
ग्यान दरसन भाव सदा जास लहिए।

---

१ आत्मामें कर्म आनेका रास्ता। २ आत्मामें नवीन कर्मका न आना। ३ विस्तरैं—फैलैं।

रूप रस गंध फास पुदगलकौ विलास,
मूरतीक रूपी विनासीक जड़ कहिए ॥
याही अनुसार परदर्वकौ ममत्त डारि,
अपनौ सुभाव धारि आपमाहिं रहिए ।
करिए यही इलाज जातैं होत आपकाज,
राग दोष मोह भावकौ समाज दहिए ॥ ९३ ॥
मिथ्याभाव मिथ्या लखौ ग्यानभाव ग्यान लखौ,
कामभोग भावनसौं काम जोरजारिकै ।
परकौ मिलाप तजौ आपनपौ आप भजौ,
पापपुन्य भेद छेद एकता विचारिकै ॥
आतम अकाज करै आतम सुकाज करै,
पावै भवपार मोख एतौ भेद धारिकै ।
यातै हूं कहत हेर चेतन चेतौ सबेर,
मेरे मीत हो निचीत एतौ काम सारिकै ॥ ९४ ॥

अडिल्ल ।

अहो जीव निरग्रंथ, होय विषयन तजौ ।
निरविकलप निरद्वंद, सुद्ध आतम भजौ ॥
तत्त्वनिमैं परधान, निरंजन सोइ है ।
अविनासी अविकार, लखैं सिव होइ है ॥ ९५ ॥

मंदाक्रान्ता ।

देखौ देखौ भविक अधुना[2], राजते नाभिनंदा ।
घोरं दुःखं भजत भजते, सेवते सौख्यकंदा ॥

...मूह । २ इस समय ।

जाकौ नामै जपत अमरा, होत ते मुक्तिराजा ।
एई, एई भवदधिविषैं, धर्मरूपी जिहाजा ॥ ९६ ॥

ज्ञाताका चिन्तवन ।

सिद्धौ सुद्धौ अमल अचलौ, निर्विकल्पौ अबंधौ ।
स्वच्छं भावं अजर अमरौ, निर्भयौ ज्ञानबंधौ ॥
वर्नातीतौ[1] रसविरहितौ, फासभिन्नं अगंधौ ।
सोहं सोहं निज निजविषै, पश्यतो[2] नैव अंधौ ॥ ९७ ॥
बुद्ध्यातीतौ अखल अतुलं, चेतनं निर्विकारौ ।
क्रोधं मानं रहित अछलं, लोभभिन्नं अपारौ ॥
रागं दोषं रहित अखयं, पर्म आनंदसिंधौ ।
सोहं सोहं निज निजविषै, पश्यतो नैव अंधौ ॥ ९८ ॥
अक्षातीतौ गुणगणनिलौ, निर्गदौ अप्रमादौ ।
लोकालोकं सकल लखितं, निर्ममत्तौ अनादौ ॥
सारं सारं अतनु अमनं, शब्दभिन्नं निरंधौ ।
सोहं सोहं निजनिजविषै, पश्यतो नैव अंधौ ॥ ९९ ।

षट्द्रव्यकथन—सवैया इकतीसा ।

जीव और पुद्गल धरम अधरम व्योम,
काल एई छहौं द्रव्य जगके निवासी हैं ।
एक एक दरवमैं अनंत अनंत गुण,
अनंत अनंत परजायके विकासी हैं ॥

---

१ वर्णरहित । २ देखता नहीं है ।

अनंत अनंत सक्ति अजर अमर सबै,
सदा असहाय निजसत्ताके विलासी हैं।
सर्व दर्व गेयरूप परभाव हेयरूप,
सुद्धभाव उपादेय यातैं अविनासी हैं ॥ १०० ॥

द्वादश अधिकार।

परिनामी दोय जीव पुद्गल प्रदेसी पांच,
कालविना करतार जीव भोगै फल है।
जीव एक चेतन अकास एक सर्वगत,
एक तीन धर्म और अधर्म भेद लहै ॥
मूरतीक एक पुदगल एकक्षेत्री व्योम,
नित्य चार जीव पुदगल विना सु लहै।
हेतु पंच जीवकौं है क्रिया जीव पुदगलमैं,
जुदे देस आनपच्छ भाषत विमल है ॥ १०१ ॥

नवतत्त्वस्वरूप वर्णन।

जीवतत्त्व चेतन अजीव पुग्गलादि पंच,
कर्मनके आवनकौं आस्रव वखानिए।
आतम करमके प्रदेस मिलैं वंध कह्यौ,
आस्रव निरोध ताहि संवर प्रमानिए ॥
कर्म उदै देय कछू खिरैं निर्जरा प्रसिद्ध,
सत्तातैं कर्मकौ विनास मोख मानिए।
एई सात तत्त्व यामैं पुन्य पाप और मिलैं,
एही हैं पदारथ नौ भव्य हिये आनिए ॥ १०२ ॥

बीस स्थानोंके नाम।

गुणथान चौदै जीव-थान चौदै पर्यापत,
षट प्राण दस संज्ञा गति चारि चार हैं।
इंद्री पांच काय षट जोगै पंद्रै वेद तीन,
हैं कषाय चारि ज्ञान आठ परकार हैं ॥
संजम हैं सात चारि दर्शन लेस्या हैं षट,
भव्य दोय जानि षट सम्यक विथार हैं।
सैनी दोय आहारक दोय उपयोग बारै,
बीसठान आतमाके भाखे गणधार हैं ॥ १०३ ॥

कुबुद्धि वचन (निन्दा स्तुति) करखा।

कहत है कुबुधि सुनि कंत मेरौ कह्यौ,
भूलि जिनं जाहु जिननाथ पासैं।
जाहुगे कहैंगे छांड़ि धन धाम तिय,
गहौ तप सहौ दुख भूख प्यासैं ॥

---

१ वादर एकेन्द्रिय सूक्ष्मएकेन्द्रिय द्वीन्द्रिय त्रीन्द्रिय चतुरिन्द्रिय असंज्ञी पंचेन्द्रिय संज्ञी पंचेन्द्रिय इनके, पर्य्याप्त और अपर्य्याप्त इसप्रकार १४ जीव समास हैं। २ आहार शरीर इन्द्रिय श्वासोछ्वास भाषा मन इसप्रकार छह पर्य्याप्ति होती हैं। ३ पांच इन्द्रिय मनोबल वचनबल कायबल श्वासोछ्वास और आयु इसप्रकार १० प्राण हैं। ४ आहार भय मैथुन परिग्रह ये चार संज्ञा हैं। ५ सत्य मनोयोग असत्य मनोयोग उभय मनोयोग अनुभय मनोयोग इसतरह चार वचन योग और औदारिक काययोग औदारिकमिश्र काययोग वैक्रियिक काययोग वैक्रियिक मिश्र काययोग आहारक काययोग आहारक मिश्रकाययोग कार्माण काययोग इसप्रकार १५ योग हैं। ६ अव्रत देशव्रत सामायिक छेदोपस्थापन परिहारविशुद्धि सूक्ष्मसांपराय यथाख्यात इसतरह सात संयम हैं। ७ मिथ्या सासादन मिश्र औपशमिक क्षायोपशमिक और क्षायिक ये ६ सम्यक्त्वके भेद ८ पति। ९ मत जाओ।

जहांकौ गयौ बाहुरौ कोई नहीं,
देत वह वास जगवासमासैं ।
खान नहिं पान नहिं टकटकापुरीसम,
मोहि तजि चलौ हौं कहौं कासैं॥ १०४ ॥

जिनस्तुति वर्णन—सवैया इकतीसा ।

स्याल ज्यौं जुरैं अनेक काम तौ सरै न एक,
सिंह होय एक तौ अनेक काज हुही है ।
तारे जो असंख्य मिलैं कहा अंधकार दावैं,
एक भानै—ज्योति दसौंदिसा जोति उही है ॥
पाथर अपार भरे दारद न कहूं टरे,
चिंतामनि एक मन चिंता जिन तुही है ।
तैसैं भगवान गुनखान करुनानिधान,
सब देव आनमैं प्रधान एक तुही है ॥ १०५ ॥

ज्ञाता तथा मूढदशा, छप्पय ।

मिथ्यादृष्टी जीव, आपकौं रागी मानै ।
मिथ्यादृष्टी जीव, आपकौं दोषी जानै ॥
मिथ्यादृष्टी जीव, आपकौं रोगी देखै ।
मिथ्यादृष्टी जीव, आपकौं भोगी पेखै ॥
जो मिथ्यादृष्टी जीव सो, सुद्धातम नाहीं लहै ।
सोई ज्ञाता जो आपकौं, जैसाका तैसा गहै॥ १०६

ज्ञानकथन, सवैया इकतीसा ।

चेतनके भाव दोय ग्यान औ अग्यान जोय,
एक निजभाव दूजौ परउतपात है ।

१ लौटकर आया । २ सूर्य्यका प्रकाश ।

तातैं एक भाव गहौ दूजौ भाव मूल दहौ,
जातैं सिवपद लहौ यही ठीक बात है ॥
भावकौं दुखायौ जीव भावहीसौं सुखी होय,
भावहीकौं फेरि फेरै मोखपुर जात है ।
यह तौ नीकौ प्रसंग लोक कहैं सरवंग,
आगहीकौ दाधौ अंग आग ही सिरात है ॥

ज्ञाता आलोचना कथन ।

आत्मा सचेतन है पुग्गल अचेतन है,
जीव अविनैस्वर सरीर छबि छारसी ।
यह तौ प्रगट भेद आलसी न जानै क्यौं हू,
जानै उद्यमीक सो तौ मोखकौं विहारसी ॥
घटमैं दयाविसेख देख और जीवनकौं,
आतमगवेषी बुध झूर मन नारसी ।
जहां देखौ ग्याताजन तहां तौ अचंभौ नाहिं,
आरसीके देखैं उर लागत है आरसी ॥ १०८ ॥

मूढ़कथन ।

ग्यानके लखनहारे विरले जगतमाहिं,
ग्यानके लखनहारे जगमैं अनेक हैं ।
भाखैं निरपेक्षवैन सज्जन पुरुष केई,
दीखत वहुत जिन्हैं वचनकी टेक हैं ॥
चूक परैं रिसखात ऐसे वहु जीव भ्रात,
औसर अचूक थोरे धरैं जे विवेक हैं ।

१ जला हुआ । २ जिसका कभी निरन्वय (सर्वथा) नाश न होवे

ग्याता जन थोरे मूढ़मती बहुतेरे नर,
जानै नाहिं ग्यान सैर कूपकैसे भेक हैं ॥ १०९ ॥

हितोपदेश वर्णन, मत्तगयन्द ।

ज्ञान सोई जु करै हितकारज,
ध्यान सोई मनकौं वसि आनै ।
बुद्ध सोई जु लखै परमारथ,
मीत सोई दुविधा नहिं ठानै ॥
भूप सोई उर नीत विचारत,
नारि सोई भरता सनमानै ।
द्यानत सो न गहै परकौ धन,
पीर सोई परपीरकौं जानै ॥ ११० ॥

छन्दशास्त्रके आठगणोंके नाम, स्वरूप, स्वामी, फल, कवित्त ३१ मात्रा ।

यगन आदिलघु, उदक, देत सुत,
भगन आदि गुरु, ससि, जस देह ।
रगण मध्य लघु, अगनि, मृत्यु फल,
जगन मध्य गुरु, रवि, गदगेह ॥
तगन अंतलघु, व्योम, अफल है,
सगन अंतगुरु, पवन, भजेह ।
नगन त्रिलघु, सुर, आयु प्रदाता,
मगन त्रिगुरू भू, लच्छि भरेह ॥ १११ ॥

१ तालाव । २ मैंडक । ३ पंडित । ४ मित्र । ५ दयानतदार अर्थात् ईमानदार और ग्रन्थकर्त्ताका नाम । ६ पराया कष्ट । ७ यगणके आदिमें लघु होता है, शेष दो वर्ण गुरु होते हैं । ८ यगणका देव जल है । ९ यगण पुत्रका दाता है । १० रोगोंका घर ।

अंतर्लापिका, छप्पय ।

कौनै धर्म है सार, आन-मत भजै कि नाहीं ।
किहि त्यागैं है सुजस, भरत हारे किहि ठाहीं ॥
किहि थिर कीनैं ध्यान, कौन वंदैं अघ नासै ।
लोभवंत धन देह, श्रवणतैं कहा अभ्यासै ॥
बहु पाप कौनतैं बुद्धि सठ,
दया कौनकी धरहि मन ।
मुनिराज कहा कहि भव्य प्रति,
जैनधरम मुन सुमन जन ॥ ११२ ॥

शार्दूलविक्रीडित ।

चैतन्यं अमलं अनादि अचलं, आनंद भावं मयं ।
त्रैलोक्ये अखयं अखंडित सदा, सारं सुजानं स्वयं ॥
राग द्वेष त्रिकर्म सर्व रहितं, स्वच्छं स्वभावं जुतं ।
सोहं सिद्ध विशुद्ध एक परमं, ज्ञानं उपाधिच्युतं ॥११३॥

जीवके नव दृष्टान्त, सवैया इकतीसा ।

जैसौ रैनिदीपक अरुन परकास वन्यौ,
तैसौ परकास सुद्ध जीवकौ वखान्यौ है ।
दधिमाहिं घीव खीरमाहिं नीर पाहनमैं,
धात जैसैं तैसैं जीव पुद्गलमैं जान्यौ है ॥

१ इस छप्पयमें किये हुए सब प्रश्नोंके उत्तर **जैन धरम मुन** [सुमन] **जन** इस पदमें निकलते हैं । इस पदके प्रत्येक अक्षरके साथ अन्तके [अक्षर] मिलानेसे क्रमसे १२ प्रश्नोंके इस प्रकार १२ उत्तर होते हैं—१ जैन, [२ ...] ३ धन, ४ रन, ५ मन, ६ मुन(नि), ७ न न, ८ सुन, ९ मन, १० [...] जन, १२ जैन धरम मुन सुमन जन ।

जैसैं हेमरूपो और फटिक जु निर्मल है,
तैसैं जीव निर्मल सुदिष्टिसौं पिछान्यौ है ।
नव दृष्टान्त करिकै जीवकौ सरूप जान्यौ,
परभाव भान्यौ सुद्ध भाव मन आन्यौ है ॥११४॥

हर्ष-शोकजय मंत्र ।

केई केई वार जीव भूपति प्रचंड भयौ,
केई केई वार जीव कीटरूप धर्‌यौ है ।
केई केई वार जीव नौग्रीवक जाय वर्‌यौ,
केई वार सातमैं नरक अवतर्‌यौ है ॥
केई केई वार जीव राघौ मच्छ होइ चुक्यौ,
केई वार साधारन तुच्छ काय वर्‌यौ है ।
सुख और दुःख दोऊ पावत है जीव सदा,
यह जान ग्यानवान हर्ष सोक हर्‌यौ है ॥ ११५ ॥

ज्ञानीमहिमा, कुंडलिया ।

समदिष्टी निजरूपकौं, ध्यावत है निजमाहिं ।
कर्मसत्रु छय करत हैं, जाकै ममता नाहिं ॥
जाकै ममता नाहिं, आप परभेद विचारै ।
छहौं द्रव्यतैं भिन्न, सुद्ध निजआतम धारै ॥
करै न राग विरोध, मिलै जो इष्ट अनिष्टी ।
सो सिवपदवी लहै, वहै जो है समदिष्टी ॥ ११६ ॥

उपसंहार ।

बार बार कहैं पुनरुक्त दोष लागत है,
जागत न जीव तूतौ सोयौ मोह झगमैं ।

आतमासेती विमुख गहै राग दोषरूप,
पंचइंद्रीविषैसुखलीन पगपगमैं ॥
पावत अनेक कष्ट होत नाहिं अष्ट नष्ट,
महापद भिष्ट भयौ भमै सिष्टमगमैं ।
जागि जगवासी तू उदासी व्हैकै विषयसौं,
लागि सुद्ध अनुभौ ज्यौं आवै नाहिं जगमैं ॥११७॥

ग्रन्थमहिमा ।

जो इसकौं सुनै तिसै काननकौं हितकारी,
जो इसकौं सुनै तिसै मंगलकौ मूल है ।
जो इसकौं पढ़ै ताहि ज्ञान तौ विशेष बढ़ै,
यादि करै सो तौ पावै भव दधिकौ कूल[1] है ॥
सकल ग्रंथनिमैं सार सार निज आतमा है,
सुध उपयोगमई ताकौ जो न भूल है ।
सोई साध सोई संत सोई सब गुनवंत,
लहै जु अनंत सुख नासै कर्म धूल है ॥ ११८ ॥

कविलघुता ।

पिंगल न पढ़्यौ नहीं देखी नाममाला कोऊ,
व्याकरण काव्य आदि एक नाहिं पढ़्यौ है ।
आगमकी छाया लैकैं अपनी सकति सार,
सैलीके प्रभावसेती स्वर कोट(?) गढ़्यौ है ॥
अच्छर अरथ छंद जहां जहां भंग होय,
तहां तहां लीजै सोध ग्यान जिन्हैं बढ़्यौ है ।
वीतराग थुति कीजै साधरमी संग लीजै,
आगम सुनीजै पीजै ग्यानरस कढ़्यौ है ॥११

1 किनारा ।

सत्रैसौ ठावन मगसिरवदी छटि वढ़ी,
आगरेमैं सैली सुखी निजमनधनसौं।
मानसिंहसाह औ विहारीदास ताकौ शिष्य,
द्यानत विनती यह कहै सब जनसौं ॥
जिहिविधि जानौ निजआतम प्रगट होइ,
वीतरागधर्म बढ़ै सोई करौ तनसौं।
दुखित अनादिकाल चेतन सुखित करौ,
पावै सिवसुखसिंधु छूटै दुःख बनसौं ॥ १२० ॥
बानी तौ अपार है कहांलग बखान करौं,
गणधर इंद्र आदि पार नहीं पायौ है।
तुच्छमती जीव ताकी कौन बात पूछत है,
जे तौ कछू कहै ते तौ तहां ही समायौ है।
अच्छर अरथ बानी तीनौ तौ अनादि मानी,
करै कहै कौन मूढ़ कहत मैं गायौ है।
याही ममतासौं चिरकाल जगजाल रुलै,
ग्यानी सब्दजाल भिन्न आपरूप पायौ है ॥ १२१ ॥

इति उपदेशशतक।

अथ सुबोध पंचासिका।

सोरठा।

ओंकार मझार, पंचपरमपद वसत हैं।
तीन भवनमैं सार, वंदौं मनवचकायसौं ॥ १ ॥
अच्छरज्ञान न मोहि, छंदभेद समझौं नहीं।
बुधि थोरी किम होय, भाषा अच्छर-बावनी ॥ २ ॥
आतम कठिन उपाय, पायौ नरभौ क्यौं तजै।
राई उदधि समाय, ढूंढ़ी फिर नहिं पाइए ॥ ३ ॥
इहविधि नरभौ कोइ, पाय विषैरससौं रमै।
सो सठ अंमृत खोय, हालाहल विष आचरै ॥ ४ ॥
ईसुर भाख्यौ एह, नरभव मति खोवै वृथा।
फिर न मिलै यह देह, पछितावौ बहु होइगौ ॥ ५ ॥
उत्तम नर अवतार, पायौ दुखकरि जगतमैं।
यह जिय सोच विचार, कछु तोसा सँग लीजिए ॥ ६ ॥
ऊरधगतिकौ बीज, धर्म न जो नर आदरै।
मानुष जौनि लही जु, कूप परै नर दीप लै ॥ ७ ॥
रिस तजिकै सुन बैन, सार मनुष सब जोनिमैं।
ज्यौं मुख ऊपर नैन, भान दिपै आकासमैं ॥ ८ ॥

छन्द चाल।

रीझ रे नर नरभौ पाया, कुल गोत विमल तू आया।
जो जैनधरम नहिं धारा, सब लाभ विषै सँग हारा ॥ ९ ॥
लिखि बात हिये यह लीजै, जिनकथित धर्म नित कीजै।
भवदुखसागरकौं तरिए, सुखसौं नौका जो वरियै ॥ १० ॥

लीन विषैं डंक अहि भरिया, भ्रममोहतैं मोहित परिया ।
विधिना जब दइ है घुमरिया, तब नरकभूमि तू परिया॥११॥
ए नर करि धर्म अगाऊ, जब लौं धनजोबन चाऊ ।
जब लौं नहिं रोग सतावै, तुहि काल न आवन पावै ॥१२॥
ऐन हैं तुव आसन नैना, जब लौं तुव प्रकृति फिरै ना ।
जब लौं तुव बुद्धि सवाई, करि धर्म अगाऊ भाई ॥ १३ ॥
ओस जल ज्यों जोबन जै है, करि धर्म जरा फिरि ऐहै ।
ज्यों बूढ़ा बैल थकै है, कछु कारज करि न सकै है ॥१४॥
औ खिन संयोग वियोगा, खिन जीवन खिन मृत रोगा॥
खिनमैं धन जोबन जावै, किहिविधि जगमैं सुख पावै १५
अंबर धन जीतव गेहा, गर्जकरन चपल धन एहा ॥
तन दरपन छाया जानौ, यह बात सदा उर आनौ ॥१६॥

ढाल परमादीकी ।

अः जम ले नित आव, क्यौं नहिं धर्म सुनीजै ।
नैन तिमिर नित हीन, आसन जोवन छीजै ॥ १७ ॥
कमला चलै न पैंड़, मुख ढांकै परिवारा ।
देह थकै बहु पोपि, क्यौं न लखै संसारा ॥ १८ ॥
खन नहिं छोड़ै काल, जो पाताल सिधारै ।
बसै उदधिके बीच, जो कहुं दूर पधारै ॥ १९ ॥
गन सुर राखैं तोहि, राखै उदधि मथैया ।
तबहु न छोड़ै काल, दीप पतंग परैया ॥ २० ॥
घर गो सौना दान, मणि औपध सब यौं ही ।
मंत्र यंत्र करि तंत्र, काल मिटै नहिं क्यौं ही ॥ २१ ॥

१ हाथीके कानके सदृश धन चंचल है ।

नरकतने दुख भूरि, जो तू जीव सम्हारै ।
तौ न रुचै आहार, अब सब परिग्रह डारै ॥ २२ ॥
चेतन गरभ मँझार, नरक अधिक दुख पायौ ।
बालपनेको खेद, सब जग परगट गायौ ॥ २३ ॥
छिनमैं धनकौ सोक, छिनमैं विरह सतावै ।
छिनमैं इष्टवियोग, तरुन कवन सुख पावै ॥ २४ ॥

ढाल दोहरेकी ।

मन भाई रे, चेत मन भाई रे ॥ टेक ॥
जरापनै दुख जे सहे, सुन भाई रे,
सो क्यौं भूलैं तोहि, चेत मन भाई रे ॥
जो तू विषयनमैं लग्यौ, मन भाई रे,
आतमहित नहिं होइ, चेत मन भाई रे ॥ २५ ॥
झूठ पाप करि ऊपज्यौं, मन भाई रे,
गरभ वस्यौ बस पाप, चेत मन भाई रे ।
सात धात लहि पापतैं, मन भाई रे,
अजहु पापरत आप, चेत मन भाई रे ॥ २६ ॥
नहीं जरा गद आइ है, मन भाई रे,
कहां गयौ जम जच्छ, चेत मन भाई रे ।
जो निचिंत तू ह्वै रह्यौ, मन भाई रे,
ए सब हैं परतच्छ, चेत मन भाई रे ॥ २७ ॥
टुक सुखकौं भवदधि पर्‌यौ, मन भाई रे,
पाप लहर दुख देत, चेत मन भाई रे ।
पकरौ धर्म जिहाजकौं, मन भाई रे,
सुखसौं पार करेत, चेत मन भाई रे ॥ २८ ॥

ठीक रहै धन सासतौ, मन भाई रे,
होइ न रोग न काल, चेत मन भाई रे ।
तबहू धर्म न छाँड़िये, मन भाई रे,
कोटि कटैं अघजाल, चेत मन भाई रे ॥ २९ ॥
डरपत जो परलोकतैं, मन भाई रे,
चाहत सिवसुख सार, चेत मन भाई रे ।
क्रोध मोह विषयनि तजौ, मन भाई रे,
धर्मकथित जिन धार, चेत मन भाई रे ॥ ३० ॥
ढील न करि आरँभ तजौ, मन भाई रे,
आरंभमैं जियघात, चेत मन भाई रे ।
जीवघाततैं अघ बढ़ै, मन भाई रे,
अघतैं नरकनिपात, चेत मन भाई रे ॥ ३१ ॥
नरक आदि तिहु लोकमैं, मन भाई रे,
इह परभव दुखरास, चेत मन भाई रे ।
सो सब पूरब पापतैं, मन भाई रे,
जीव सहै बहु त्रास, चेत मन भाई रे ॥ ३२ ॥

ढाल, वीरजिनिंदकी ।

तिहु जगमैं सुर आदि दै जी, जो सुख दुलभ सार ।
सुंदरता मनभावनी जी, सो दै धर्म अपार ॥
रे भाई, अब तू धर्म सँभार, यह संसार असार, रे भा० ३३
थिरता जस सुख धर्मतैं जी, पावै रतन भँडार ।
धर्मविना प्रानी लहै जी, दुख नाना परकार ॥रे भा० ३४
दान धर्मतैं सुर लहै जी, नरक होत करि पाप ।
इहविध जानैं क्यों पड़ै जी, नरकविषै तू आप॥रे भा०३५

धर्म करत सोभा लहै जी, जय धनरथ गज वाजें ।
प्रासुकदान प्रभावसौं जी, घर आवैं मुनिराज॥रे भा० ३६
नवल सुभग मनमोहना जी, पूजनीक जगमाहिं ।
रूप मधुर वच धरमतैं जी, दुख कोउ व्यापै नाहिं॥रे भा०३७
परमारथ यह वात है जी, मुनिकौं समता सार ।
विनै मूल विद्यातनी जी, धर्म दया सिरदार ॥ रे भा०३८
फिर सुन करुना धर्मसौं जी, गुरु कहियै निरग्रंथ ।
देव अठारह दोष विन जी, यह सरधा सिवपंथ॥रे भा०३९
विन धन घर सोभा नहीं जी, दान विना घर जेह ।
जैसैं विषई तापसी जी, धर्म दयाविन तेह ॥ रे भा०४०

दोहा ।

भौंदू[1] धनहित अघ करै, अघसौं धन नहिं होय ।
धरम करत धन पाइयै, मन मानै कर सोय ॥ ४१ ॥
मति जिय सोचै किंच तू, होनहार सो होय ।
जे अच्छर विधिना लिखे, ताहि न मेटै कोय ॥ ४२ ॥
यह वह वातैं वहु करौ, पैठौ सागरमाहिं ।
सिखर चढ़ौ वस लोभके, अधिकौ पावौ नाहिं ॥ ४३ ॥
रैनि दिना चिंता चिंता,–माहिं जलै मति जीव ।
जो दीया सो पाय है, और न होय सदीव ॥ ४४ ॥
लागि धरम जिन पूजियै, साँच कहै सब कोय ।
चित प्रभुचरन लगाइयै, तब मनवांछित होय ॥ ४५ ॥
वह गुरु हो मम संजमी, देव जैन हो सार ।
साधरमी संगति मिलौ, जब लौं भव अवतार ॥ ४६ ॥

---

[1] मोंदा ।

शिवमारग जिन भासियौ, किंचित जानै कोइ।
अंत समाधिमरण करै, चहुँ गति दुख छय होइ ॥ ४७ ॥
षट् द्वै गुण सम्यक गहै, जिनवानी रुचि जास।
सो धनसौं धनवान है, जगमैं जीवन तास ॥ ४८ ॥
सरधा हिरदै जो करै, पढ़ै सुनै दे कान।
पाप करम सब नासिकै, पावै पद निरवान ॥ ४९ ॥
हितसौं अरथ बताइयौ, सुगुरु बिहारीदास।
सत्रह सौ बावन बदी, तेरस कातिकमास ॥ ५० ॥
ग्यानवान जैनी सबै, बसैं आगरेमाहिं।
अंतरग्यानी बहु मिलैं, मूरख कोऊ नाहिं ॥ ५१ ॥
छय उपशम बल, मैं कहे, द्यानत अच्छर एहु।
दोष सुबोधपचासिका, बुधजन सुद्ध करेहु ॥ ५२ ॥

इति सुबोधपंचासिका।

१ निःशांकित, निःकांक्षित, निर्विचिकित्सित, अमूढदृष्टि, उपगूहन, स्थिति-करण, वात्सल्य, प्रभावना, ये षट्द्वै अर्थात् आठ सम्यग्दर्शनके अंग हैं।

धर्मपचीसी।

दोहा।

भव्य-कमल-रवि सिद्ध जिन, धर्मधुरंधर धीर।
नमत संत जग-तम-हरन, नमौं त्रिविध गुरु वीर ॥ १ ॥

चौपाई (१५ मात्रा।)

मिथ्याविषयनिमैं रत जीव, तातैं जगमैं भमै सदीव।
विविध प्रकार गहै परजाय, श्रीजिनधर्म न नेक सुहाय २
धर्मविना चहुं गतिमैं परै, चौरासी लख फिरि फिरि धरै।
दुखदावानलमाहिं तपंत, कर्म करै फल भोग लहंत ॥ ३ ॥
अति दुर्लभ मानुष परजाय, उत्तम कुल धन रोग न काय।
इस औसरमैं धर्म न करै, फिर यह औसर कबधौं बरै ॥४॥
नरकी देह पाय रे जीव, धर्म बिना पशु जान सदीव।
अर्थकाममैं धर्म प्रधान, ताबिन अर्थ न काम न मान॥५॥
प्रथम धर्म जो करै पुनीत, सुभसंगम आवै करि प्रीत।
विघन हरै सब कारज सरै, धनसौं चारयौं कौनैं भरै ॥६॥
जनम जरा मृतुके बस होय, तिहूंकाल जग डोलै सोय।
श्रीजिनधर्म रसायन पान, कबहुं न रुचि उपजै अग्यान ७
ज्यौं कोई मूरख नर होय, हालाहल गहि अंमृत खोय।
त्यौं सठ धर्म पदारथ त्याग, विषयनिसौं ठानै अनुराग॥८॥
मिथ्याग्रह-गहिया जो जीव, छांड़ि धरम विषयनि चित दीव।
यौं पसु कल्पवृक्षकौं तोड़ि, वृक्ष धतूरेके बहु जोड़ि ॥ ९ ॥
नरदेही जानौ परधान, विसरि विषै करि धर्म सुजान।
त्रिभुवन इंद्रतने सुख भोग, पूजनीक हो इंद्रन जोग॥१०॥

चंद विना निसि गज विन दंत, जैसे तरुण नारि विन कंत।
धर्म विना त्यौं मानुष देह, तातैं करियै धर्म सनेह ॥ ११ ॥
हय गय रथ वहु पायक भोग, सुभट वहुत दल चमर मनोग॥
ध्वजा आदि राजा विन जानि, धर्म विना त्यौं नरभौ मानि १२
जैसें गंध विना है फूल, नीर विहीन सरोवर धूल।
ज्यौं धन विन सोभित नहिं भौन, धर्म विना त्यौं नर चिंतौन॥
अरचै सदा देव अरहंत, चरचै गुरुपद करुनावंत।
खरचै दाम, धर्मसौं प्रेम, न रचै विषै सफल नर एम ॥१४॥
कमला चपल रहै थिर नाहि, जोवन कांति जरा लपटाहि।
सुत मित नारि नावसंजोग, यह संसार सुपनका लोग ॥ १५ ॥
यह लखि चित धरि सुद्ध सुभाव, कीजै श्रीजिनधर्म उपाव।
यथा भाव जैसी मति गहै, तैसी गति तैसा सुख लहै ॥१६॥
जो मूरख धिषनाकरि हीन, विषै-ग्रंथ-रत व्रत नहिं कीन।
श्रीजिनभाषित धर्म न गहै, सो निगोदकौ मारग लहै ॥१७॥
आलस मंदवुद्धि है जास, कपटी विषैमगन सठ तास।
कायरता मद परगुण ढकै, सो तिरजंच जोनि लहि सकै १८
आरत रौद्र ध्यान नित करै, क्रोध आदि मच्छरता धरै।
हिंसक वैरभाव अनुसरै, सो पापिष्ट नरकगति परै ॥ १९ ॥
कपटहीन करुणाचितमाहिं, हेय उपादे भूलै नाहिं।
भक्तिवंत गुणवंत जु कोय, सरलभाषि सो मानुष होय॥२०॥
श्रीजिनवचनमगन तपवान, जिन पूजै दे पात्रहिं दान ॥
रहै निरंतर विषय उदास, सोई लहै सुरग आवास ॥२१॥

१ हिताहित बुद्धिसे। २ परिग्रहमें।

मानुषजोनि अंतकी पाय, सुनि जिनवचन विषै विसराय।
गहै महाव्रत दुद्धर वीर, सुकलध्यान थिर लहि सिव धीर२२
धरम करत सुख होय अपार, पाप करत दुख विविधप्रकार।
वाल गुपाल कहैं सव नारि, इष्ट होय सोई अवधारि ॥२३॥
श्रीजिनधर्म मुकतिदातार, हिंसाधरम करत संसार।
यह उपदेश जानि वड़भाग, एक धर्मसौं करि अनुराग २४
व्रत संयम जिनपद थुति सार, निर्मल सम्यक भावन वार।
अंत कषाय विषय कृश करौ, ज्यौं तुम मुकतिकामिनी वरौ २५

दोहा।

वुधकुमुदनि ससि सुख करन, भवदुख सागर जांन।
कहै ब्रह्म जिनदास यह, ग्रंथ धर्मकी खान ॥ २६ ॥
द्यानत जे वाँचैं सुनैं, मनमैं करैं उछाह।
ते पावैं फल सासतौ, मनवांछित फल-लाह ॥ २७ ॥

इति धर्मपच्चीसी।

१ यान-जहाज

तत्त्वसार भाषा ।

दोहा ।

आदिसुखी अंतःसुखी, सिद्ध सिद्ध भगवान ।
निज प्रताप परताप विन, जगदर्पन जग आन ॥ १ ॥
ध्यान दहन विधि-काठ दहि, अमल सुद्ध लहि भाव ।
परम जोतिपद वंदिकै, कहूं तत्त्वकौ राव ॥ २ ॥

चौपाई ।

तत्त्व कहे नाना परकार, आचारज इस लोकमँझार ।
भविक जीव प्रतिवोधन काज, धर्मप्रवर्तन श्रीजिनराज ॥३
आतमतत्त्व कह्यौ गणधार, स्वपरभेदतैं दोइ प्रकार ।
अपनौ जीव सुतत्त्व वखानि, पर अरहंत आदि जिय जानि
अरहंतादिक अच्छर जेह, अरथ सहित ध्यावै धरि नेह ।
विविध प्रकार पुन्य उपजाय, परंपराय होय सिवराय ॥ ५
आतमतत्त्वतने द्वै भेद, निरविकलप सविकलप निवेद ।
निरविकलप संवरकौ मूल, विकलप आस्रव यह जिय भूल ६
जहां न व्यापै विषय विकार, ह्वै मन अचल चपलता डार ।
सो अविकल्प कहावै तत्त, सोई आपरूप है सत्त ॥ ७ ॥
मन थिर होत विकल्पसमूह, नास होत न रहै कछु रूह ।
सुद्ध सुभावविषै ह्वै लीन, सो अविकल्प अचल परवीन ॥८
सुद्धभाव आतम दृग ग्यान, चारित सुद्ध चेतनावान ।
इन्हैं आदि एकारथ वाच, इनमैं मगन होइकै राच ॥ ९ ॥
परिग्रह त्याग होय निरग्रंथ, भजि अविकल्प तत्त्व सिवपंथ।
सार यही है और न कोय, जानै सुद्ध सुद्ध सो होय ॥१०

अंतर वाहिर परिग्रह जेह, मनवच तनसौं छांडै नेह ।
सुद्धभाव धारक जव होय, यथा ग्यान मुनिपद है सोय ११
जीवन मरन लाभ अरु हान, सुखद मित्र रिपु गनै समान।
राग न रोष करै परकाज, ध्यान जोग सोई मुनिराज॥१२॥
काललब्धिवल सम्यक वरै, नूतन वंध न कारज करै ।
पूरव उदै देह खिरि जाहि, जीवन मुकत भविक जगमाहि ॥
जैसै चरनरहित नर पंग, चढ़न सकत गिरि मेरु उतंग ।
त्यौं विन साध ध्यान अभ्यास, चाहै करौ करमकौ नास१४
संकितचित्त सुमारग नाहिं, विषैलीन वांछा उरमाहिं ।
ऐसैं आप्त कहैं निरवान, पंचमकाल विषै नहिं जान ॥१५॥
आतमग्यान [1]दृग चारितवान, आतम ध्याय लहै सुरथान ।
मनुज होय पावै निरवान, तातैं यहां मुकति मग जान १६
यह उपदेस जानि रे जीव, करि इतनौ अभ्यास सदीव ।
रागादिक तजि आतम ध्याय, अटल होय सुख दुख मिटि जाय ॥ १७ ॥
आप प्रमान प्रकास प्रमान, लोक प्रमान, सरीर समान ।
दरसन ग्यानवान परधान, परतैं आन आतमा जान १८
राग विरोध मोह तजि वीर, तजि विकलप मन वचन सरीर।
ह्वै निचिंत चिंता सब हारि, सुद्ध निरंजन आप निहारि॥१९
क्रोध मान माया नहिं लोभ, लेस्या सल्य जहां नहिं सोभ।
जन्म जरा मृतुकौ नहिं लेस, सो मैं सुद्ध निरंजन भेस २०
वंध उदै हिय लवधि न कोय, जीवथान संठान न होय ।
चौदह मारगना गुनथान, काल न कोय चेतना ठान २१

१ सम्यग्दर्शन ।

फरस वरन रस सुर नहि गंध, वरग[1] वरगना[2] जास न खंध[3]।
नहिं पुदगल नहिं जीवविभाव, सो मैं सुद्ध निरंजन राव॥२२॥
विविध भांति पुदगल परजाय, देह आदि भाषी जिनराय।
चेतनकी कहियै व्योहार, निहचैं भिन्न भिन्न निरधार॥२३॥
जैसैं एकमेक जल खीर, तैसैं आनौ जीव सरीर।
मिलैं एक पै जुदे त्रिकाल, तजै न कोऊ अपनी चाल॥२४॥
नीर खीरसौं न्यारौ होय, छांछिमाहिं डारै जो कोय।
त्यौं ग्यानी अनुभौ अनुसरै, चेतन जड़सौं न्यारौ करै॥२५॥

दोहा।

चेतन जड़ न्यारौ करै, सम्यकदृष्टी भूप।
जड़ तजिकैं चेतन गहै, परमहंसचिद्रूप॥ २६ ॥
ज्ञानवान अमलान प्रभु, जो सिवखेतमँझार।
सो आतम मम घट वसै, निहचै फेर न सार॥ २७ ॥
सिद्ध सुद्ध नित एक मैं, ग्यान आदि गुणखान।
अगन प्रदेस अमूरती, तन प्रमान तन आन॥ २८ ॥
सिद्ध सुद्ध नित एक मैं, निरालंब भगवान।
करमरहित आनंदमय, अँभै[4] अँखै[5] जग जान॥ २९ ॥
मनथिर होत विषै घटै, आतमतत्त्व अनूप।
ज्ञान ध्यान वल साधिकैं, प्रगटै ब्रह्मसरूप॥ ३० ॥
अँवर[6] घन फट प्रगट रवि, भूपर करै उदोत।
विषय कषाय घटावतैं, जिय प्रकास जग होत॥ ३१ ॥

१ समान अविभाग प्रतिच्छेदोंके धारक प्रत्येक कर्मपरमाणुको वर्ग कहते हैं। २ वर्गके समूहको वर्गणा कहते हैं। ३ स्कन्ध। ४ निर्भय। ५ अक्षय। ६ आकाशमें।

मन वच काय विकार तजि, निरविकलपता धार।
प्रगट होय निज आतमा, परमातमपद सार॥ ३२ ॥
मौनगहित आसन सहित, चित्त चलाचल खोय।
पूरव सत्तामैं गलैं, नये रुकैं सिव होय॥ ३३ ॥
भव्य करैं चिरकाल तप, लहैं न सिव विन ध्यान।
ध्यानवान ततकाल ही, पावैं पद निरवान॥ ३४ ॥
देह आदि परद्रव्यमैं, ममता करै गँवार।
भयौ परसमैं लीन सो, बाँधै कर्म अपार॥ ३५ ॥
इंद्रीविषै मगन रहै, राग दोष घटमाहिं।
क्रोध मान कलुषित कुधी, ग्यानी ऐसौ नाहिं॥ ३६ ॥
देखै सो चेतन नहीं, चेतन देखौ नाहिं।
राग दोष किहिसौं करौं, हौं मैं समतामाहिं॥ ३७ ॥
थावर जंगम मित्र रिपु, देखै आप समान।
राग विरोध करै नहीं, सोई समतावान॥ ३८ ॥
सव असंखपरदेसजुत, जनमै मरै न कोय।
गुणअनंत चेतनमई, दिव्यदिष्टि धरि जोय॥ ३९ ॥
निहचै रूप अभेद है, भेदरूप व्योहार।
स्यादवाद मानै सदा, तजि रागादि विकार॥ ४० ॥
राग दोष कल्लोलविन, जो मन जल थिर होय।
सो देखै निजरूपकौं, और न देखै कोय॥ ४१ ॥
अमल सुथिर सरवर भयैं, दीसै रतनभँडार।
त्यौं मन निरमल थिरविषैं, दीसै चेतन सार॥ ४२ ॥
देखैं विमलसरूपकौं, इंद्रियविषै विसार।
होय मुकति छिन आधमैं, तजि नरभौ अवतार॥४३॥

ग्यानरूप निज आतमा, जड़सरूप पर[1] मान।
जड़तजि चेतन ध्याइये, सुद्धभाव सुखदान ॥ ४४ ॥
निरमल रत्नत्रय धरैं, सहित भाव वैराग।
चेतन लखि अनुभौ करैं, वीतरागपद जाग ॥ ४५ ॥
देखै जानै अनुसरै, आपविषैं जब आप।
निरमल रत्नत्रय तहां, जहां न पुन्य न पाप ॥ ४६ ॥
थिर समाधि वैरागजुत, होय न ध्यावै आप।
भागहीन कैसें करै, रतन विसुद्ध मिलाप ॥ ४७ ॥
विषयसुखनमैं मगन जो, लहै न सुद्ध विचार।
ध्यानवान विषयनि तजै, लहै तत्त्व अविकार ॥ ४८ ॥
अथिर अचेतन जड़मई, देह महादुखदान।
जो यासौं ममता करै, सो वहिरातम जान ॥ ४९ ॥
सरै परै आमय[2] धरै, जरै मरै तन एह।
हरि ममता समता करै, सो न वरै पन-देह ॥ ५० ॥
पापउदैकौं साधि, तप, करै विविध परकार।
सो आवै जो सहज ही, बड़ौ लाभ है सार ॥ ५१ ॥
करमउदय फल भोगतैं, करै न राग विरोध।
सो नासै पूरव करम, आगैं करै निरोध[3] ॥ ५२ ॥

चौपाई (१५ मात्रा)

कर्मउदै सुख दुख संजोग, भोगत करैं सुभासुभ लोग।
तातैं बांधैं करम अपार, ग्यानावरनादिक अनिवार॥ ५३ ॥
जवलौं परमानूसम राग, तवलौं करम सकैं नाहिं त्याग।
परमारथ ग्यायक मुनि सोय, रागतजैं विनु काज न होय ५४

१ पर अर्थात् शरीरादि पुद्गल। २ रोग। ३ संवर।

सुख दुख सहै करम बस साध, करै न रागविरोध उपाध।
ग्यानध्यानमैं थिर तपवंत, सो मुनि करै कर्मकौ अंत ॥ ५५
गहै नहीं पर तजै न आप, करै निरंतर आतमजाप।
ताकैं संवर निर्जर होय, आस्रव वंध विनासै सोय ॥ ५६ ॥
तजि परभाव चित्त थिर कीन, आप-स्वभावविषैं ह्वै लीन।
सोई ग्यानवान दृगवान, सोई चारितवान प्रधान ॥ ५७ ॥
आतमचारित दरसन ग्यान, सुद्धचेतना विमल सुजान।
कथन भेद है वस्तु अभेद, सुखी अभेद भेदमैं खेद ॥ ५८ ॥
जो मुनि थिर करि मनवचकाय, त्यागै राग दोष समुदाय।
धरै ध्यान निज सुद्धसरूप, बिलसै परमानंद अनूप ॥५९॥
जिह जोगी मन थिर नाहिं कीन, जाकी सकति करम आधीन।
करइ कहा न फुरै वल तास, लहै न चेतन सुखकी रास ॥६०
जोग दियौ मुनि मनवचकाय, मन किंचित चलि वाहिर जाय।
परमानंद परम सुखकंद, प्रगट न होय घटामैं[1] चंद ॥ ६१ ॥
सव संकल्प विकल्प विहंड, प्रगटै आतमजोति अखंड।
अविनासी सिवकौ अंकूर, सो लखि साध करमदल चूर॥६२
विषय कषाय भाव करि नास, सुद्धसुभाव देखि जिनपास।
ताहि जानि परसौं[2] तजि काज, तहां लीन हूजै मुनिराज ॥६३
विषय भोगसेती उचटाइ, शुद्धतत्त्वमैं चित्त लगाइ।
होय निरास आस सव हरै, एक ध्यानअसिसौं[3] मन मरै ॥६४
मरै न मन जो जीवै मोह, मोह मरै मन जनम न होय।
ज्ञानदर्शआवर्न पलाय, अंतरायकी सत्ता जाय ॥ ६५ ॥

१ बादलोंकी घटामें। २ परसौं—परपदार्थोंसे। ३ ध्यानरूपी तलवारसे।

जैसैं भूप नसैं[1] सब सैन, भाग जाइ न दिखावैं नैन ।
तैसैं मोह नास जब होय, कर्मघातिया[2] रहै न कोय ॥ ६६ ॥
कीनैं चारिघातिया हान, उपजै निरमल केवलग्यान ।
लोकालोक त्रिकाल प्रकास, एक समैंमैं सुखकी रास ॥ ६७ ॥
त्रिभुवन इंद्र नमैं कर जोर, भाजैं दोषचोर लखि भोर ।
आवै जु नाम गोत वेदनी, नासि भयैं नूतन सिवधनी ॥ ६८ ॥
आवागमनरहित निरबंध, अरस अरूप अफास अगंध ।
अचल अबाधित सुख विलसंत, सम्यकआदि अष्टगुणवंत[3] ६९
मूरतिवंत अमूरतिवंत, गुण अनंत परजाय अनंत ।
लोक अलोक त्रिकाल विथार, देखै जानै एकहि बार ॥ ७० ॥

सोरठा ।

लोकसिखर तनुवात, कालअनंत तहां बसै ।
धरमद्रव्य विख्यात, जहां तहां लौं थिर रहै ॥ ७१ ॥
ऊरधगमन सुभाव, तातैं वंक चलै नहीं ।
लोकअंत ठहराव, आगैं धर्मदरव नहीं ॥ ७२ ॥
रहित जन्म मृति एह, चरमदेहतैं[4] कछु कमी ।
जीव अनंत विदेह[5], सिद्ध सकल वंदौं सदा ॥ ७३ ॥
ते हैं भव्य सहाय, जे दुस्तर भवदधि तरैं ।
तत्त्वसार यह गाय, जैवंतौ प्रगटौ सदा ॥ ७४ ॥
देवसेन मुनिराज, तत्त्वसार[6] आगम कह्यौ ।
जो ध्यावै हितकाज, सो ग्याता सिवसुख लहै ॥ ७५ ॥

---

१ राजाके मर जानेपर । २ आयुःकर्म । ३ अनंतज्ञान वीर्य सुख दर्शन सूक्ष्म अव्याबाध अवगाहन अगुरुलघु । ४ अन्तिम शरीरसे । ५ शरीररहित । ६ मूलग्रन्थ (७४ गाथा) देवसेनसूरिका प्राकृतमें है, उसका यह अनुवाद है ।

सम्यकदरसन ग्यान, चारित सिवकारन कहे ।
नय व्यवहार प्रमान, निहचैं तिहुमैं आतमा ॥ ७६ ॥
लाख बातकी बात, कोटि ग्रंथकौ सार है ।
जो सुख चाहौ भ्रात, तो आतम अनुभौ करौ ॥ ७७ ॥
लीजौ पंच सुधारि, अरथ छंद अच्छर अमिल ।
मो मति तुच्छ निहारि, छिमा धारियौ उरविषैं ॥ ७८ ॥
द्यानत तत्त्व जु सात, सार सकलमैं आतमा ।
ग्रंथ अर्थ यह भ्रात, देखौ जानौ अनुभवौ ॥ ७९ ॥

इति तत्त्वसार ।

दर्शनदशक।

छप्पय।

देखे श्रीजिनराज, आज सब विघन विलाये।
देखे श्रीजिनराज, आज सब मंगल आये॥
देखे श्रीजिनराज, काज करना कछु नाहीं।
देखे श्रीजिनराज, हौंस पूरी मनमाहीं॥
तुम देखे श्रीजिनराजपद, भौजल अंजुलिजल भया।
चिंतामनि पारस कल्पतरु, मोह सबनिसौं उठि गया॥१॥
देखे श्रीजिनराज, भाज अघ जाहिं दिसंतर।
देखे श्रीजिनराज, काज सब होंइ निरंतर॥
देखे श्रीजिनराज, राज मनवांछित करिए।
देखे श्रीजिनराज, नाथ दुख कबहुं न भरिए॥
तुम देखे श्रीजिनराजपद, रोमरोम सुख पाइए।
धनि आजदिवस धनि अब घरी, माय नाथकौं नाइए॥२॥
धन्य धन्य जिनधर्म, कर्मकौं छिनमैं तोरै।
धन्य धन्य जिनधर्म, परमपदसौं हित जोरै॥
धन्य धन्य जिनधर्म, भर्मकौ मूल मिटावै।
धन्य धन्य जिनधर्म, शर्मकी राह बतावै॥
जग धन्य धन्य जिनधर्म यह, सो परगट तुमनैं किया।
भवि खेत पाप-तप तपतकौं, मेघरूप ह्वै सुख दिया॥ ३॥
तेज सूरसम कहूं, तपत दुखदायक प्रानी।
कांति चंदसम कहूं, कलंकित मूरति मानी॥

१ कल्याणकी, आत्महितकी। २ पापरूपअग्निसे तप्त। ३ सूर्यसदृश।

वारिधिसम गुण कहूं, खारमैं कौन भलप्पन।
पारससम जस कहूं, आपसम करै न पर-तन॥
इन आदिपदारथ लोकमैं, तुम समान क्यौं दीजिये।
तुम महाराज अनुपमदसा, मोहि अनूपम कीजिये॥४॥
तब विलंब नहिं कियौ, चीर द्रोपदिकौ बाढ़्यौ।
तब विलंब नहिं कियौ, सेठ सिंहासन चाढ़्यौ॥
तब विलंब नहिं कियौ, सियातैं पावक टार्‌यौ।
तब विलंब नहिं कियौ, नीरतैं मातंग उबार्‌यौ॥
इहविधि अनेक दुख भगतके, चूर दूर किय सुख अवनि।
प्रभु मोहि दुःख नासनविषैं, अब विलंब कारन कवन॥५॥
कियौ भौनतैं गौन, मिटी आरति संसारी।
राह आन तुम ध्यान, फिकर भाजी दुखकारी॥
देखे श्रीजिनराज, पापमिथ्यात विलायौ।
पूजा थुति बहु भगति, करत सम्यकगुन आयौ॥
इस मारवार संसारमैं, कल्पवृक्ष तुम दरस हैं।
प्रभु मोहि देहु भौभौविषैं, यह वांछा मन सरस है॥६॥
जै जै श्रीजिनदेव, सेव तुमही अघनासक।
जै जै श्रीजिनदेव, भेव षटद्रव्य प्रकासक॥
जै जै श्रीजिनराज, एक जो प्रानी ध्यावै।
जै जै श्रीजिनदेव, टेव अहमेव मिटावै॥

१ पराये शरीरको अर्थात् दूसरी धातुओंको। २ पटतर, उपमा। ३ जलमेंसे। ४ हाथी। ५ पृथ्वीमें। ६ घरसे। ७ गमन। ८ मारवाड़रूपी (वृक्षरहित सूखेदेश) संसारमें। ९ भेद।

जै जै श्रीजिनदेव प्रभु, हेय करमरिपु दलनकौं।
हूजै सहाय सँघरायजी, हम तयार सिवचलनकौं ॥ ७॥

जै जिनंद आनंदकंद, सुरवृंदवंद पद।
ग्यानवान सब जान, सुगुन-मनि-खान आन पर्द (?) ॥
दीनदयाल कृपाल, भविक भौजाल निकालक।
आप बूझ सब सूझ, गूझ नहिं बहुजन पालक ॥
प्रभु दीनबंधु करुनामई, जगउधरन तारन तरन।
दुखरास निकास स्वदासकौं, हमैं एक तुम ही सरन ॥ ८॥

देखँनीक लखि रूप, बंदि करि बंदनीक हुव।
पूजनीक पद पूज, ध्यान करि ध्यावनीक धुव ॥
हरष बढ़ाय बजाय, गाय जस अंतरजामी।
दरब चढ़ाय अघाय, पाय संपति निधि स्वामी ॥
तुम गुण अनेक मुख एकसौं, कौंन भाँति बरनन करौं।
मन वचन काय बहु प्रीतिसौं, एक नामहीसौं तरौं ॥ ९॥

चैत्यालय जो करै, धन्य सो श्रावक कहिए।
तामैं प्रतिमा धरै, धन्य सो भी सरदहिए ॥
जो दोनौं विसतरै, संघनायक ही जानौ।
बहुत जीवकौं धर्म,-मूल कारन सरधानौ ॥
इस दुखमकाल विकराल मैं, तेरौ धर्म जहां चलै।
हे नाथ काल चौथौ तहां, ईति भीति सब ही टलै ॥ १०॥

१ गद ऐसा भी पाठ है। २ संदेह। ३ देखनेलायक। ४ अतिवृष्टि अनावृष्टि आदि सात। ५ इहलोक परलोक भय आदि सात।

दर्सनदसक कवित्त, चित्तसौं पढ़ै त्रिकालं।
प्रतिमा सनमुख होय, खोय चिंता गृहजालं ॥
सुखमैं निसिदिन जाय, अंत सुरराय कहावै।
सुर कहाय सिवपाय, जनम मृति जरा मिटावै ॥
धनि जैनधर्म दीपक प्रगट, पापतिमिर छयकार है।
लखि साहिबराय सु आँखिसौं, सरधा तारनहार है ॥ ११॥

इति दर्शनदशक।

ज्ञानदशक।

कुंडलिया।

देखैं मूरत स्वामिकी, वीतराग ए आप।
रागभाव इनकौ गयौ, रही चेतना व्याप॥
रही चेतना व्याप, आपकी सोई जानै।
गयौ भाव पर जान, ग्यान निहचै उर आनै॥
ते सोई निजरूप, भूप सिवसुंदर पेखैं।
ग्याता आठौं जाम[1], स्वामिकी मूरति देखैं॥ १॥

जिननैं जिन नैं-नैनसौं, देखौ दर्वविलास।
दरवित अविनासी सदा, उपजै उतपति नास[2]॥
उपजै उतपति नास, तासैतैं सत्ता साधी।
निजगुन गुनी अभेद, वेद सुखरीत अराधी॥
साधक साध उपाध, व्याध तजि दीनी तिननैं।
आप आपरसमगन, लगन लौ कीनी जिननैं॥ २॥

मानी क्रोधी कौन है, विनै छिमाधर कोय।
मान विनै चितधारतैं, जीवभाव नहिं होय॥
जीवभाव नहिं होय, जोय विकलप उपजावै।
नामकथन स्वमैंछाप, आप निरनाम कहावै॥
नय परमान निछेप, लेपकी कौन कहानी[3]।
आप आप निरवाच[4], राच हमनैं यह मानी॥ ३॥

मैं मैं काहे करत है, तन धन भवन निहार।
तू अविनासी आतमा, विनासीक संसार॥

१ प्रहर। २ उत्पादव्ययध्रौव्यमें। ३ अमुक्त है, मिथ्या है। ४ निर्वाच्य-अवक्तव्य।

विनासीक संसार, सार तेरौ तोमाहीं।
आप आप सिरमौर, और उपमा जग नाहीं॥
विन जानैं चिरकाल, जाल जग फिरौ वहुत तैं।
सुद्ध बुद्ध अविरुद्ध, आतमा सो मैं सो मैं॥ ४॥

करता किरिया कर्मकौ, करै जीव व्योहार।
निहचै रतनत्रयमई, है अभेद निरधार॥
है अभेद निरधार, धारना ध्यान न जाकै।
साहव सेवक एक, टेक यह वरतै ताकै॥
आप आपमैं आप, आपकौं पूरन धरता।
सुसंवेद[1] निजधरम, करम किरियाकौ करता॥ ५॥

ग्यानी जानै ग्यानमैं, नमैं वचन मन काय।
कायम परमारथविषै, विषै-रीति विसराय॥
विषै रीति विसराय, राय चेतना विचारै।
चारै क्रोध विसार, सार समता विसतारै॥
तारै औरनि आप, आपकी कौन कहानी।
हानी ममता-वुद्धि, वुद्धिअनुभौतैं ग्यानी॥ ६॥

सोहं सोहं होत नित, साँस उसासमँझार।
ताकौ अरथ विचारियै, तीन लोकमैं सार॥
तीन लोकमैं सार, धार सिवखेतनिवासी।
अष्टकर्मसौं रहित, सहित गुण अष्टविलासी॥
जैसौ तैसौ आप, थाप निहचै तजि सोहं।
अजपा-जाप सँभार, सार सुख सोहं सोहं॥ ७॥

१ आत्मानुभव।

दरव करम[1] नोकरम[2]मतैं, भावकरम[3]मतैं भिन्न।
विकलप नहीं सुबुद्धकै, सुद्ध चेतनाचिन्न ॥
सुद्ध चेतनाचिन्न, भिन्न नहिं उदै भोगमैं।
सुखदुख देहमिलाप, आप सुद्धोपयोगमै ॥
हीरा पानीमाहिं, नाहिं पानी गुण ह्वै कब।
आग लगै घर जलै, जलै नहिं एक नभदरब ॥ ८ ॥

जो जानै सो जीव है, जो मानै सो जीव।
जो देखै सो जीव है, जीवै जीव सदीव ॥
जीवै जीव सदीव, पीव अनुभौरस प्रानी।
आनँदकंद सुवंद, चंद पूरन सुखदानी ॥
जो जो दीसै दर्व, सर्व छिनभंगुर सो सो।
सुख कहि सकै न कोइ, होइ जाकौं जानै जो ॥ ९ ॥

सब घटमैं परमातमा, सूनी ठौर न कोइ।
बलिहारी वा घट्टकी, जा घट परगट होइ ॥
जा घट परगट होइ, धोइ मिथ्यात महामल।
पंच महाव्रत धार, सार तप तपै ग्यानबल ॥
केवल जोत उदोत, होत सरवग्य दसा तब।
देही देवल[4] देव, सेव ठानैं सुर नर सब ॥ १० ॥

१ पुद्गल पिण्डको द्रव्यकर्म कहते हैं। २ कर्मके उदयको जो सहकारी द्रव्य वह नोकर्म द्रव्य है। ३ पुद्गलपिण्डमें आत्मगुण घातनेकी जो शक्ति सो भाव कर्म है। ४ मन्दिर।

द्यानत चक्री जुगलिये, भवनपती[1] पाताल[2]।
सुर्गइंद्र अहमिंद्र सब, अधिक अधिक सुख भाल ॥
अधिक अधिक सुख भाल, काल तिहुं नंत गुनाकर।
एकसमै सुख सिद्ध, रिद्ध परमातमपद धर ॥
सो निहचै तू आप, पापविन क्यौं न पिछानत।
दरस ग्यान थिर थाप, आपमैं आप सु द्यानत ॥ ११ ॥

इति ज्ञानदशक।

१ भवनवासी। २ व्यंतर।

द्रव्यादि चौबोल-पचीसी ।

सोरठा ।

दरव खेत अरु काल, भाव दरव षट तत्त्व नव ।
न्यायक दीनदयाल, सो अरहंत नमौं सदा ॥ १

द्रव्यकी गिनती । सवैया इकतीसा ।

जघन एक धर्मद्रव्य, कालानू असंख्यात,
तातैं अनंते अभव्य, भव्य दव्व गहे हैं ।
ताहीतैं अनंते सिद्ध, वंदौं मन वच काय,
सिद्धतैं अनंते जीव, निगोदमैं¹ लहे हैं ॥
यातैं अनंते निगोद, पांचौंइंद्रीआस्रवतैं,
अनंते सो परमानू, उतकिष्ट कहे हैं ।
यही द्रव्य भेद है, जघन्य मध्य उतकिष्ट,
सरधा करैतैं, सरधानी सरदहे हैं ॥ २ ॥

खेत्रकी गिनती ।

जघन एक आकासको प्रदेस अनूसम,
सर्व दर्वदेसनिकौं थानदान देत है ।
आठ परदेस मेरुतलैं जीव छुवैं नाहिं,
जघनैं निगोद देह असंख्यात खेत है ॥
अंगुल जौं हाथ धनुष कोस जोजनभेद,
सैनी यौं प्रतर लोक दर्वकौ निकेत है ।

1 चतुर्गतिनिगोदमें । २ नित्यनिगोदमें । ३ लब्ध्यपर्याप्तकनिगोदियाकी जघन्यावगाहना । ४ लोकश्रेणी ।

लोकतैं अनंत है अलोकखेत उतकिष्ट,
व्योमसौ अमल मेरौ आतमा सचेत है ॥ ३ ॥

कालकी गिनती ।

जघन काल एक ही समैको है वर्तमान,
तीन समैं अनाहार¹ आवली उसास है ।
घरी दिन मास वर्ष पूर्वांग आदि भेद,
इकतीस ताके अंक डेढ़सौ विलास है ॥
पल्ल सागर² छभेद नाना भांति और एक
ताहीतैं अनंतता अतीत समैं रास है ।
याहीतैं अनंत गुनैं समैं हैं अनागतके³,
काल उतकिष्ट सब ग्यानमैं प्रकास है ॥ ४ ॥

भावकी गिनती ।

भावको जघन्य कह्यौ सूच्छम निगोदियाको,
एक समैं एक अंस खुल्यौ निरावर्न⁴ है ।
तीनसै चौतीस स्वास छह हजार बारैं वार,
जनम मरन करैं अंत वेर मर्न है ॥
भयौ है कलेस घोर खुली है तनक कोर,
दूजे समै बढ़ै ग्यान विधिकौ⁵ आचर्न है ।

1 मरने बाद जीव जबतक आहारवर्गणाको ग्रहण नहीं करता है, उस समयतक उसे अनाहारक कहते हैं । २ व्यवहारपल्य उद्धारपल्य अद्धापल्य इसीतरह व्यवहार सागर उद्धारसागर अद्धासागर । ३ आनेवाला काल । ४ सूक्ष्मनिगोद लब्ध्यपर्य्याप्तक जीवके उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें सबसे छोटा हमेशा प्रकाशमान और जिसका कोई कर्म ढकनेवाला नहीं है ऐसा ज्ञान होता है, उसको निरावरण कहते हैं । ५ ज्ञानावरणादि कर्मोंका ।

मति श्रुति औधि[1] मनपरजै अनेक भेद,
उतकिष्टो केवल सरव संसै हर्न है ॥ ५ ॥

छह द्रव्यके बारह अधिकार ।

परिनामी[2] दोय जीव पुग्गल प्रदेसी[3] पांच,
काल विना करतार जीव भोगै फल है ।
जीव एक चेतन आकास एक सर्वगत,
एक[4] तीन धर्म औ अधर्म नभदल है ॥
मूरतीक एक पुदगल एक छेत्री व्योम,
नित्य चार जीव पुदगल विना सु लहै ।
हेत पंच[5] जीवकौं है क्रिया जीव पुग्गलमैं,
जुदे देस आन पच्छ भासतु विमल है[6] ॥ ६ ॥

छह द्रव्यकी और प्रदेशोंकी संख्या ।

धर्म औ अधर्म एक दर्व देस असंख्यात,
व्योम एक है ताके परदेस अनंत हैं ।
काल असंख्यातके प्रदेस असंख्यात जुदे,
चेतन अनंत एकके असंख नंत हैं ॥
पुग्गल अनंतानंत दर्व तीन भाँति देस,
संख भी असंख भी अनंत भी महंत हैं ।
एही छहों दर्व लोक आगैं और है अलोक
देत हौं त्रिकाल धोक जामैं झलकंत हैं ॥ ७ ॥

---

१ अवधि ज्ञान । २ एक हालतको छोड़कर दूसरी हालतमें जानेवाले । ३ बहुत प्रदेशवाले । ४ एक अर्थात् अखंड द्रव्य । ५ मिथ्या दर्शन अविरति प्रमाद कषाय और योग ये बंध कारण हैं । ६ यह कवित्त पृष्ठ ३४ में भी आ चुका है ।

निगोद जीवसंख्या ।

खंध हैं निगोद गोल लोकतैं असंख[1] गुणे,
एक खंधै[2] अंडर असंख लोक कहे हैं ।
एक एक अंडरमैं आवास असंख लोक,
पुलवी आकासमैं असंख लोक लहे हैं ॥
एक एक पुलवी असंख लोक हैं सरीर,
एक तन सिद्धसौं अनंत जीव गहे हैं ।
आठ थौंन[3]माहिं नाहिं भरे तीन लोकमाहिं
आप जान दया आन ग्याता सरदहे हैं ॥ ८ ॥

क्षेत्रका भेद, परमाणुसमप्रदेशसे योजनतक ।

अनंते परमानूकौ खंध सन्नासन्न[4] नाम,
त्रटरैन[5] त्रसरैन रथरैन सुने है ।
कुरुहरि[6] हैमवत भर्त बाल लीख तिल,
जौ अंगुल बारै भेद आठ आठ गुने हैं ॥
अंगुल चौवीस हाथ चार हाथकौ है चाप,
चाप दो हजार कोस चौ जोजन मुने हैं
पंच सत गुना महा जोजनकौ पैल्लकूप[7],
वंदत हौं ग्यान जिन संसै सब धुने हैं ॥ ९ ॥

---

१ लोकसे असंख्यात गुणे स्कंध होते हैं । २एक एक स्कंधमें उससे असंख्यात लोकगुणे अंडर हैं इसीतरह सर्वत्र जानना । ३ पृथिवी, जल, तेज वायु, केवली, आहारक, देव और नारकियोंके शरीरमें निगोद नहीं रहते हैं । ४ अनन्त परमाणु समूहके स्कंधको सन्नासन्न कहते हैं (यद्यपि अनन्ते परमाणु, पुंजको अवसन्नासन्न और आठ अवसन्नासन्नको एक सन्नासन्न कहते हैं, तथापि यहां उसकी विविक्षा नहीं है) ५ सन्नासन्नसे आठगुना त्रटरैन । ६ कुरुक्षेत्रके जीवोंके बाल रथरैनसे आठ गुणे हैं, इसी प्रकार हरिक्षेत्रमें समझना । ७ व्यवहारपल्यका गड्ढा ।

जंबूद्वीपसे आगेके द्वीपसमुद्र कितने २ गुणे हैं?

जंबू एक लाख दो दो दोनौं ओर लौनोदधि,
सब पांच सूची गुनी पचीस फलाइए।
दीप एकलौ निकार चौवीस समुद्रधार,
जंबूसौं चौवीस गुणे उदधि धताइए॥
धातखंड चार चार सब सूची तेरहकी,
गुनौ सौ उनहत्तरि पचीस घटाइए।
जंबूसेती एक सौ चवाल गुनौ धातखंड
आगैं दधि दीप यौं ही जिनवानी गाइए॥ १०॥

योजनसे लेकर लोकाकाशतक क्षेत्रभेद।

विवहारपल रोम एक एक रोमनिपैं,
असंख्यात कोट वर्ष समै रोम राखिए।
यह पैल उद्धार कोराकोरी पचीसगुनौं,
एते दीप सागरकौ रैंजू अभिलाखिए॥

१ लवण समुद्र। २ एक समुद्र या द्वीपके सिरेसे लेकर दूसरे सिरे तककी रेखाके प्रमाणको जो कि केन्द्रमें होकर जाती है सूची कहते हैं। इसप्रकार १ लाख जंबूद्वीप, दोनों तरफ दो दो लाख लवणसमुद्र सब मिलकर पांच लाख, इसको इसीको गुणनेसे पचीस हुए। इसमेंसे जंबूद्वीपकी एक लाखसूचीको घटानेपर जंबूद्वीपसे लवणसमुद्र चौवीस गुणा भया। इसीप्रकार लवणसमुद्रके दोनो तरफ चार चार धातकी खंड है, सब मिलकर १३ हुए। इसको इसीसे गुणनेसे १६९ हुए। इसमेंसे पचीस घटानेसे १४४ गुना जंबूद्वीपसे धातकी खंड भया। इसी प्रकार सर्वत्र जानना। ३ व्यवहार पल्यके प्रत्येक रोमके ऊपर असंख्यातकोट वर्षके समय प्रमाण रोम रखनेसे उद्धार पल्य होता है। ४ उद्धार पल्यसे पचीसगुने (अढाई सागर प्रमाण) सब द्वीप समुद्र होते हैं। इतने प्रमाणहीको एक राजू कहते हैं।

सातराजू लोकश्रेनी उनचासराजूनिकौ,
लोककौ प्रतर दोनौं गुणैं लोक भाखिए।
भेद खेतके अनेक जैन कहा कोई एक,
करिकै विवेक आप सांकरय चाखिए॥ ११॥

समयसे लेकर पूर्वतक कालभेद।

असंख्यात समै एक आवली श्वासौ स्वासौ,
संख आवली मिलैतें होत एक स्वास है।
सैंतीससै तिहत्तरि स्वास एक मुहूरत,
तीस एक दिन दिन तीस एक मास है॥
बारै मास वर्ष लाख चउरासी पूर्वांग,
गुणाकार सौ पूरव आगैं भेद रास है।
नर्कस्वर्ग अवस्थित गुनथान मारगना,
थानमैं प्रकास दर्व देखो घट वास है॥ १२॥

कालके बारह भेद और कल्पसंज्ञा।

चारि तीन दोय एक कोराकोरी दधि चौथा,
बीयालीस घाटि दो बियालीस हजार हैं।
तीन दोय एक पल्य आव कोर पूरवकी,
बीसां सौ बीसं वर्ष नर त्रिजंच धार है॥

१ सात राजू प्रमाण जगच्छ्रेणी होती है। २ उनचास राजूका लोक प्रतर होता है। ३ चौरासी लाखको चौरासी लाखसे गुणा करनेसे पूर्वांग होता है। ४ प्रथम सुखमा सुखमा काल चार कोड़ाकोड़ी सागरका होता है। ५ दूसरा सुखमा काल तीन कोड़ाकोड़ी सागरका। ६ तीसरा सुखमा दुखमा दो कोड़ाकोड़ी सागरका। ७ चौथा दुखमा सुखमा ४२००० वर्षकम एक कोड़ाकोड़ी सागरका। ८ पांचवां दुखमाकाल २१ हजार वर्षका, इसी तरह छठा दुखमा दुखमा भी होता है। ९ चौथे कालमें उत्कृष्ट आयु एक किरोड़ पूर्व वर्षकी होती है। १० पंचममें १२० वर्षकी। ११ छठेमें बीस वर्षकी।

तीन दोय एक दिन बीतैं लेत हैं अहार,
एक बार दोय बार वहु बार कार हैं।
अवसर्पिनी छह काल उत्सर्प्पिनी उलटी,
वीस कोराकोर भन्यौ प्रभुजी उद्धार है ॥ १३ ॥

पल्य सागर और निगोद।

कूप रोम सौं सौ वर्ष विवहार पैल्य वीज,
तातैं असंख्यातकौ उधार पल्य नाम है।
यातैं असंख्यात गुणौ पल्य अद्धा उतकिष्ट,
दस कोरा कोरीकौ इक सागर स्वाम है ॥
वीस कोरा कोरी दधि ताकौ एक कल्प नाम,
ता मध्य चौवीसी दोय तिनकौं प्रनाम है।
निकलि निगोद दो हजार-दधि इहां रहै,
पावै सिव नाहीं जावै वही सही ठाम है ॥ १४ ॥

भाव चेतना तीन प्रकार, पांचो ज्ञानके मूल भाव पांच, उत्तर भाव त्रेपन।

भावँ एक चेतनसौं तीन कँर्म फल ग्यान,
ग्यान एक पंच भेद भाषत मुनीस हैं।

---

१ कल्पकाल। २ एक योजन (चारकोस) लंबे चौड़े कूपमें एक दिनसे सात दिन तकके भेड़के वच्चेके जिनका कि कैंचीसे दूसरा खंड न हो सके ऐसे भरे हुए बालोंमेंसे एक २ बालको सौ २ वर्षमें निकाले। जितने वर्षोंमें खाली होवे, उसे व्यवहार पल्य कहते हैं। ३ दश कोड़ा कोड़ी पल्यका सागर होता है। ४ सागर। ५ दो हजार सागर। ६ आत्मगुण। ७ कर्मचेतना, कर्मफलचेतना, ज्ञानचेतना (सम्यग्दृष्टिके होनेवाली)।

मति तीनंसै छतीस श्रुत ग्यान भेद वीसं,
अंग अंग-वाहज पूरव सौ चालीस हैं ॥
औधि तीनं षट भेद मनंपरजै दो भेद
केवल अभेद पांच भाव सिद्ध ईस हैं।
मूल पंच भावके तरेपन उत्तर भाव,
वंदत हौं एक जहा सर्व भाव दीस हैं ॥ १५ ॥

त्रेपनभाव और चौदह गुणस्थान।

मिथ्या गुनथान भाव, चौंतीस वत्तीसं दूजे,
तीजेमैं तेंतीस, चौथे छत्तीसं वखानिए।

---

१ बहु, बहुविध, क्षिप्र, अनिःसृत अनुक्त, ध्रुव इनके उलटे एक, एकविध, अक्षिप्र, निःसृत, उक्त, अध्रुव, इनको अवग्रह ईहा अवाय धारणासे गुणा करनेसे ४८ हुए। इनको पांच इन्द्रिय छट्टे मनसे गुणा करनेसे २८८ हुए। व्यंजनावग्रह चक्षुः और मनसे नहीं होता, इस लिये चार इन्द्रियोंसे गुणाकरनेसे ४८ हुए। सब मतिज्ञानके भेद ३३६ हुए। २ पर्य्याय पर्य्यायसमास (सूक्ष्मनिगोद लब्ध्यपर्य्याप्तकका) अक्षर, अक्षरसमास, पद, पदसमास, संघात, संघातसमास, प्रतिपत्तिः, प्रतिपत्तिसमास, अनुयोग, अनुयोगसमास, प्राभृतप्राभृतः प्राभृतप्राभृतसमास, प्राभृत, प्राभृतसमास, वस्तु, वस्तुसमास, पूर्व, पूर्वसमास, ये २० भेद श्रुतज्ञानके है। ३ अंगवाह्य। ४ देशावधि, परमावधि, सर्वावधि। ५ अनुगामिनी, अननुगामिनी, वर्धमान, हीयमान, अवस्थित, अनवस्थित। ६ ऋजुमति, विपुलमति। ७ कुमति, कुश्रुत, विभंगावधि, चक्षुर्दर्शन, अचक्षुर्दर्शन, दान, लाभ, भोग, उपभोग, वीर्य्य, पांच लब्धि, चार गति, चार कषाय, तीन लिङ्ग, मिथ्यादर्शन, अज्ञान, असंयत, असिद्ध, छै लेश्या, जीवत्व, भव्यत्व और अभव्यत्व ये चौंतीस भाव मिथ्यात्व गुणस्थानमें हैं। ८ दूसरे गुणस्थानमें, मिथ्यादर्शन अभव्यत्व छोड़कर ३२ भाव होते हैं। ९ पिछले ३२ में अवधिदर्शन और मिलानेसे ३३ होते हैं। १० तीन अज्ञानकी जगह तीन सम्यग्ज्ञान और औपशमिक क्षायोपशमिक क्षायिक सम्यक्त्व मिलानेसे ३६ होते हैं।

पांचैं छटैं सातैं, इकंतीस आठैं अठाईस,
नौमैं अठाईस दसैं बाईस प्रमानिए ॥
ग्यारहैं इकवीस बारैं बीसं तेरैं चौदहैं,
चौदहमैं तेरै सिद्धमाहिं पांच जानिए ।
सम्यक दरस ग्यान जीवत अनंत बल,
दर्व दिष्ट सासतो सुभाव आप मानिए ॥ १६ ॥

सामान्य विशेष २१ स्वभाव ।

असंत नासत नित्य अनित्य अनेक एक,
भव्य औ अभव्य भेद औ अभेद पर्म है ।
चेतन अचेतन अमूरत मूरत सुद्ध
असुद्ध विभाव एक परदेस धर्म है ॥
बहु परदेस उपचार दस ए विसेस
पहली तुकके ग्यारै ते समान धर्म हैं ।

२ नरक, देव गति और तीन अशुभ लेश्या घटानेसे तथा असंयतकी जगह संयत होनेसे ३१ होते हैं । इसी प्रकार छठेमें सातवेंमें संयतासंयतकी जगह क्षायोपशमिक चारित्र तथा तिर्य्यग्गतिकी जगह मनःपर्य्यय ज्ञान जोड़नेसे ३१ होते हैं । २ शुभ आदिकी दो लेश्या क्षायोपशमिक सम्यक्त्व घटानेसे २८ होते हैं । ३ आदिकी तीन कषाय तीन वेद घटानेसे २२ भाव होते है ४ सूक्ष्म लोभकेविना २१ भाव होते हैं । ५ औपशमिक सम्यक्त्व घटानेसे २० होते हैं । ६ तीन दर्शन तीन ज्ञान घटानेसे १४ होते हैं । ७ एकलेश्या घटानेसे १३ भाव होते हैं । ८ अनंतज्ञान वीर्य दर्शन सुख जीवत्व ये पांच भाव सिद्धोंमें हैं । ९ अस्तित्व नास्तित्व नित्यत्व अनित्यत्व अनेकत्व एकत्व भव्यत्व अभव्यत्व भेद अभेद और परम (पारणामिक भावकी प्रधानतासे) ये द्रव्योंके ग्यारह सामान्य स्वभाव है और चेतन अचेतन मूर्त अमूर्त शुद्ध अशुद्ध विभाव एकप्रदेश अनेकप्रदेश और उपचरित ये द्रव्योंके दश विशेष स्वभाव हैं ।

जीवके इकीस पुदगल वीस धर्माधर्म
नभ सोलै काल पंद्रै जानैं होत सर्भ है ॥ १७ ॥

द्रव्य क्षेत्र काल अल्प बहुत्व तथा इनके सादृशोंके नाम सागवाग ।

अणूसौं अनंत काल समैसौं अनंत खेत,
नभसौं अनंतानंत भाव ग्यान मानिए ।
दर्वसौं समान धर्म दर्व औ अधर्म दर्व
खेतसौं समान पंच पैंताला बखानिए ॥
कालसौं समान आव सागर तेतीस तहां
सर्वारथसिद्ध नर्क माघवी प्रवानिए ।
भावसौं समान ग्यानरूप है सरव जीव
एक आदि भेद बहु आगमतैं जानिए ॥ १८ ॥

षट् द्रव्य नव तत्त्वके द्रव्य क्षेत्र कालभावका जुदा २ प्रमाण ।

दर्वकौ प्रमान, जीव सिद्धसौं अनंत गुणौ,
खेतकौ प्रमान जीव लोकतैं अनंत है ।
कालकौ प्रमान, जीव अनूसौं अनंत गुणौ,
भाव नभसौं अनंतानंत ज्ञानवंत है ॥
पांच दर्व नव तत्त्व, इनके प्रमान चार,
पंचसंग्रै ग्रंथमाहिं, भाषो विरतंत है ।
इहां कहैं भेद बढ़ै थिरता न कौन पढ़ै,
जाही ताही भांति आप जानैं सोई संत हैं ॥ १९ ॥

१ चेतनस्वभाव मूर्तस्वभाव अशुद्धस्वभाव विभावस्वभाव और उपचरितस्वभाव ये पांच घटानेसे धर्मादि तीनमें सोलह रहते हैं । २ अनेक प्रदेश घटानेसे कालमें पन्द्रह स्वभाव हैं । ३ गोमठसारका दूसरा नाम पंचसंग्रह भी है ।

छहों द्रव्य लोकमें हैं।

छहों दर्व भरे लोक, कोई कहैं कछू नाहिं,
अहं[1] शब्दसेती जीव जानियै प्रतच्छ है।
पुग्गल प्रगट देह धन आदि दीसत हैं,
धर्मविना सिद्ध चले जाहिंगे कुपच्छ है॥

अधरम दर्व विना थिरता सहाय कौन,
मास वर्ष बोदा[2] नया, कालहीसौं लैच्छ[3] है।
व्योम विना रहैं कहां, सरधा मुकत मूल,
मोखपुरपंथी ताहि यह राह दच्छ है॥ २०॥

छहों द्रव्य क्षेत्र काल भाव उत्पाद व्यय ध्रौव्य स्वभाव विभाव।

दर्व[4] सत्तारूप आपखेत[5] परदेस माप,
काल[6] समै मरजादा, भाव[7] मूल सत्त है।
चार-मई आप तिहुं काल सर्व दर्व लसै,
गुन द्रव्य परजाय होत नास व्यक्त है॥
चारौंके सुभाव ग्यात ध्रौव्य व्यय उतपात,
सुभाव[8] विभाव[9] जीव जड़ सेत[10] रक्त है।
पांचनिसौं कौन काज अपनौ विभाव त्याज,
कीजियै इलाज सुद्ध भाव बड़ी भक्ति है॥ २१॥

---

१ आत्मामें अहं (मैं) ऐसा स्वसंवेदन प्रत्यक्ष होता है। २ पुराना। ३ देखा जाता है। ४ धर्म धर्मीमें अभेद विवक्षासे सत्स्वरूप पदार्थके देश ही स्वद्रव्य हैं। ५ आकाशमें स्थित अपने देशांश ही स्वक्षेत्र है। ६ निजगुणांश (ऊर्ध्वांश पर्य्याय) स्वकाल है। ७ निज ज्ञानादिगुण स्वभाव हैं। ८ स्वभावपरिणमन शुद्ध जीवस्वरूप है। ९ विभावपरिणमन पुद्गलका भाग है। यहां केवल पुद्गल पर्य्यायकी ही विवक्षा है। १० सफेद।

षट्द्रव्यके दश सामान्य गुण और सोलह विशेष गुण।

अस्त वस्त दरव अगुरू-लघु परमेय,
परदेस चेतन अचेतन अमूरती।
मूरतीक समान दस हैं गुन दर्वनके,
जुदे जुदे आठ आठ भाषे बुध-पूरती॥
ग्यान दर्स सुख बल वर्न रस गंध फास,
गति[2] थिति[3] अवगाह[4] वरतना[5] मूरती।
चेतन अचेतन अमूरत विसेस सोलै,
दोके[6] षट चौके तीन जानैं आप सूरती॥ २२॥

षट्द्रव्य पंचास्तिकाय।

जीव पुग्गल धरम अधरम व्योम पंच,
अस्तिकाय काल मिलैं षट द्रव्य कहिए।
एक एक दरवमैं अनंत अनंत गुन,
अनंत अनंत परजाय सक्ति लहिए॥
ब्रह्मा करै विष्णु धरै ईस हरै कभी नाहिं,
तिहुं काल अविनासी स्वयं-सिद्ध गहिए।

---

१ अस्तित्व, वस्तुत्व, द्रव्यत्व, अगुरूलघुत्व, प्रमेयत्व, प्रदेशत्व, चेतनत्व, अचेतनत्व, अमूर्तत्व, और मूर्तत्व दश गुण द्रव्योंके सामान्य हैं। २ चलनेमें सहकारीपना। ३ रुकनेमें सहायपना। ४ अन्यवस्तुको अपनेमें जगहका देना। ५ वस्तुके रूपान्तर करनेमें सहाय होना। ६ जीवके ज्ञान दर्शन सुख वीर्य्य चेतनत्व और अमूर्तत्व ये छै विशेष गुण हैं। अजीवके स्पर्श रस गंध वर्ण मूर्तत्व और अचेतनत्व ये छै विशेष गुण हैं। ७ धर्ममें गतिहेतुत्व अमूर्तत्व अचेतनत्व हैं। अधर्ममें स्थितिहेतुत्व अमूर्तत्व अचेतनत्व है। आकाशमें अवगाहहेतुत्व अमूर्तत्व अचेतनत्व है। कालमें वर्तनाहेतुत्व अमूर्तत्व अचेतनत्व हैं।

सब भेद जानौ जड़ मिलेकौं जुदा ही मानौ,
आप आप-विषै देखै तातैं दुःख दहिए ॥ २३ ॥

अन्त मंगल। कवित्त (३१ मात्रा)

दरव प्रछन्न काल कालानू, खेत प्रछन्न अलोक प्रदेस।
भाव ग्यान केवल मिथ्याती, काल अतीत अनागत भेस ॥
दरव खेत अरु काल भाव सब, देखौ जानौ तुमहि जिनेस।
हाथ जोरि बंदना करत हौं, हर मेरौ संसार कलेस ॥२४॥
कवित वनाए सबनि सुनाए, मन आए गाए गुन ग्यान।
चरचा कूप अनूपम वानी, हंस भूप चिद्रूप-निसान ॥
गोमटसार धार द्यानतनैं, कारन जीव-तत्त्वसरधान।
अच्छर अरथ अमिल जो देखौ, लेखौ सुद्ध छिमा उर आन ॥

इति द्रव्य चौबोल पचीसी।

व्यसनत्याग षोड़श।

सवैया तेईसा (मत्तगयन्द)।

पापकौ ताप कलेस असेस,
निसेस[1] यथा छिनमाहिं हरैं हैं।
देव नमैं गन-मौलि दिपैं,
मनि नील मनौं अलि[2] सेव करैं हैं ॥
नाम ही सांत करै जिनकौ,
तिनकौ जस इंद्र कहा उचरैं हैं।
सांतिप्रभू जिन-रायके पाँय[3]–
पयोज भजैं भवतैं निकरैं हैं ॥ १ ॥

ग्यारह प्रतिमा। सवैया इकतीसा।

दंसनविसुद्ध बरै वारै व्रतसौं न टरै,
सामायिक करै धरै पोसैह[4] विधानकै।
सरब सचित्त टारि छांरिकै निसा अहार,
सदा ब्रह्मचार धार निरारंभ ठानकै ॥
परिगह त्याग देत पापसीखसौं न हेत,
याके काज किया लेत ना भोजन दानकै।
श्रावक ग्यारह पालैं पहलैं विसन टालैं,
एक हू न प्रतिमा है एक विसनवानकै ॥ २ ॥

कवित्त (३१ मात्रा)।

ग्यारै प्रतिमा भिन्न भिन्न सब, कहीं सातमैं अंगमँझार
ताके सरब भेद लखि कीनैं, आचारजों श्रावकाचार ॥

---

१ चन्द्रमाके समान। २ भौंरा। ३ पाद-पयोज=चरणकमल। ४ प्रोषध-प्रतिमा।

अंग देखिकै ग्रंथ पेखिकै, जानौ सकल गृही-व्योहार।
सैंजम नीव मनुष-भौ-सोभा, विसन त्याग-विधि कहूँ विचार ३

सप्तव्यसनोंके नाम। अडिल्ल छन्द।

जूवा आमिष, मदिरा दारी[1] छोरिए।
आखेटक[2] चोरी, पर-तियहित तोरिए॥
महा-सूर ए सात, विषम-दुख दैनकौं।
सात नरकनैं भेजे, जग-जिय लैनकौं॥ ४॥

जूआ व्यसन। कवित्त (३१ मात्रा)।

अजँस[3]-धाम सबविसनस्वाम, इक नरक गौनकौं[4] सौनं[5] निहार
सकल-आपदा-नदी-सैलं[6] यह, पाप विरछकौ वीज विचार॥
धन सुभ धर्म सर्म सब खंडै, मंडै झूठ वचन-व्योहार।
द्यूत भूत वस ऊत परै मति, परगट देख देख संसार॥५॥

सवैया इकतीसा।

आरति अपार करै, मार सांचसौं विगार,
जस सुख दर्व पुन्य प्रभुता विनास है।
जीतेकौं त्रिपति नाहिं हारे पै न गांठिमाहिं,
लेत है उधार देत महा दुःखरास है॥
और कौन बात तातकौ न इतवार[7] जात,
नारिकौं नहीं सुहात मात हू न पास है।
चौपड़ हू त्याग धर्मध्यान लाग वड़भाग,
आयु तौ तनक सोऊ होत सदा नास है॥ ६॥

१ वेश्यागमन। २ शिकार। ३ अकीर्तिका घर। ४ जानेके लिये। ५ ज़ीना, सीढ़ियां। ६ पर्वत। ७ विश्वास।

आमिष-व्यसन।

यानी पाक[1] गंदी[2] देह लोकमाहिं कहैं ऐह,
पाकसेती पाक गंधसेती गंध होत है।
जलसेती मेवा नाज उत्तम सरव साज,
भूँत[3]-भयौ मांस कैसैं उत्तम उदोत है॥
हिंसा विना बनै नाहिं करकैं नरक जाहिं,
सहँज[4] भयौ अनंत जीवकौ निगोत है।
नाम लैनौ छूवनौ देखनौ नाहिं संतनिकौं,
अंगीकार कौन बात बँधै नीच गोत है॥ ७॥
फिरत अनादि-काल एक एक जीवनिसौं,
तात मात सुत नारि नाते बहु भए हैं।
एक जीव घात किये सब ही कुटुंब हत्यौ,
हिंसाके भावनिसौं निज हू मर गए हैं॥
जोई जीव मरै सोई क्रोधकी लगनसेती,
मारै भव भव ताहि वैर-भाव छए हैं।
जीतवता चाही जिनौं जीवौंकौं विराधे नाहिं,
भांति भांति पोष सुख आपनिकौं लए हैं॥ ८

मदिरा-व्यसन।

कवित्त (३१ मात्रा)

मदिरा पीय मातसौं कु-नजर[5], महानिलज ताकौं कहि कोय।
देखौ और राहमैं चाटैं, स्वान पूतमुख मीठा होय॥

१ पवित्र। २ अपवित्र। ३ प्राणीसे पैदा हुआ। ४ आप ही आप हुआ अर्थात् स्वयं मरे हुए प्राणीका मांस। ५ बुरी नजर-कामवासना।

और लैन आयौ कहि हमकौं, दीजै इसतैं अधिका होय।
ऐसौ मद को गहै विचच्छन, भांग खाय नहिं उत्तम सोय॥९॥

वेश्या–व्यसन।

मत्तगयन्द सवैया।

माँसकौं खात सुहात सदा मँद, वात मृषा तन नीचनि भींदा।
कीरत दाहक जी रत चाहक, दामकी गाहक ज्यौं गुर-चींटा॥
क्रूर सुभाव उपाव विना नर, अंबर छूवत लेत हैं छींटौं।
नर्कसखी लख आन मिलैं, गनिका कहँ जेम कुहारीकौं बींटा॥

शिकार–व्यसन।

सवैया इकतीसा।

दर्व नाहिं हरै पर नरसौं न वात करै,
वेश्या मदकौ न काज जूवा नाहिं जानती।
पंज ऐव सरै विना सदा दाँत धरै तिना,
पुरसौं दई निकास वनवास ठानती॥
कछू नहीं पास भय-त्रास रच्छासौं निरास
सवकौं सहाय दिल्लीपति तोहि मानती।
साहनिका साह पातसाह महंमदसाह
साहवसौं मृगी दीन वीनती वखानती॥ ११॥

चोरी–व्यसन।

भावौ कोई दर्व हरौ भावौ कोई प्रान हरौ,
दोऊ हैं समान केई मूढ़ यौं कहत हैं।

१ शराव। २ झूठ। ३ छुआ हुआ। ४ मनमें संभोग चाहनेवाली। ५ जैसे गुड़पर चींटे आ लगते हैं। ६ यदि किसीसे वेश्या का वस्त्र छू जावे, तो उसे छींटा लेने पड़ते हैं—स्नान करना पड़ते हैं। ७ कुल्हाड़ीमें जो लकड़ी पोई जाती है, उसे बींटा या बेंट कहते हैं। ८ चाहै।

दर्व लैन काज प्रान दैन जात रनमाहिं,
याकौ नाव जीतवसौं जीतव रहत हैं॥
प्रान हरैं एक नास दर्वसौं कुटंव त्रास,
प्रानसेती दर्व–दुःख अति ही महत हैं।
यातैं चोर भाव निरवार ह्वै द्यानतदार
सत्तकी पदवी सार सज्जन लहत हैं॥ १२॥

परस्त्रीव्यसन।

साधनिनैं त्रिया जात लखी सुता सुसा मात
हीनसक्त सबै छांड़ि व्याही एक वरी है।
रावनकौं देखौ सब परनारि सेई कब,
अवलौं अकीरति दसौं दिसामैं भरी है॥
चोरी दोष जिहमाहिं संतान रहत नाहिं,
हाकिमकौ दंड पंच फिटकार परी है।
एते दुःख इहां आगैं पूतली नरक जहां,
कच्छ-लंपटी ह्वै कौंन जाकी वुद्धि खरी है॥ १३॥

सातों व्यसन जूआसे उत्पन्न होते हैं ?

* कंथा यह स्वामी? नहीं सफरी गहन जाल
खेलत सिकार? कभी मांस चाह भएतैं।

१ दयानतदार अर्थात् ईमानदार। २ पुत्री। ३ वहिन। ४ हीनशक्ति होनेके कारण—ब्रह्मचर्यकी सामर्थ्य न होनेके कारण। ५ कथरी। ६ मछली पकड़नेका जाल।

* एक राजाको जूआ खेलनेकी आदत पड़ गई थी। उसे छुड़ानेके लिए उसका मंत्री साधूका वेष धरकर आया। साधूका जब राजा भक्त हो गया, तब एक दिन राजाने उससे जो प्रश्न किये और उनके जो उत्तर पाये, वे सब इस कवित्तमें वर्णित हैं।

मांस हू भखत? कभी दारूकी खुमारीमांहिं
सुरापान करो? कभी वेश्या-घर गएतैं॥
वेश्या हू गमन? परनारी जोपै मिलै नाहिं
परनारी भोगो? कभी दाम चोर लएतैं।
चोरी हू करत? कभी जूवे माहिं हार होय
सबै गुन भरे नष्ट भाव परनएतैं॥ १४॥

एक एक व्यसनके धारक पुरुष।

छप्पय।

पंडपूत दुख द्यूत, भूप बक मांस दुखी भुव।
जादौं मदजल छार, चारदत्त वेस्यावस हुव॥
ब्रह्मदत्त कु सिकार धार, सिवभूत चोर विध।
रावन तिय अविवेक, एक इक विसन गई रिध॥
ए सात विसन दुखमूल जग, सात नरक करतार हैं।
करि सात तत्त्व सरधान दस, लच्छन पार उतार हैं॥१५॥
सात विसन इक थूल, भूल परनामनिकेरी।
जब जब चलै कुराह, वाहि तब फेरि सबेरी॥
जथासकति व्रत धरौ, करौ नरभौ सफला इम।
धन जोबनकौ चाव, आव चंचल चपला जिम॥
यह विसनत्याग श्रावक कथा, निज परहित द्यानत कही।
सुनि विसन राग दुखखानि है, मानहिंगे सज्जन सही॥१६

इति व्यसनत्याग षोडश।

सरधा चालीसी।

दोहा।

वंदौं हो परमातमा, जगग्यायक जगभिन्न।
दरपन सब परगट करै, होय न सबसौं चिन्न॥१॥

नास्तिक निन्दा।

षट मत मानैं ईसकौं, जाप ध्यान तप दान।
महा निंदमत नासतिक, सदा पापकी खान॥२॥

नास्तिकके चार प्रश्न।

कहै जीव नाहीं कहीं, पुन्य पाप नहिं दोय।
सुरग नरक दोनौं नहीं, करि फल लहै न कोय॥३॥

चौपाई।

नास्तिकप्रश्न—लोहमई इक मंदिर करौ,
छिद्र विना तामैं नर धरौ।
ताकौं काढ़ो जब मरि जाय,
किहि मग जीव गयौ समझाय॥ ४॥
उत्तर—ता मंदिरमैं राखौ ढोल, ताहि वजावौ करौ किलोल।
बाहर सुनियै छेक न होय, तैसैं जीव दरब है लोय॥५
प्रश्न—फिरि बोल्यौ-इक प्रानी लेय, ताकौं तौलौ ठीक करेय।
मूए पीछैं तोलौ सोय, घटै नहीं जी कैसैं होय॥६॥
उ०—मसक एकमैं भरिए वाय¹, मुखकौं बाँधि तौल मन लाय।
पौंनै² काढ़ि फिरि तौलि सुजान, घटै नहीं त्यौं चेतनमान

१-२ हवा।

प्रश्न—चोर![1] एक ले दो खँड करौ, सौ हजार लाखौं विसतरौ।
जुदे जुदे देखौ निरधार, दीसै नहीं कहीं जिय सार ८

उत्तर—अरनैकी लकड़ी लै वीर, टूंक किरोर करौ किन धीर
विना घसैं न अगनि परगास, त्यौं आतम अनुभौ अभ्यास

प्रश्न—भूजल अगन पवन नभ मेल, पांचौं भए चेतना खेल।
ज्यौं गुड़ आदिकतैं मद होय, मद ज्यौं चेतन थिर नहिं कोय

दोहा।

उत्तर—पांचौं जड़ ए आप हैं, जड़तैं जड़ ही होय।
गुड़ आदिकतैं मद भयौ, चेतन नाहीं सोय ॥११॥
भू जल पावक पौन नभ, जहां रसोई[2] जान।
क्यौं नहिं चेतन ऊपजै, यह मिथ्या-सरधान॥ १२॥

प्रश्न—जल बुदबुदवत जीव है, उपजै और विलाय।
देह साथ जनमै मरै, जैसैं तरवरछाय ॥ १३ ॥

चौपाई।

उत्तर—बालक मुखमैं थनकौं लेय, दावै अंचै दूध पिवेय।
जो अनादिकौ जीव न होय, सीखविना क्यौं जानै सोय १४
मरिकै भूत होंय जे जीव, पिछली बातैं कहैं सदीव।
सिर चढ़ि बोलैं निज घर आय, तातैं हंस अमर ठहराय १५

प्रश्न—पुन्य पाप भाषैं जगमाहिं, पै काहूनैं देखे नाहिं।
भिड़हाँ[3] चाल चलै संसार, समझै कोई समझनिहार१६

[1] जंगलकी। [2] जहां रसोई बनती है, वहां पांचों भूत एकत्र होते हैं। [3] भेड़चाल, जहां एक भेड़ जावे, वहां उसके पीछे सब जाती हैं।

उत्तर—एक भूप सुख करै अनेक, पेट भरि सकै नाहीं एक।
परगट दीखै धोखा कौन, चार वरन छत्तीसौं पौंन[1] ॥१७॥

प्रश्न—सुरग नरक नाहीं निरधार, जिन देखे सो कहौ पुकार।
खंजर वेग? कहैं सब लोग, लरकैं डरपावैं हित जोग ॥१८॥
करिकैं धरम सुरग गयौ, कह्यौ न फिरि जिह आय।
भयौ पापतैं नारकी, क्यौं नहिं आयौ भाय ॥ १९ ॥

चौपाई।

उत्तर—पापी पकरयौ औगुनकार, पगवेरी गल संकल धार।
घेरैं रहैं निकास न होय, त्यौं आवै नहिं नारक कोय ॥२०॥
न्हाय सुगंध वसन सुम-माल, नेवज दीप धूप फल थाल।
पूजन चल्यौ दिसाकौं जाय, तैसैं नहिं आवै सुरराय ॥२१॥
तुम निचिंत तप करौ न वीर, हम तप करैं धरैं मन धीर।
जो परलोक न हम तुम सोय, है परलोक तुमैं दुख होय[2] २२

प्रश्न—खेती कीनी सुपनैंमाहिं, पै काहूनैं खाई नाहिं।
कोई काटै कोई खाय, कोई हाथ धरैं मरि जाय ॥ २३ ॥

उत्तर—कोई काहूकौं दे दाम, ताहीपै मांगै अभिराम।
जोई खाय पेट ता भरै, जहर खाय है सोई मरै ॥ २४ ॥

दोहा।

जो काहूकौ धन हरै, मारै काहू कोय।
जनम जनम सो क्रोधतैं, हरै प्रान धन दोय ॥२५॥

[1] जातियां। [2] यदि परलोक नहीं है तो हम तुम बरावर है, और यदि कहीं हुआ तो तुम्हें दुख भोगना पड़ेगा हम आनन्दसे रहेंगे।

चौपाई ।

जो तरु बोवै सो फल होय, नरतैं नर पसुतैं पसु होय।
करै सुपावै बोवै लुनै, परगट बात लोग सब सुनै ॥ २६ ॥

दोहा ।

जीव धरम परलोक फल, चारौं हैं निरधार ।
तातैं सरवग सेइयै, वांछितफलदातार ॥ २७ ॥

चौपाई ।

मिथ्यातीकी शंका—सरवग कहा कहां है सोय,
देखो सुनो न हमनैं कोय।
ऐसे मिथ्या वचन सुनेय, जैनी हित लखि उत्तर देय २८
समाधान—इस पिरथी इस कालमँझार,
न कहौं तौ तुम वच सत सार ।
और लोक अरु कालमँझार, है सरवग सब जाननहार २९
शंका—तीन लोक तिहुं कालनि माहिं,
हम जानैं हैं सरवग नाहिं ।
समाधान—तुम जाने तिहुँ जग तिहुं काल,
तुम ही सरवग दीनदयाल ॥ ३० ॥

दोहा ।

जब यह वचन प्रगट सुन्यौ, जान्यौ जिनमत सार ।
छांड़ि नासतिक निपुन नर, कर जोरे सिर धार ॥ ३१ ॥

अथ पंच मतवालोंके वचन ।

चौपाई ।

कोई कहै छहौं मतमाहिं, निज निज क्रिया करैं सिव जाहिं।
जैसैं एक महल षट द्वार, छहौं राह पहुचैं नर नारि ॥ ३२॥

दोहा ।

उत्तर—कहै लाख नौंका वरू(?), सबको एक दुवार ।
बहुत भेद मतकल्पना, एक जैन सिवकार ॥ ३३ ॥

चौपाई ।

अंधे पांच खरे इक ठौर, आगैं गज इक आयौ दौर ।
एक एक अँग सबनैं गहा, सो सरधान जीवमैं लहा ॥३४॥
सूंड़ि पकरि गज मूसल होय, छाज कानतैं मानैं कोय ।
माना थंभ पकरि पग अंग, पेट पकरि चौंतरा अभंग ॥३५
पूँछ पकरि लाठी सरदहा, पाँचौंनैं गजभेद न लहा ।
झगरैं लरैं करैं बहु रार, समझाए सब देखनहार ॥ ३६ ॥

उपदेश वर्णन ।

सरवग देव सुगुरु निरग्रंथ, दया धरम तीनौं सिवपंथ ।
पहली यह सरधा थिर करौ, पीछैं सकति देखि व्रत धरौ ३७

दोहा ।

अंतरतत्त्व सु आप लखि, बाहर दया निहार ।
दोनौं धरि करि हूजियै, सिव-वनिता-भरतार ॥ ३८ ॥
निकटभव्य जे पुरुष हैं, तिनकौं यह उपदेस ।
दीरघ-संसारी सुनैं, धारैं अधिक कलेस ॥ ३९ ॥
द्यानत जिनमत न्याय लखि, किए छंद चालीस ।
पढैं सुनैं तिनके हियैं, सरधा बिस्वावीस ॥ ४० ॥

इति सरधाचालीसी ।

---

१ सूप । २ देखनेवाले सूझतेने ।

अथ सुखबत्तीसी।

दोहा।

सिद्ध सरव बंदौं सदा, सुखसरूप चिद्रूप।
जाकी उपमा देनकौं, वसत न तिहुँजगभूप ॥ १ ॥

सिद्धोंका सुखवर्णन।

चौपाई।

जो कोई नर औगुनधार, नख सिख बंध बँध्यौ निरधार।
एक सिथिल कीनैं सुख होय, सब टूटैं ता सम नहिं कोय॥२
वाय पित्त तप कफ सिर-वाह, कोढ़ जलोदर दम अरु दाह।
एक गए कछु साता गहै, सरव गए परमानँद लहै ॥ ३ ॥
एक सास्त्र जो पढ़ै पुमान, कछु संदेह होय हैरान।
ताकौं समझैं हरष अपार, क्यौं न सुखी सब जाननहार॥४

दोहा।

नरक गरभ जनमन मरन, अधिक अधिक दुख होय।
जहाँ एक नहिं पाइयै, सुखिया कहियै सोय ॥ ५ ॥

नरकदुःख।

तन दुख मन दुख खेत दुख, नारक असुर करंत।
पांचौं दुख ये नरकमैं, नारक जीव सहंत ॥ ६ ॥

तिर्य्यंचदुःख।

भूमि खोदि जल गरम करि, अगिनि दाह दुख जोय।
पौन बीजना तरु कटैं, त्रस निरोध दुख होय ॥ ७ ॥

चौपाई।

छुधा तृषा करि पीड़ित रहै, गलमैं फाँस सीस तप सहै।
मार खाय अरु मोल बिकाय, बिन विवेक पसुगति दुख दाय८

खग[1] मृग मीन दीन अति जीव, मारैं हिंसक भाव सदीव।
तेहू मरैं महा दुख पाय, भौ भौ वैर चल्यौ सँग जाय ॥९॥

मनुष्यगतिदुःख।

हीन होय अरु गर्भ विलाय, जनमत मरै ज्वान मर जाय।
इष्ट वियोग अनिष्ट सँयोग, महादुखी नर व्यापै सोग॥१०॥
मूतनि हगनि महा दुख वीर, द्रव्य उपावन गहर गँभीर।
चाहदाहदुख कह्यौ न जाय, धन्न सिद्ध अविनासी काय ११

दोहा।

रूखा भोजन करज सिर, और कलहिनी नार।
चौथे मैले कापड़े, नरक निसानी चार ॥ १२ ॥
उद्दिम बिन अरु मांगना, बेटी चलनाचार।
सब दुख जिनके मिट गए, तेई सुखी निहार ॥ १३ ॥

चौपाई।

रस-लोहू-अरु मांस वखान, मेद हाड़ अरु मज्जा जान।
वीरज सात धात नहिं जहां, सुद्ध सरूप विराजैं तहां॥१४॥

दोहा।

कान आंख मुख नाक मल, मूत पुरीष[2] पसेव[3]।
सातौं मल जाकैं नहीं, सोई सुखिया देव ॥ १५ ॥

देवगतिदुःख।

चौपाई।

हीन होय पर-संपति देख, मरन वार दुख करै विसेख।
देव मरै एकेंद्री होय, जनम मरन वसि डोलै सोय॥१६॥

१ पक्षी। २ पाखाना। ३ पसीना।

चारयौं गतिमैं दुःख अपार, पांचपरावर्तन[1] संसार ।
करम काटि जे सिव-पुर गए, तिनके सुख कौनैं वरनए ॥१७

सिद्धस्वरूपवर्णन ।

दोहा ।

तीन लोकके सीसपै, ईस रहैं निरधार ।
छहौं दरस मानैं सदा, एक अंग लखि सार ॥१८॥

चौपाई ।

सुर-नर-असुर-नाथ थुति करैं, साध तपैं सो पद मन धरैं।
ध्यावैं ब्रह्मा विष्णु महेस, विन जानैं बहु करैं कलेस ॥१९॥
जो जो दीसैं दुख जगमाहिं, ताकौ एक अंस हू नाहिं ।
जा दुखकौं सुख जानै जीव, सरव करम तन भिन्न सदीव ॥२०
इह भव भै पर भव भै दोय, रोग मरन भै सबकौं होय।
रच्छक नहीं चोर भै महा, अकस्मात जीतैं सुख लहा ॥२१
देसभूप परभूप विगार, बहु वरसै वरसै न लगार ।
मूसे तोते टीड़ी वधैं, सात ईति विन सब सुख सधैं॥२२॥
फरस दंति[2] रस मीन[3] पतंग, रूप गंध अलि[4] कान कुरंग[5]।
एक एक वस खोवैं प्रान, पांचौं नहीं सुखी सो मान॥२३
व्यापै क्रोध लराई करै, व्यापै काम नारि वस परै ।
व्यापै मोह गहै दुख भूर, जहां नहीं सो सुख भरपूर॥२४
दोष अठारह जिनकैं नाहिं, गुन अनंत प्रगटे निजमाहिं।
अमर अजर अज आनँदकंद, ग्यायक लोकालोक सुछंद२५
व्यापै भूख जलै सब अंग, व्यापै लोभ दाह सरवंग ।
तन दुरगंध महादुखवास, जहां नहीं सोई सुखरास ॥ २६

---

१ द्रव्य क्षेत्र काल भाव भव । २ हाथी । ३ मछली । ४ भौंरा । ५ हरिण ।

दोहा ।

अमल अनाकुल अचल पद, अमन अवचन अकाय ।
ग्यानस्वरूप अमूरती, समाधान मन ध्याय ॥ २७ ॥

चौपाई ।

नरक पसू दोन्यौं दुखरूप, बहु नर दुखी सुखी नरभूप ।
तातैं सुखी जुगलिए जान, तातैं सुखी फनेस बखान ॥२८
तातैं सुखी सुरगकौ ईस, अहमिंदर सुख अति निस दीस।
सब तिहुँ काल अनंत फलाय, सो सुख एक समै सिवराय२९

दोहा ।

परम जोति परगट जहां, ज्यौं जलमैं जलबुंद ।
अविनासी परमातमा, निराकार निरदुंद ॥ ३० ॥
सिद्धनिके सुख को कहै, जानै विरला कोय ।
हमसे मूरख पुरुषकौं, नाम महा सुख होय ॥ ३१ ॥
द्यानत नाम सदा जपै, सरधासौं मनमाहिं ।
सिववांछा वांछाविना, ताकौं भौदुख नाहिं ॥ ३२ ॥

इति सुखबत्तीसी ।

विवेक-बीसी।

छप्पय।

जनम जरा मृति अरति, राग भै दोष मोह मद।
चिंता विस्मै नींद, भूख तिस सोग स्वेद गद॥
खेद अठारै चूरि, दूरि घातिया भगाए।
गुन अनंत भगवंत, छयालिस परगट गाए॥
देवाधिदेव अरहंत पद, सुर-नर-पति पूजा करैं।
वंदौं त्रिकाल तिहुँ जोगसौं, विघनपुंज छिनमैं हरैं॥१॥

छप्पय।

कीरतिकी रति नाहिं, मान कविता न करनकौं।
ग्यान गान गुदरान (?) जैन परवान धरनकौं॥
आपद संपद सबै, फबै पुग्गलके माहीं।
मैं निज सुद्ध विसुद्ध, सिद्ध सम दूजौ नाहीं॥
इम आठ पहर जाकी दसा, गुसा खात हू ग्यानलै।
द्यानत सोई ग्याता महा, कहा करै जमराज भै॥२॥
ग्यानकूप चिद्रूप, भूप सिवरूप अनूपम।
रिद्ध सिद्ध निज वृद्ध, सहज ससमृद्ध सिद्ध सम॥
अमल अचल अविकल्प, अजल्प, अनल्प सुखाकर।
सुद्ध बुद्ध अविरुद्ध, सुगुन-गन-मनि-रतनाकर॥
उतपात-नास-धुव साध सत, सत्ता दरव सु एकही।
द्यानत आनँद अनुभौ दसा, बात कहनकी है नहीं॥३॥
क्रोध कर्मपै करै, मूलसेती इह भानौं।
मान महा परचंड, त्रिजगपति हौं किह मानौं॥
कपट-खान परधान, स्वाद अनुभौ न बतावै।

लोभी दूजौ नाहिं, सुगुन धन दै न दिखावै॥
मैं करै चहूँ-गति गमनकौ, दया विसन लीनौ पकर।
तब करम साहके हुकमतैं, चढ़यौ मुकति गढ़ ग्वालियर॥४
तिय मुख देखनि अंध, मूक मिथ्यात भननकौं।
बधिर दोष पर सुनन, लुंज पटकाय हननकौं॥
पंगु कुतीरथ चलन, सुन्न हिय लोभ धरनकौं।
आलसि विषयनिमाहिं, नाहिं बल पाप करनकौं॥
यह अंगहीन किह कामकौ, करै कहा जग बैठकैं।
द्यानत तातैं आठौं पहर, रहै आप घर पैठकैं॥५॥
होनहार सो होय, होय नहिं अन-होना नर।
हरष सोक क्यौं करै, देख सुख दुःख उदैकर॥
हाथ कछू नहिं परै, भाव-संसार बढ़ावै।
मोह करमकौं लियौं, तहां सुख रंच न पावै॥
यह चाल महा मूरखतनी, रोय रोय आपद सहै।
ग्यानी विभाव नासन निपुन, ग्यानरूप लखि सिव लहै॥६
अरचैं नित अरहंत, सुगुरुपदपंकज चरचैं।
परचैं तत्त्वनिमाहिं; धरम कारज धन खरचैं॥
पात्र दान नित देहिं, लेहिं व्रत निरमल पालैं।
छुधित त्रिषित जन पोख, मोखमारगमल टालैं॥
धरमी सज्जनसौं हित धरैं, इन गृहस्थ थुति बुध करैं।
जे मोह-जालमैं फँसि रहे, ते चहुंगति दुख-दौं जरैं॥७॥
तत्त्व दोय परकार, सु-पर भाख्यौ जिन-स्वामी।
पर अरहंत सरूप, पुन्यकारन जग नामी॥
आप तत्त्व दो भेद, सहित विकलप निरविकलप।
निरविकलप निरबंध, बंध विकलप ममता जप॥

निजदरव भाव नोकर्मसौं, भिन्न सरूप विवेक है।
सरधान आन दुख दान सब, द्यानत अनुभौ टेक है॥८॥
निहचै अरु विवहार, ताल दो हाथन बाजै।
दरवतने परजाय, सौंठ गुड़ मारत भाजै (?)॥
उदै उद्यमी भाव, दोय कर मथ घी लहियै।
ग्यान क्रियासौं मोख, पंग अँध मिलि पथ गहियै॥
इमि स्यादवाद नै समझकै, तत्त्वज्ञान निहचै किया।
द्यानत सोई ग्याता पुरुष, बाहर मन अंतर दिया॥९॥
भोग रोगसे देखि, जोग उपयोग वढ़ायौ।
आन भाव दुख दान, ग्यानकौ ध्यान लगायौ॥
सकलप विकलप अलप, बहुत सब ही तजि दीनैं।
आनँदकंद सुभाव, परम समतारस भीनैं॥
द्यानत अनादि भ्रमवासना, नास कुविद्या मिट गई।
अंतर वाहर निरमल फ़टक, झटक दसा ऐसी भई॥१०॥

पंचभेद धर्मवर्णन।

एक दया उर धरौ, करौ हिंसा कछु नाहीं।
जति श्रावक आचरौ, मरौ मति अव्रतमाहीं॥
रतनत्रै अनुसरौ, हरौ मिथ्यात अँधेरा।
दसलच्छन गुन वरौ, तरौ दुख-नीर सबेरा॥
इक सुद्ध भाव जल घट भरौ, डरौ न सु-पर-विचारमैं।
ए धर्म पंच पालौ नरौ, परौ न फिरि संसारमैं॥११॥

सचा साधु।

सोई साँचौ साध, व्याध भै नाहीं जाकैं।
सोई साँचौ साध, आध व्यापै ना ताकैं॥

सोई साँचौ साध, बाध लाहेकौं जानै।
सोई साँचौ साध, लाध आपौ भौ भानै॥
सोई जोगी भोगी नहीं, ताहीकी ल्यौ लाइए।
सोई ग्याता ध्याता वही, सोई साता पाइए॥१२॥

छप्पय (सर्व लघु)।

सदय हृदय नित रहत, कहत नहिं असत वचन मुख।
दत अनदत नहिं गहत, चहत नहिं छिन मनमथ-सुख।
सब परिगह परिहरत, करत थिर मन वच तन तिय।
दुख सुख अरि मित जनम, मरन सम लखत हरख हिय॥
सहत सुबल धर परिसह सरब, दरब अमल पद मन धरत।
तजि थविरकलप जिनकलप तनि, धनि मुनिवर सिवतिय वरत॥१३॥

दयाविचार।

अंगहीन धन भी न, लीन बहु रोग लोग हुव।
जीवभाव परभाव, चहै जीवन न मरन धुव॥
तीन लोककौ राज लेय, नवि देय प्रान छिन।
यह विचार मनमाहिं, राजकौं हरै मोह विन॥
ऐसे प्यारे निज प्रानकौ, दान समान सु दान नहिं।
तप सील भाव सब ही रहैं, सुखसौं करुना ग्यान महिं१४
सुरग राग व्रत नाहिं, नरक अति दुखी भयंकर।
पसु विवेक नहिं रंच, मनुष तप विरत जयंकर॥
सो तैं नरभौ पाय, कियौ परमारथ कछु ना।
नाम तिहारौ बड़ौ, राय चेतन पर चछु ना॥
जिनधर्म रसायन पायकै, जिन अपना कारज किया।
सो धन्य पुरुष संसारमैं, तिन ही नर-लाहा लिया॥१५॥

वहिर भाव सब खोय, होय अंतर आतम सम।
परमातम लख भ्रात, बात यह बड़ी अनूपम ॥
देव धरम गुरु जान, आन सरधान अकंपत।
पूजा दान विधान, करौ सफली घर संपत ॥
अरु वहुत वात कहियै कहा, ग्यान क्रियामैं मन धरौ।
तुझ वीती रीती आव सब, अबै समझि कारज करौ ॥१६॥
एक बूंद लहि सीप, अमल मुकताफल होई।
एक बूंद गहि सर्प, महाविष उपजै सोई ॥
एक बूंद तरु कंदलि, सुद्ध कर्पूर विराजै।
ताते तए मँझार, तासकौ नाम न पाजै ॥
इम स्वाति बूंद बहु भेदसौं, संगति फल परवानियै।
तिम सुगुरु वचन नर भेदसौं, भेद अनेक पिछानियै ॥१७॥

एक सौ सैंतालीस शुभाशुभाक्रियाओंका त्याग।

मन वच तनसौं एक, एक मन वच इक मन तन।
इक वच तन इक वचन, एक मन जान एक तन ॥
जोगभेद ए सात, सात कृत कारित अनुमत।
उनंचास विध वरत,-मान सु अतीत अनागत ॥
इक सौ सैंतालिस सब क्रिया, पुन्य पाप ममता तजौ।
निज परमाँनद समरस दसा, आप आपमैं नित भजौ १८

कुकवि सुकवि वर्णन।

कुमति रात तम नैन, प्रगट मारग नहिं पावै।
कुकवि कुस्रुत रज डारि, अंध भौ-वन भरमावै ॥

१ केलेके वृक्षमें। २ पावै।

सुकवि ग्यान रवि जोति, मुकतिकौ पंथ चलावै।
भविनि राह दिखलाय, आप सिव पदवी पावै ॥
जिम मोह मिटै वैराग वढ़, सो वानी उर लेखियै।
धनि द्यानत तारन तरन जग, सुगुरु जिहाज विसेखियै १९

अन्तमंगल।

नमौं देव अरहंत, सिद्ध वंदौं जग ग्यायक।
आचारज उवझाय, साधु तीनौं सुखदायक ॥
पंचै समान न आन, ध्यान तिनकौ करि लीजै।
और उपाव न कोय, मनुष-भौ लाहो लीजै ॥
द्यानत विवेकवीसी सदा, पढ़ौ महागुनकार है।
निज आनँदमगन सदा रहौ, सब ग्रंथनकौ सार है ॥२०॥

इति विवेकवीसी।

१ भव्य जीवोंको। २ पंच परमेष्ठी।

भक्ति-दशक ।

सवैया इकतीसा ।

रिषभ अजित संभौ अभिनंदन सुमति,
पदम सुपास चंदाप्रभु जिन गाईयै ।
सुविधि सीतल श्रेयांस वासुपूज्य विमल,
अनंत धरम सांति कुंथु उर भाईयै ॥
मल्लि मुनिसुवरत नमि नेमि पारसजी,
वर्धमान सुखदान हिये आन ध्याईयै ।
आदि मेर दक्खिनके वर्तमान वीस कहे,
नाए सीस निस दीस रिद्धि सिद्धि पाईयै ॥ १ ॥

आदिनाथ तीर्थंकरके भवान्तर ।

जयवर्मा दिच्छावल विद्याधर महावल,
दूजे स्वर्ग ललितांग वज्रजंघ दानी जू ।
भोगभूमिमाहिं जाय सम्यक दरस पायौ,
स्रीधर ईसानमैं सुविधि भूप ध्यानी जू ॥
सोलहैं सुरग इंद्र वज्रनाभि चक्री भए,
सर्वारथसिद्धि बसे आदिनाथ ग्यानी जू ।
वसे मोखदेस जाय द्वादस अवस्था पाय,
गावै मनवचकाय द्यानत कहानी जू ॥ २ ॥
गरभ जनम तप ग्यान निरवान भोग,
लोग कहैं महाजोग धारयौ वन जाय जी ।
वादी सिच्छ विक्रिया अवधि स्रुत मनपर्जै,
केवली गनेस धरे को तज्यौ वताय जी ॥ ..

चामकी अपावन महा दुर्गंध नारि छारि,
मोख नारि कंठ लाई सीलवान राय जी ।
द्यानत चरित्र तेरे हमकौं पवित्र करौं,
वड़ेई विचित्र[३]राग विना[१]ल्यो बुलाय जी ॥ ३ ॥
चोरीकौं अघोरी थोरी वारमैं दया दयाल,
कियौ है निरंजन तैं अंजनके नामतैं ।
पांडौंसे[२] जुवारी अविचारी राजरिद्धि हारी,
किरपा तिहारी सिव धारी भव धामतैं ॥
कीचक सौ नीच चाही द्रौपदी सती जीवीच,
सौऊ तौ लियौ नगीचे धोय कीच कामतैं ।
द्यानत अचंभ कहा तपसौं वैकुंठ लहा,
अधम उधारन हौ स्वामी जी प्रनामतैं ॥ ४ ॥
धरममैं अलसानौ खान पानकौं सयानौ,
कहालौं वखानौं सव जानौ वात हमरी ।
चाहत हौं मोष वरयौ दोषनिकै कोष पोष,
कोटीधुज भयौ चाहौं गांठमैं न दमरी ॥
दया भक्ति नई कई (?) पामरी तिहारी दई,
घरमैं है उठौ नाहिं डारि लोभ कमरी ।
द्यानत कहाऊं दास यह तौ वड़ौ लिवास,
कीजियै उदास नास जाय आस चैमरी ॥ ५ ॥
वड़े धनवान इंद धरनिंद चक्रवर्त्ति,
जेऊ जाहि जाचैं ऐसे साहव हमारे हैं ।

१ अंजन चोर । २ पाण्डव । ३ मनमें । ४ समीप । ५ चमारिन नीच ।

फरसतैं न्यारे रस न्यारे रूप गंध न्यारे,
सवदतैं न्यारे पै सब जाननहारे हैं ॥
जैसा कोई भाव धरै तैसा सोई फल वरै,
आरसी सुभाव रागदोषसेती न्यारे हैं ।
पास कछु राखैं नाहिं दाता मनवांछितके,
ऐसे देव जानैं जिन पातिग विदारे हैं ॥ ६ ॥

सब सुख लायक सरब गेय ग्यायक,
सकल लोकनायक हौ घायक करनके।
मैन फैन नासत हौ नैन ऐन भासत हौ,
बैन हु प्रकासत हौ पापके हरनके ॥
कर्म भर्म चूरत हौ पर्म धर्म पूरत हौ,
हुनर बतावत हौ भौ-जल तरनके ।
द्यानतके ठाकुर हौ दासपै कृपा कर हौ,
हर हौ हमारे दुख जनम मरनके ॥ ७ ॥

देखौं जिनराज जिन राजकौ गुमान देखौं,
मान देखौ देव मान मान पाईयत है ।
जपके कियैतैं जप तपकौ निधान होत,
ध्यानके कियैतैं आन ध्यान ध्याईयत है ॥
नामके लियैतैं पर नामकी न रहै चाह,
चाहके कियैतैं चाह दाह घाईयत है ।
ऐसे जिन साहबके द्यानत मुसाहब,
भए हैं पद पूज दूज चंद गाईयत है ॥ ८ ॥

---

१ पातक पाप । २ इन्द्रिय विषय ।

अर्ह अरहंत अरिहंत भगवंत संत,
ब्रह्मा विष्णु सिव जिन वीतराग बुद्ध हौ ।
दाता देव देवदेव परब्रह्म सुरसेव,
मुनीस रिसीस ईस जगदीस सुद्ध हौ ॥
अनादि अनंत सार सरवग्य निराकार,
जित-मार निराधार साहब विसुद्ध हौ ।
भगवान गुनखान जती व्रती धनी नाथ,
राजा महाराजा आप द्यानत सुबुद्ध हौ ॥ ९ ॥
ग्रंथ हैं अपार सब केतक पढ़ैगा कब,
जामैं ना परैगी सुधि तामैं पचि मरि है ।
दान जोग लच्छ लच्छ कोरि जोरि पापनितैं,
तिनहीकी थापनितैं दुर्गतिमैं परि है ॥
संजम अराध तीनौं जोग साध पुन्य महा,
चित्तके चलायैं घट दुःकृतसौं भरि है ।
द्यानत जो पूछै मोहि प्रानी सावधान होय,
वीतराग नाव तोहि वीतराग करि है ॥ १० ॥
आवके बरस घनै ताके दिन केई गनै,
दिनमैं अनेक स्वास स्वासमाहिं आवली ।
ताके बहु समै धार तामैं दोष हैं अपार,
जीव भावके विकार जे जे बात बावली ॥
ताकौ दंड अब कहा लैन जोग सक्ति महा,
हौं तौ बलहीन जरा आवति उतावली ।
द्यानत प्रनाम करै चित्तमाहिं प्रीत धरै,
नासियै दया प्रकास दासकी भवावली ॥ ११ ॥

इति भक्तिदशक ।

धर्मरहस्यबावनी ।

मंगलाचरण । सवैया तेईसा (मत्तगयन्द)।

पंचनिमैं कहियै परमेसुर, पंच हु अच्छर नाम दियेतैं ।
'ओंनम'कार सबै सिर ऊपर, पंचनितैं उतपत्ति कियेतैं ॥
लोक अलोक त्रिकालमैं नाहिं, कोई तिनकी सम देख हियेतैं।
आठहि रिद्धि नवौं निधि सिद्धिकौं,द्यानत पाइयै गाय लियेतैं

भौं-अरि हंत भए अरिहंत, जपैं नित संतनिके दुख-त्राता।
सिद्धि भई निज रिद्धिकी सिद्धकौं,नाम गहैं लहैं सेवक साता।
साधत मोखकौं तीनहु साध मैं, साध अराधमैं द्यानत राता।
ए पद इष्ट महा उतकिष्ट सु, मंगल मिष्ट सुदिष्टके दाता ॥२॥

जा पदमैं सब केवली द्यानत, जानत सो अरहंत हियेतैं।
जा पद सुद्ध सबै जिय रिद्धिकौं, पाइयै सिद्धकौं नाम लियेतैं॥
जो गुण थानक सातके वंदिय, सूरि गुरू मुनि जाप दियेतैं।
घोर उदंगल संचक वंचक, पंचक मंगलचार कियेतैं ॥ ३॥

अरहंतस्तुति ।

गर्भ छमास अगाऊ रचे पुर, जन्म सुरासुर मेरु न्हुलावैं।
देव रिसीस विरागि करैं थुति, ग्यानविभौ हम कौन बतावैं॥
आपनि जातकी बात कहा सिव, बातनितैं परकौं पहुंचावैं।
पंचकल्यानक थानक द्यानत,जानत क्यौं न महा सुख पावैं४

केवलग्यान अखंडगवान, महासुखखान सुवीरज पूरा ।
द्यानत इंद नरिंद फनिंदनि, वंदित घाति किये चकचूरा ॥
चौतिस आठ नमौं गुन पाठ, दुवादस कोठनिकौं हित पूरा।
भौं-अरिहंत सु मो अरिहंतहु, नाम जपौं तुम ठाम हजूरा ।।५॥

१ आचार्य, उपाध्याय, सर्वसाधु ।

मानुषतैं थुति देव करैं बहु, देवनितैं अति इंद्र बखानैं ।
इंद्रनितैं स्रुतकेवलि भासत, केवलितैं गनजी अधिकानैं॥
ताहूपै ओर न पुव्व किरोरन, काल गये हम कौन समानैं।
द्यानत पाय परैं सिर नाय, विसेस बताय कहा हम जानैं॥६॥

आदिनाथस्तुति ।

आदि नरेसुर आदि मुनीसुर, आदि जिनेसुर आदिवतारी ।
सागर कोर किरोर अठारह, आरज रीति कुरीति निवारी ॥
स्वर्ग विलासके मोख निवासकै, राह चलाय कुराह विदारी।
द्यानत देव पसू नर को कहि,नारककौं सुखकारक भारी ॥७॥

चंद्रप्रभस्तुति ।

पावन बावन चंदन मोहके, द्रोहकी दाह हरै न हरै तू।
ताप लियैं रविरूप उजासक, सांत अरूप प्रकास करै तू ॥
द्यानत चंद असंखतैं जोति, अनंत गुनी प्रभु चंद धरै तू।
अद्भुत राग विरागि कहावत, रागनिके घर रिद्धि भरै तू॥८॥

शान्तिनाथस्तुति ।

सांति जिनेस निसेस दिनेसतैं, तेज विसेस सुरेस न बोलैं ।
कामपदी वर चक्र-विभौधर, आपनि रिद्धि कहैं किह तौलैं ॥
वंदत चर्न निकंदत मर्न सु, वर्न दुई भव-बंधन खोलैं ।
द्यानत हाथ गहौ किन नाथ, रहैं तुम साथ नहीं भव डोलैं।९।

नेमिनाथस्तुति ।

नेमकुमारसौं पेम किए बिन, केम कहौ सुख हे मन पावै।
आनँद-लायक भौ-गद-घायक,स्यौ-पद-दायक ताहि न ध्यावै।
तीरथ दूरि अनेकनि धावत, गावत जीभ कहा घसि जावै ।
द्यानत आप समान करै तोहि, चाहत और कहा सु बतावै १०

पार्श्वनाथस्तुति ।

पारसकौं भजि आरसकौं तजि, जा रसका रसता रस पावै।
कार सजाय सु आरस पाय, सुधारस काय-जरा जरि आवै॥
पारस पास कुधात विनास, सुधात प्रकास धरी न लगावै।
नागिनि नाग किए बड़ भाग सु,द्यानत ओर न कौन गिनावै॥

महावीरस्तुति ।

वीर महा महावीर जिनेसुर, गोतम मान-धनेसुर नाए।
बालक चालमैं सील धरेसुर, चंदना देखत बंध सुलाए॥
मैंडक हीन किए अमरेसुर, दान सबै मन-वांछित पाए।
द्यानत आज लौं ताहीकौ मारग, सागर है सुख होत सबाए॥

सिद्धस्तुति ।

सिद्धकीरिद्धि प्रसिद्ध कहा कहुं,सूच्छम औधहु ग्यानी न जानैं
लोक अलोक त्रिकाल समाय, गए किम थूलकौं गान प्रवानैं॥
बैन न आवत बुद्धि न पावत, चित्तमैं प्रीतिसौं नाम हु आनैं।
द्यानत ठानत जा पदकौं तप,सो पद आप ही दैं भगवानैं १३

आचार्यस्तुति ।

पंच अचार विना अतिचार, करावनहार सु पांच हु धारी।
चारि हु ग्यान दुआदस वान, रचैं परवान लहैं रिधि भारी।
वैकुल सुद्ध करैं प्रतिबुद्ध सु, द्यानत भव्यनके उपकारी।
तास अचारजके पद-वारज, मंगल-कारज धोक हमारी।१४।

उपाध्यायस्तुति ।

ग्यारह अंग सु चौदह पूरव, आप पढ़ैं सु पढ़ैं सब, यातैं।
जीव अपार परे भवधार, निहार विचार दयामय बातैं॥
आतम ग्यान सहैं दुख जान, करैं थुति ग्यान सुबुद्ध कहातैं।
द्यानत ते उबझायनि पायनि, गायनिके गुन गाय हियातैं १५

सर्वसाधुस्तुति ।

शीतल-भोग तज्यौ गहि जोग, संजोग वियोग समान निहारैं।
चंदन लावत सर्प कढावत, पुष्प चढावत खड्ग प्रहारैं॥
देहसौं भिन्न लखैं निज चिन्ह, न भिन्न परीसहसौं सुख धारैं।
द्यानत साधु समाधि अराधिकैं, मोह निवारिकैं जोति विथारैं
भू जल पावक वृच्छ सबै त्रसि, भेद सबै पुन आतुर पारैं।
शीत महातप भीषम भूधर, पावस वृच्छतलैं तिन टारैं।
पक्ष परैं नहिं ध्यान टरैं, तिय-वाहन चाहकी दाह विदारैं।
द्यानत साधु समाधि अराधिकैं, मोह निवारिकैं जोति विथारैं

श्रावकस्तुति ।

दंसन सुद्ध गहैं व्रत सुद्ध, त्रिकाल समायिककी विधि ठानैं।
पोसह ठान सचित्त अखान, तजैं निसि न्हान सु सील बखानैं॥
आरँभ छेद परिग्रह छंडन, पापकी बात कहैं न लिखानैं।
द्यानत भोजन लेहिं उदंड, इकादस भूमि सरावक चालैं १८
आठ धरैं गुनमूल सु आदर, वृत्त गहैं तप द्वादस साधैं।
चारि हु दान दियैं जलछान, न राति भखैं समता-रस लाधैं॥
ग्यारह भेद लहैं प्रतिमा सुभ, दर्शन ग्यान चरित्र अराधैं।
द्यानत त्रेपन भेद क्रिया यह, पालत टालत कर्म-उपाधैं।१९।

जिनवाणीस्तुति ।

देव गुरू सुभ धर्मकौं जानियें, सम्यक आनियें मोखनिसानी।
सिद्धनितैं पहलैं जिन मानियें, पाठ पढ़ैं हुजियें स्रुतग्यानी॥
सूरज दीपक मानक चंदतैं, जाय न जो तम सो तम हानी।
द्यानत मोहि कृपाकर दो वर,दो कर जोरि नमौं जिनवानी॥

ईषसघाद(?) न थाद महा जड़,काव्य-कला कवि सीस धरी है।
विस्त्र असक्त विरक्त किए तिन, देख विसेख क्रिया पसरी है॥
सूर बड़े सुनि साप चकैं तिन, दान झरी उघरी न धरी है।
द्यानत दास कहा यह बात, क्रिया तुमतैं सिव नारि वरी है॥

प्रतिमा-माहात्म्य।

वंदहु श्रीअरहंतके बिंबकौं, धात पखानके भव्य बनाए।
बैन बिना सिव राह बतावत, आसन ध्यान अनोपम गाए॥
द्यानत आन सिंगार न सोहत, मोहत तीन हु लोक सदाए।
पूजन गावन ध्यावन को कहि,देखत ही पद वांछित पाए॥२२

केवलग्यानि इहां न सुखेतमैं, सिद्ध प्रसिद्ध न आँखिन पेखै।
सूरि गुरू महावीर मनैं किय, साध नजीक न जाय विसेखै॥
बानि विसुद्ध लसै न धसै बुध, द्यानत सीख यही उर लेखै।
पंच-निकारक भौ जल तारक, प्रात उठैं प्रतिमा मुख देखै॥२३॥

दर्शनस्तुति।

इंद फनिंद नरिंदतैं कामतैं, रूप अनूप कह्यौ नहिं जाई।
दीपक मानिक चंदकी सूरकी, जोतितैं देहकी जोति सवाई॥
चंदतैं चंदनहूतैं कपूरतैं, पालेतैं सीतल बानि बताई।
द्यानत ए गुनकौ नहिं पार सु, केवलग्यानिकी कौन बड़ाई२४

रंचक राग नहीं जिनरायकै, सर्व परिग्रह त्याग दिया है।
दोष कहा कहियै बिन कारन, आयुध एक न संग लिया है॥
साम्यतया निज ग्यान भया सब,कर्म विनास प्रकास किया है।
आनँदकंद महा सुख साहब, द्यानतनैं तकि याद किया है २५

ध्यान।

पाँवनिसौं कछु पावनौं नाहिं है, याहीतैं आवन जान तजा है।
हाथनिसौं करना कछु काम न,लंबे किए कर आप भजा है॥

आखिनसौं सब देखि लियाँ प्रभु, नाक अनी लव ध्यान सजा है
कानतिसौं सुननौं न लियौ वन, बांधि निराकुल ध्यान धजा है

अवांछिकदशा।

लोगनिसौं मिलनौं हमकौं दुख,साहनिसौं मिलनौं दुख भारी।
भूपतिसौं मिलनौं मरनैं सम, एक दसा मोहि लागत प्यारी॥
चाहकी दाह जलैं जिय मूरख, वे-परवाह महा सुखकारी।
द्यानत याहीतैं ग्यानी अवंछक, कर्मकी चाल सबै जिन टारी

महावीर भगवानकी वन्दनाके लिए श्रेणिकका गमन।

ग्यान प्रधान लहा महावीरनैं, सेनिक आनँद भेरि दिवाई।
मत्त मतंग तुरंग बड़े रथ, द्यानत सोभत इंद्र सवाई॥
बांभन छत्रिय वैस जु सूद, सु कामिनि भीर घटा उमड़ाई।
कान परी न सुनै कोऊ बान सु, धूरके पूर कला रवि छाई २८

आदिनाथकी ध्यानावस्था।

ग्रीषम काल जलै भुवि जाल,खरे गिरि सीस सिलापर स्वामी।
ईंधन कर्म उदासकी पौनतैं,ध्यानकी आगि जलै अभिरामी॥
ता निकलौ कन जाम उभै दिन,सीस दिपै छविसौं रवि नामी।
आदि जिनेसुर हौ परमेसुर, वंदत पायँ करौं सिवगामी॥२९

चार प्रकारके मनुष्य।

द्यानत उत्तम आतम चिंत, करैं न डरैं जमराज बलीतैं।
मध्यम पूजन दान करैं, निकरैं दुरगीत (?) अँधेर गलीतैं॥

१—कायोत्सर्गायताङ्गो जयति जिनपतिर्नाभिसूनुर्महात्मा,
मध्याह्ने यस्य भास्वानुपरि परिगतो राजते स्मोग्रमूर्तिः।
चक्रे कर्मेन्धनानां अतिबहुदहतो दूरमौदास्यवात-
स्फूर्जत्सध्यानवह्नेरिव रुचिरतरः प्रोद्गतो विस्फुलिङ्गः॥
—पद्मनन्दिपञ्चविंशतिका।

अद्धम जी रुजगार बखानत, ठानत पेटमैं आगि बलीतैं।
अद्धम अद्धम पाप उपार्जत, गाज उठैं मुख बात चलीतैं॥३०॥

भावना चतुष्क।

थावर जंगम जीव सबै, समता धरि आप समान बखानै।
दर्सन ग्यान चरित्त गुनाधिक, देख विसेख विनै अति ठानै॥
भूख त्रषादि महा दुखवंतनि, संत भयौ करुना मन आनै।
साम्य दसा विपरीतनसौं बुध, द्यानत चार विचच्छन जानै

ज्ञाताको उपदेश।

मैल भरयौ दुरगंध महाजल, गंग सुगंग प्रसंग हुएतैं।
काठ अपार निहारि भयौ दव, लागत नैंकसी आग फुएतैं॥
द्यानत क्यौं नहिं देखहु वारिधि, वारिदकौ जल बूँद चुएतैं।
आतमतैं परमातम होत है, वाती उदोत है दीप बुएतैं॥३२॥

जाहीकौं ध्यावत ध्यान लगावत, पावत हैं रिसि पर्म पदीकौं।
जा थुति इंद फनिंद नरिंद, गनेस करैं सब छांड़ि मदीकौं॥
जाहीकौं वेद पुरान बतावत, धारि हरै जमराज वदीकौं।
द्यानत सो घट माहिं लखौ नित, त्याग अनेक विकल्प नदीकौं

ज्ञातादशा।

धातनके घर नीव महा वर, सोच नहीं छिनमैं ढहिजातैं।
पुत्र पवित्र सु मित्र विचित्र न, चित्र जहां लखिए जम खातैं॥
द्यानत इंद फनिंद नरिंदकी, संपत कंपत काल-कलातैं।
हांनन दीननकै सुख कौंन, प्रवीन कहा विषयारस रातैं?।३४।

१—सत्त्वेषु मैत्री गुणिषु प्रमोदं क्लिष्टेषु जीवेषु कृपापरत्वम्।
माध्यस्थ्यभावं विपरीतवृत्तौ सदा ममात्मा विदधातु देव॥
—अमितगतिसूरि।

बात कहैं न गहैं हट रंचक, वाद विवाद मिटै सब यातैं।
कान सुनैं बहु बान मुनैं लह, हंस सुभाव सुकारज रातैं॥
बोलत डोलत पापनि छोलत, खोलत मोख किवार धकातैं।
द्यानत संतनकी यह रीत, दया रस पीत अनीतनि यातैं।३५।

मूढ़दशा।

पापकी बातनि प्रातकी प्रातलौं, जापकी बात न एक घरी हू।
खानकौं आप सु बाप सुता सुत, दानके भाव न नैंक लरी हू॥
भौन चुनावनकौं गहना धरि, जैनके भौन न ईंट परी हू।
ता पर चाहत हौ सुख द्यानत, जानत मोहिन मौति मरी हू॥
भूख गई घटि, कूख गई लटि, सूख गई कटि, खाट पर्यौ है।
वैन चलाचल नैन टलावल, चैन नहीं पल, व्याधि भर्यौ है॥
अंग उपंग थके सरवंग, प्रसंग किए जन नाक सर्यौ है।
द्यानत मोह चरित्र विचित्र, गई सब सोभ न लोभ टर्यौ है॥
बालक बालखियालिनि ख्याल,जुबानि त्रियान गुमान भुलानैं
मे घरबार सबै परिवार, सरीर सिँगार निहार फुलानैं॥
वृद्ध भए तन वृद्धि गए खसि, सिद्धत काम न खाट तुलानैं (?)।
द्यानत काय अमोलक पाय, न मोख दुवार किवार खुलानैं॥
प्रात उठैं सुमथैं विकथा रस, कै जल छान तमाखु भरावैं।
रात ही जात तगाद उगाहनि, भोजन त्यार भए हिग खावैं॥
सोच करैं रुजगारके कारन, काम कहा किहके घर जावैं।
संकट चूरत मंगल मूरत, द्यानत पारसनाथ न गावैं ३९
जामहिं खाध किधौं विटिता, सठ ता रुजगार लगोई रहै है।
जामहिं नित्त नफा सब जानत, ताहि लग्यौ यह नाहिं कहै है॥
स्वारथ देस विदेस भमै धन, कर्मवसात लहै न लहै है।
द्यानत आतम स्वारथ है ढिग,आलस त्याग करौ न चहै है४०

हाट बनायकैं बाट लगायकैं, टाट बिछायकैं उद्यम कीना।
लैनकौं बाढ़ सु दैनकौं घाट, सुबाँटनि फेरि ठगे बहु दीना॥
ताहूमैं दानकौ भाव न रंचक, पाथरकी कहुँ नाव तरी ना।
द्यानत याहीतैं नर्कमैं वेदनि, कोर किरोरन ओर सही ना ४१
खानकौं आतर ध्यानकौं कातर, मान महातर-डार चढ़े हैं।
दैनकौं आरस लैन महा रस, बैन कहा रस रीति गढ़े हैं॥
काम अनाहक दामके गाहक, राम अचाहक चाह मढ़े हैं।
द्यानत या कलिकालके पंडित, ग्यान नहीं उर, पाठ पढ़े हैं४२

उपदेश।

क्रोध फसे गति नर्क वसे दुख,-नाग डसे फिर कोप कला रे।
माया लए तिरजंच गए बहु, कष्ट सए फिर माया बला रे॥
द्यानत कामके भावनि भाव, निबाह न होय कुलोभ जला रे।
त्यागि कषाय छिमा सुखदाय, सुनाय कहूं अब दाव भला रे४३
नर्कनिमाहिं कहे नहिं जाहिं, सहे दुख जे जब जानत नाहीं।
गर्भमझार कलेस अपार, तलैं सिर था तब जानत नाहीं॥
धूलके बीचमैं कीच नगीचमैं, नीच क्रिया सब जानत नाहीं।
द्यानत दाव उपाव करौ जम, आवहिगौ अब जानत नाहीं४४

उद्यम।

अंबर डार अडंबर टार, दिगंबर धार सु संबर कीना।
मंगल आस उदंगल नास, सु जंगल वास सुधातम भीना॥
कोह निवारिकैं लोह बिडारिकैं, मोह बिदारिकैं आपप्रवीना।
कर्मकौं भेदिकैं पर्मकौं वेदिकैं, **द्यानत** मोखविषैं चित दीना४५
निंदक नाहिं छमा उरमाहिं, दुखी लखि भाव दयाल करैं हैं।
जीवकौ घात न झूठकी बात न, लैंहि अदात न सील धरैं हैं॥
गर्व गयौ गल नाहिं कहूं छल, मोम सुभावसौं जोम हरैं हैं।
देहसौं छीन हैं ग्यानमैं लीन हैं, **द्यानत** ते सिवनारि वरैं हैं४६

द्वैवतैं आय बड़ा कुल पाय, हुए भुवि राय सदा सुख कीनैं।
सेवग जोगनि जाचक लोगनि, दान सबै मनवंछित दीनैं॥
त्यागकैं मौन भये सिव सौन, करैं थुति कौन महा रस भीनैं।
साधके पायनमैं सिर नाय, कहैं जस होत हैं पापतैं हीनैं॥४७

साधुके अष्टगुण।

भूमि समान छमा गुनवान, अकास सरूप अलेप रहे हैं।
निर्मल ज्यौं जल आग ज्यौं तेज, सदा फलदायक वृच्छ गहे हैं॥
पापमहातमनासक सूरज, आनँददायक चंद लहे हैं।
मेघ समान सबै विध पोषक, आठ महा गुण साध कहे हैं ४८
जो दुख देख विसेख दुखी जन, तामहिं धीरजसौं थिर ठाढ़े।
ग्रीषम सैल सिला तरु पावस, सीतमैं चौपथ भावनि गाढ़े॥
वज्र परैं न समाधि टरैं निज, आतम लौं रत आनँद बाढ़े।
द्यानत साधनकौ जस को कहि, वंदत पाप महा वन दाढ़े ४९
एककौं देखनि जात सबै जग, केई देखैं केई देख न पावैं।
एक फिरैं नित पेटके काज, मिलै नहिं नाज दुखी बिललावैं॥
सो यह पुन्यरु पाप प्रतच्छ, न राग विरोध सुधी सम भावैं।
द्यानत आतम काज इलाज, सुखी जनमाहिं सुखी कहलावैं
बैठि सभा रस रीति सुनाय, कला कवि गायकैं मूढ़ रिझावैं।
ऐसे अनेक भरे भुवि लोकमैं, आपनि डूबत और डुबावैं॥
ते धनि जे परमातम ग्यान, बखान सुमारगमाहिं लगावैं।
द्यानत ते विरले इस कालमैं, आपमैं आप जथारथ ध्यावैं५१
धर्म पचास कवित्त उभैजुत, भक्ति विराग सुग्यान कथा है।
आपनि औरनिकौं हितकार, पढ़ौ नर नारि सुभाव तथा है॥
अच्छर अर्थकी भूल परी जहाँ, सोध तहां उपकार जथा है।
द्यानत सज्जन आपविषैं रत, हो यह वारिधि शब्द मथा है ५२

इति धर्मरहस्यबावनी।

दान बावनी।

छप्पय।

वंदौं आदि जिनिंद, वृत्त-तीरथ परगास्यौ।
नमौं स्रियांस नरिंद, दान-तीरथ अभ्यास्यौ ॥
दोऊ चक्र अवक्र, धर्मरथकौं लहि नामी।
सिवपुर पुर वहु गए, जाहिं जे हैं आगामी ॥
ए बड़े पुरुष संसारमैं, कौन महातम ऊचरै।
सोई जानौ मानौ चतुर, विरत दान रुचिसौं करै ॥१॥

सवैया इकतीसा।

सबके अंतरजामी तीनलोकपति स्वामी,
आदिनाथ प्रभु नामी गामी सिव भौनके।
तिनकौं दियौ अहार हथिनापुर मझार,
ताके गुन कहैं सार ऐसे गुन कौनके ॥
उज्जल सरद घन चंद जस व्यापि रह्यौ,
लोकमैं सुगंध फैलि जाय चलैं पौनके।
तेई सिरीअंस मोहि, लोभकौ विधंस करौ,
धरौ हियै ग्यान हरौ दुख आवागौनके ॥ २ ॥
कुरुवंसी-भूप-मनिमालमधि नायक हैं,
सिरीअंस दानेस्वर दानीमैं गिनाईयै।
वार मासके उपास किये आदिनाथ तास,
दियौ जी गिरास जास कैसैं जस गाईयै ॥
आनँद भयौ अकास वरसे रतन रास,
तवतैं पृथ्वीकौं वसुधा कहि बुलाईयैं।

सो दिन अजौं लौं विद्ध अखैतीज है प्रसिद्ध,
कौनसी न रिद्ध सिद्ध नाम लेत पाईयै ॥ ३ ॥

सवैया तेइसा। (मत्तगयन्द)

दुल्लभ मानुष भौ सु विभौ जुत, पाय कहा गरवाय अनारी।
आव कला कमला पट पेखनि, देखनिकौं चपला उनहारी ॥
लोभ महा तम कूप परे तिन, देखि दया हम चित्त विचारी।
तास निकारन कारन वैन, कहैं पकरौ निकरौ मतिधारी ॥४॥
उत्तम नारि सपूत कुमार, भयौ धन सारतैं मोह वढ़्यौ है।
वार न पार समुद्र विषैं सुभ, दान विधान जिहाज चढ़्यौ है ॥
खेवट भावसौं प्रीति भई तव, भीति गई सुख राह पढ़्यौ है।
धर्म जिहाज इलाज विना, दुख वारिधितैं जिय कौन कढ़्यौ है

अडिल्ल।

वहुत जीव हितकार, सार धन संग्रहा।
पात्र दान विधि जान, सफल गिरही कहा ॥
पावै सुभगतिद्वार, धारकैं दानकौं।
ज्यौं वारिधि तरि जाय, पायकैं यानकौं ॥ ६ ॥

सवैया तेईसा।

देस विदेस कलेस अनेक, करोर उपाय कमाय रमा रे।
नारि सुहात न पूत ददात न, आपनि खात न जोरि जमा रे ॥
ऐसौ महा धन प्यारौ लहा जन, संत कहैं सुनि वैन हमारे।
ता इक दान सु गति(?) विना दुख, चेति अवै फिरि नाहिं समारे

कवित्त।

भोजन आदिमाहिं जो जन धन, नित प्रति खात जात है सोय।
ताकौ सुपनै विषै न दरसन, ताते तए वूँद अवलोय ॥

मुनिवर दान जोग सुभ खरच्यौ, सोई दरव लहै परलोय।
इक वट बीज सुखेत बोयकैं, फल अनेक पावै सब कोय॥८॥
जिन अहार दीनौं मुनिवरकौं, तिननैं धर्‌यौ मोखपुर माहिं।
निज हू अमर नगर घर कीनौं, उच्च संगतैं धोखा नाहिं॥
जैसैं राज चुनैं जिनमंदिर, तिनकै साथहि ऊरध जाहिं।
देहिं दान अभिमान लोभ तजि, धन चंचल है ढरती छाहिं९

अडिल्ल।

जो थोरौ हू दान भगतिसौं देत है।
साधुनिकौं सु अनंतगुनौ फल लेत है॥
जैसैं खेतमझार बीज कछु डारियै।
तातैं अति बहु पुंज प्रतच्छ निकारियै॥ १०॥

कवित्त।

जिननैं दान दियौ साधुनिकौं, निरमल मन वच काय लगाय।
तिननैं पुन्य बीज उपराज्यौ, जातैं भौ वारिधि तरि जाय॥
ताकी इंद करै अभिलाषा, कब मैं देहुं मनुज भव पाय।
तू क्यौं ढील करत है प्रानी, जानी वात देहि मन लाय॥११॥

अडिल्ल।

मोख हेत रतनत्रै, मुनिवर धरत हैं।
काय सहाय उपाय, सु भोजन करत हैं॥
मुनिकौं दान भगतिसौं, जिन स्रावक कर्‌यौ।
तिन गृह जननैं, सिव मारगमैं लै धर्‌यौ॥ १२॥

कवित्त। (३१ मात्रा)

जप तप संजम सील विविध वृत, स्रावककैं संपूरन नाहिं।
आरंभ झूठ वचन चंचल मन, पाप पुंज बाढ़ै घर माहिं॥

दान एक पूरौ सब गुनमैं, देकैं सुरग लोकमैं जाहिं।
मन वच काय सुद्ध ह्वै दीजै, कीजै नहिं वांछा तिह ठाहिं १३
भौन-सैलतैं दान तनक जल, सरता जेम बढ़ै विसतार।
लछमी सलिल वढ़ै दिन दिनप्रति, सुजसफेन सिवदधिलग सार
सम्यकवंत पुरुष सरधासौं, दियौ दान सुभ पात्र विचार।
वात कहत नहिं वस्तु लहत है, 'देय लेय' परगट व्यौहार १४
धरि परिगहकौ भार माहिं नहिं, थिरता परमातमकौ ग्यान।
सिव विन तीनौं अर्थ सधत हैं, साधैं साध चार सुख दान॥
चारौं हाथ बीच हैं जाके, देय प्रीतिसौं पात्रै दान।
"भवन दान वन माहिं तपस्या," यह तौ परगट वात जहान१५

सोरठा।

सिव-पुर-पंथी साध, नाम रटै पातग हटै।
चारौं दान अराध, तिरै जगत अचिरज कहा॥१६॥

सवैया तेईसा। (मत्तगयन्द)

भौन कहा जहां साध न आवत, पावन सो भुव तीरथ होई।
पाय प्रछालकैं काय लगायकैं, देहकी सर्व विथा नहिं खोई॥
दान कर्‌यौ नहिं पेट भर्‌यौ वहु, साधकी आवन वार न जोई।
मानुष जोनिकौं पायकैं मूरख, कामकी वात करी नहिं कोई१७
देव कहा जहां भाव विकार, भजौ कि न देव विरागमई है।
साधु कहा जिसकैं नहिं ग्यान, गुरू वह जास समाधि भई है॥
धर्म कहा जिसमैं करुना नहिं, धर्म दया अघरीति खई है।
दानविना लछमी किह कारन, 'हाथ दई तिन साथ लई है'१८

कवित्त। (३१ मात्रा)

गुन बहु भए ग्यान नहिं पायौ, बहुत भोग नहिं वृत्त लगार।
धनकौं पाय दान नहिं दीनौं, गुन धन भोगनिकौं धिक्कार॥

तीन जगत वस करन हरन दुख, धरम मंत्र न जपै सुखकार।
'बहते पानी हाथ न धोवें', फिरि पछिताय होय का सार॥१९॥
पात्र दानमैं जो धन खरचै, इह पर भौ सुख विविध प्रकार।
आप देस परदेस भोगवै, राजलच्छमी कहियै सार॥
दान विना इह भौमैं दारिद, पर भौ दुरगति दुःख अपार।
दान समान न आन पुन्य कछु, देहि ढील मति करै लगार२०
काय पायकैं व्रत नहिं कीनैं, आगम पढ़ि नहिं मिटी कपाय।
धनकौं जोरि दान नहिं दीनौं, कहा काम कीनौं इह आय॥
लीनौं जनम मरनकै कारन, रतन हाथसौं चलौ गमाय।
तीनौं वात फेरि कव पावै, सास्त्रग्यान धन नर-परजाय २१

सवैया इकतीसा (मनहर)।

पापकौं इलाज त्याज पुन्य काजके समाज,
खात हैं परायौ नाज आनँदकौ खेत है।
ग्यानकौं जगावत है मानकौं भगावत है,
पारकौं लगावत है, जैनधर्म केत है॥
मानुष जनम पाय, तप कीजै मन लाय,
भौसागर सुखसेती, तरिवेकौं सेत है।
बुरौ धन घरमाहिं, पूजा दान वनै नाहिं,
दुर्गतिके दुख होहिं तासौं कहा हेत है॥ २२॥

अडिल्ल (२१ मात्रा)।

श्रीजिनचरनकमलकी पूजा ना करी।
देखि संयमी दान भगति नहिं आदरी॥
धाममाहिं वसि काम, कहा तैनैं किया।
गहरे जलमैं, नरभौकौं पानी दिया॥ २३॥

भौ सागरमैं भमत, कठिन नरभौ लहै।
भौ-तन-भोग विराग, धन्य जो तप गहै॥
जौ न वनै तौ घरमैं, अनुव्रत पालियै।
पात्रदानविधि, दिन दिन अधिक संभालियै॥२४॥
चल्यौ धामतैं गाम, वहुत तोसा लिया।
राहमाहिं दुख नाहिं, सदा सुख तिन किया॥
भवतैं पर-भव जात, दान व्रत जो धरै।
अद्भुत पुन्य उपाय, साहवी सो करै॥ २५॥

सवैया तेईसा (मत्तगयन्द)।

या जगमैं नर भोग विथारन, कीरत कारन काम वनावै।
पाप उदैमहिं जोग वनै नहिं, आपकौं दुःखकी वेलि बढ़ावै॥
दैनके भाव सदा अति उत्तम, दान दियैं वहु-पुन्य कमावै।
दानकौं देत है भाव समेत है, सो जगमैं जनम्यौ कहलावै २६

गीता।

निज सत्रु जो घरमाहिं आवै, मान ताकौ कीजियै।
अति ऊंच आसन मधुर वानी, वोलिकैं जस लीजियै॥
भगवान सुगुन-निधान मुनिवर, देखि क्यौं नहिं हरखियै।
पड़गाहि लीजै दान दीजै, भगति वरखा वरखियै॥२७॥

कुंडलिया।

दान देत है साधकौं, नित प्रति प्रीति लगाय।
जा दिन मुनि आवैं नहीं, दुख मानै अधिकाय॥
दुख मानै अधिकाय, पुत्र मृतुतैं अति भारी।
अहो कर्म दुर्भाग्य, वात तैं कहा विचारी।
विफल आज दिन गयौ, भयौ नहिं धर्महेत है।
चित उदार तजि लोभ, साधकौं दान देत है॥ २८॥

सवैया इकतीसा।

साधनकौं दान देय सो तौ फल-पुंज लेय
ताकौं लखि अभिलाखै सो भी फल पावै है।
चंदकांत मनि देखौ सुधा झरै चंद देखि,
भावना ही फलै जो कै नीकै मन भावै है॥
धन होतैं साध पाय दान देत जो न मूढ़,
धरमी कहावै आप मायाकौं वढ़ावै है।
विजली कपट परलोक सुख-गिरि फोड़ै
जापै दान वनि आवै मोहि सो सुहावै है ॥ २९॥

अडिल्ल (२१ मात्रा)।

ग्रास अर्ध चौथाई नित प्रति दीजियै।
जथा सकति ज्यौं आपन भोजन कीजियै॥
आवत है जम भील न ढील लगाइयै।
मनवांछित धन साध समा कव पाइयै॥ ३०॥

दोहा।

मिथ्याती पसु दानरुचि, भोग भूमि उपजंत।
कल्पवृच्छ दस सुख लहै, क्यौं न लेत नर संत॥३१॥

कवित्त (३१ मात्रा)।

जैसैं खान निधान पाय तजि, और ठौर खोदै अग्यान।
तैसैं घरमैं दैन जोग सव, नैननि देखै मुनि गुन खान॥
दानबुद्धि जाकैं नहिं उपजै, तासौं महा मूढ़ को आन।
पुन्य जोगतैं द्रव्य कमायौ, सो न लगायौ उत्तम थान॥३२॥
ज्यौं नर रतन गमाय जलधिमैं, ढूढ़ै भागौं पावै कोय।
त्यौं चिरकाल भमत भवसागर, कठिन मनुष भौ प्रापति सोय

दैननि जोग सँजोग दरवकौ, दान देय नहिं मूरख जोय।
चढ़ै सछिद्र जिहाज रतन लै, सागर पार कौन विधि होय ३३

चौपाई।

जो धनवान करै नहिं दान, इह भौ जस पर भौ सुख खान।
ता नरकौ साहव है और, सेवक भेजौ रच्छा-ठौर॥ ३४॥

सवैया तेईसा।

संजममैं तन-भोग लखै पन, इंद्रनसौं रन जीतवौ चाहै।
ध्यान विषै मन चाह रहै वन, कोप नहीं छन सांत दसा है॥
पूजा विषैं मन पोख दुखी जन, दान विषैं धनकौं निरवाहै।
धर्म लगै लछमी अपनी वह, आन लहै धन औरनका है।३५।
पुन्य घटै विघटै लछमी घर, दान दियैं न घटै धन भाई।
सोच निवारहु कूप निहारहु, काढ़ततैं जल बाढ़त जाई॥
पात्रकौं दान निरंतर ठान, हियैं सरधान महासुखदाई।
खाय गयौ वह खोय गयौ नर, लेय गयौ जिह और खिलाई३६

कवित्त (३१ मात्रा)।

खान पान पट भौन गौनमैं, लोभ अकीरतवान बखान।
पूजामाहिं नाहिं जल फल सुभ, दीजै नीरस दानविधान॥
इह परलोक थोक सुख चूरै, महालोभ पूरै दुखदान।
लोभी होइ लोभ तजि भाई, देय हाथ ले साथ निदान॥३७॥

सवैया तेईसा।

लच्छि भई न भई घरमैं, नरमैं उपगार महा मन ढीलौ।
जन्म भयौ न भयौ तिनकौ, जिनकौ चित नाहिं दया रस गीलौ
संखकी भांति मुए जगमैं, जिनकौ कोऊ नाम सुनैं नहि कीलौ।
दोष नहीं पर नाउ न लैं जन, लेत हि होत अहारकौ हीलौ ३८

रोडकी ।

स्वान पेट निज भरै, भूप हू पेट भरै है ।
कहा बड़ाई भई, खाय दुरगंध करै है ॥
पात्रदान नित देइ, लेइ नर-भौ-फल तेई ।
अंत रहै कछु नाहिं, नाम तिनकौ जग लेई ॥ ३९ ॥

कवित्त (३१ मात्रा) ।

इंद फनिंद नरिंदन स्वामी, गामी सिवमारगके साध ।
लोक अलोक सकल परकासत, निरमल रतनत्रै आराध ॥
तिनकी थिरता होत असनतैं, दै भोजन करि भगति अगाध ।
यह गृहि-धर्म कौन नहिं चाहै, एक दान बिन सबै उपाध ४०

अडिल्ल ।

धरा धरामैं द्रव्य, पैंड़ इक ना टलै ।
परिजन मरघट थाप, आप घरकौं चलै ॥
भली बिचारी लकड़ी, जो साथैं जलै ।
आगैं दीरघ राह, धरम कीनौं फलै ॥ ४१ ॥
जस सौभाग्य सरूप, सूर सुख कुल भला ।
जाति लाभ सुभ नाम, विभौ पंडित कला ॥
सरव संपदा पात्र,-दानतैं पाइयै ।
जतन करौ किन जीव, बहुत क्या गाइयै ॥ ४२ ॥

सवैया तेईसा ।

भौन करौं सुत नारि बरौं, धन गाढ़ि धरौं कठिनी महिं खैहौं ।
काम घने इतने करने, अब दान सदा मनवंछित दैहौं ॥
लोभ मलीन प्रवीन लखै निज, जानहुंगा जब ही कर लैहौं ।
सोचत सोचत आय गई थिति, तौ न कहै अबकैं मरि जैहौं ४३

सूमकौ जीवन है जगमें कहा, आप न खाय [illegible] ।
दर्वके बंधनमाहिं बंध्यौ दृढ, दानकी बात [illegible] ॥
तातैं बढ़ौ गुन कागमें देखिये, जात कुठायकै [illegible] ।
लोभ बुरौ सब औगुनमें इक, ताहि तजै [illegible] ॥
दीनकौं दीजियै होय दया मन, मीतकौं दीजियै प्रीति [illegible] ।
सेवक दीजियै काम करै बहु, साहब दीजियै आदर पावै ॥
सत्रुकौं दीजियै बैर रहै नहिं, भाटकौं दीजियै कीरति गावै ।
साधकौं दीजियै मोखके कारन, हाथ दियौ न अकारथ जावै ॥

अडिल्ल ।

दाता पुरुषनि पास, नाम ह्वै जात है ।
रहौं सूर घर माहिं, सुहाग बिलात है ॥
विद्या पंडित धाम, सौति दुख को सहै ।
लछी[1] कृपनकौं पाय, महा साता गहै ॥ ४६ ॥

कवित्त (३१ मात्रा) ।

उत्तम पात्र साध सिवसाधक, मध्यम पात्र सरावग सार ।
जघन पात्र समकिती अविरती, बिन समकित कुपात्र व्रत-धार ॥
समकित विरत-रहित अपात्र हैं, पांच भेद भाखे निरधार ।
उत्तम मध्यम जघन भेदसौं, एई पंद्र पात्र बिचार ॥ ४७ ॥
उत्तम मध्यम जघन पात्रतैं, तीनौं भोगभूमिसुख होय ।
लहै कुभोग कुपात्र दानतैं, दान अपात्र दियैं दुख होय ॥
बीज सु खेत डारि फल खइयै, ऊसर डारि बीज मति खोय ।
तातैं मन वच काय प्रीतिसौं, पात्रदान दीजौ सब कोय॥४८॥

१ शूरं त्यजामि वैधव्यादुदारं लज्जया पुनः ।
सापत्न्यात्पण्डितमपि तस्मात्कृपणमाश्रये ॥

साख्र अभै आहार ओषधी, चारौं दान वड़े संसार ।
निहचैं सुरग मुकतिके दाता, दाता भुगता देखि निहार ॥
गो गज राज वाजि दासी रथ, कनक भूमि तिल मंदिर नारि।
दसौं कुदान पापके कारन, देत लेत सो नरक मझार ४९
जो दीजै चैत्याले कारन, भूमि आदि वहु वस्तु अपार।
तामैं श्रीजिनविंव विराजैं, चमर छत्र सिंहासन सार ॥
पूजा करैं पढ़ैं जिनवानी, चारौं संघ मिलैं निरधार ।
वहुत काललौं वढ़ै जैनमत, धरम मूल पर-भौ-सुखकार।५०।
दान वखान किया हमनैं यह, कृपन दुःख सवकौं सुखदाय।
पाय चमेली अलिगन गुंजै, काग न जानैं गुन समुदाय ॥
चंद किरनितैं कुमुदनि विकसै, पाथर कौन भांति हरखाय।
भान तेज दसदिसि उजियारौ, एक उलू दुख नाहिं उपाय५१
रतनत्रै आभरन विराजैं, वीरनंदि गुरु गुनसमुदाय ।
तिनकै चरन कमल जुग सुमिरत, भयौ प्रभावग्यान अधिकाय।
तव श्रीपद्मनंदिनैं कीनैं, दान प्रकास काव्य सुखदाय ।
पद्मनंदिपद वंदि बनाई, दानवावनी द्यानतराय ॥५२॥

इति दानवावनी ।

चारसौ छह जीवसमास ।

दोहा ।

वंदौं नेमि जिनंद पद, सव जीवन सुखदाय ।
वालब्रह्मचारी भए, पसुगनवंध छुड़ाय ॥ १ ॥
जीवसमास अनेक विध, भाखे गोमटसार ।
नेमिचंद गुरु वंदिकैं, कहूं एक अधिकार ॥ २ ॥

चौपाई ।

पृथ्वीकाय दुभेद वखान, कोमल माटी कठिन पखान ।
पानी पावक पौंन विचार, नित्य इतर साधारन धार ॥३॥
सातौं सूच्छम सातौं थूल, इनकै चौदै भेद कवूल ।
कहीं प्रतेककाय दो जात, परतिष्ठत अप्रतिष्ठत भ्रात ॥४॥

दोहा ।

दूव वेलि छोटा विरख, वड़ा विरख अरु कंद ।
पंच भेद परतेकके, लखत नाहिं मतिमंद ॥ ५ ॥
जव इनमाहिं निगोद हैं, तव परतिष्ठत जान ।
जव निगोद नहिं पाइए, अपरतिष्ठ तव मान ॥ ६ ॥
जाति दसौं परतेककी, वे चौदह चौवीस ।
परज अपरज अलब्धसौं, भेद बहत्तरि दीस ॥ ७ ॥
वे ते चौ इंद्री त्रिविध, परज अपरज अलब्ध ।
विकलत्रैकै भेद नव, हिंसा करै निषिद्ध ॥ ८ ॥

चौपाई ।

करम भूमि तिरजंच विख्यात, गर्भज सनमूर्छन दो जात ॥
गरभज परज अपरज प्रवीन, अलवध हू सनमूर्छन तीन॥९॥

सैनी पंच असैनी पंच, दसौं भेद जलचर तिरजंच ।
दसौं भेद थलचर पसुकाय, दसौं व्योमचर उड़ैं सुभाय १०
करम भूमि तिरजंच मझार, तीस भेद भाखे निरधार ।
भोग भूमि अब सुनौ सुजान, थलचर नभचर दो सरधान ११
परज अपर्जापति दो भेद, चारि भेद जानौं विन खेद ।
उत्तम मधम जघन भूतनैं, च्यारि भेद जिनागम भनैं ॥ १२ ॥

दोहा ।

पंचेद्री तिरजंचके, कहे छियालिस भेद ।
तेरै भेद मनुष्यके, समझौ गरभ उछेद ॥ १३ ॥

चौपाई ।

उत्तम भोगभूमि सुख खान, उत्तम पात्रदानफल जान ।
मध्यम जघन भोग भुव दोय, चौथे कुभोग भू नर जोय १४
पंचम मलेछ खंड मझार, छट्ठे आरज गरभज सार ।
परज अपरज दुवादस जान, अलवधि नर इनमैं नहिं मान १५

अडिल्ल ।

नारि जोनि थन नाभि, कांखमैं पाइए ।
नर नारिनकै, मल मूतरमैं गाइए ॥ १६ ॥
मुरदेमैं संमूर्छन, सैनी जीयरा ।
अलवध परजापती, दया धरि हीयरा ॥ १७ ॥

सोरठा ।

नरक पटल उनचास, परज अपरजापत कहे ।
जीवसमास प्रकास, सातौंमैं अट्ठानवै ॥ १८ ॥

चौपाई ।

त्रेसठ पटल सुरगके पाठ, भुवनपती दस व्यंतर आठ ।
जोतिस पांच छियासी भए, परज अपरजापति गति लए १९

दोहा ।

नरक माहिं अठानवै, पसु इक सौ तेईस ।
नर तेरै सब देवकै, सतक बहत्तरि दीस ॥ २० ॥

अडिल्ल ।

परजापत एक सौ, छियासी जानियै ।
अपरजास एक सौ, अठ्यासी मानियै ॥
अलवध परजापत्त जीव, चौंतीस हैं ।
चव सत पट पर करुना, करैं मुनीस हैं ॥ २१ ॥

दोहा ।

नियत एक चेतनमई, भेद सरब व्यौहार ।
निहचै अरु व्यौहारका, जाननहारा सार ॥ २२ ॥
सुदया समता आपमैं, यह परदया विचार ।
द्यानत सुपरदया करैं, ते विरले संसार ॥ २३ ॥

इति चारसौ-छह-जीवसमास ।

वृषभध्वानचौबीसी ।

छप्पय ।

रिषभदेव रिषदेव, धीर गंभीर धीर धुनि ।
चार बीस जगदीस, ईस तेईस सुगुन गुनि ॥
सुरग-ठाम निज नाम, मात पुर तात बरन तन ।
आव काय सुभ चिह्न, सुकत आसन दस बरनन ॥
जस गाय पुन्य उपजाय बुधि, पाय करौं मंगल अमर ।
सिर नाय नमौं जुग जोर कर, भो जिनिंद भव-ताप-हर॥१॥

ऋषभदेव ।

रिषभदेव रिषिनाथ, वृषभ लच्छन तन सोहै ।
नाभिराय-कुल-कमल, मात मरुदेवी मोहै ॥
चौरासी लख पुव्व आव, सत पंच धनुष तन ।
नगर अजोध्या जनम, कनक वपु बरन हरन मन ॥
सर्वार्थसिद्धतैं गमन पद,-मासन केवल ग्यान वर ।
सिर नाय नमौं जुग जोरि करि, भो जिनिंद भव-ताप-हर॥२॥

अजितनाथ ।

अजित अजित रिपु अजित, हेम तन गज लच्छन भन ।
पिता राय जितसत्रु, अत्र (?) खरगासन आसन ॥
लाख बहत्तरि पुव्व, आव पुर जनम अयोध्या ।
धनुष चारिसै साठि, गाढ़ बच बहु प्रतिबोध्या ॥
तजि विजय थान परधान पद, बसे विजैसैना उदर ।
सिर नाय नमौं० ॥ ३ ॥

संभवनाथ ।

संभव संभव-हरन, पुरी सावत्थी[1] जानौं ।
मात सुषेना रूप, भूप दिढ्राज प्रवानौं ॥
खरगासन सुख स्वादि, आदि ग्रीवकतैं आए ।
चिह्न तुरंग उतंग, रंग कंचनसम गाए ॥
थिति साठि लाख पूरव सुगति, धनुष चारिसै लखि चतुर।
सिर नाय नमौं० ॥ ४ ॥

अभिनन्दन ।

अभिनंदन अभिनंद,-कंद सुख भूप स्वयंवर ।
माता सिद्धारथा, कथा सुवरन तन मनहर ॥
तीन सतक पंचास, धनुष तन नगरि विनीता ।
पुव्व लाख पंचास, तास कपि लांछन मीता ॥
खरगासन विजय विमानतैं, करम नास परकास कर।
सिर नाय नमौं० ॥ ५ ॥

सुमतिनाथ ।

सुमति सुमतिदातार, सार वस वैजयंत मन ।
भूप मेघरथ तात, मात मंगला कनक तन ॥
पुव्व लाख चालीस, ईस तन धनुष तीनसै ।
चक्रवाक लखि चिह्न, खरग आसन सुख विलसै ॥
छहमास अगाऊ गरभतैं, भयौ विनीता सुर-नगर ।
सिर नाय नमौं० ॥ ६ ॥

पद्मप्रभ ।

पदम पदम भवि भमर, पदम लांछन सुखदाई ।
धरन भूप गुनकूप, सरूप सुसीमा माई ॥

---
१ श्रावस्ती नगरी ।

अंतम ग्रीवक वास, दुसै पंचास चाप तन ।
खरगासन वहु सकत, रकत तन हरख करन मन ॥
थिति तीस लाख पूरब पुरी, कौसंबी सब जन सुघर।
सिर नाय नमौं० ॥ ७ ॥

सुपार्श्वनाथ ।

देत सुपास सुपास, पंच ग्रीवकतैं आए ।
सुपरतिष्ठ भूपाल, पृथीसैना मन भाए ॥
नगर बनारस धाम, स्वाम खरगासन राजैं ।
चिन्न साथिया बीस, लाख पूरब थिति छाजैं ॥
तन हरित वरन दोसै धनुष, सुर ढारैं चौंसठ चमर।
सिर नाय नमौं० ॥ ८ ॥

चंद्रप्रभ ।

चंदप्रभू प्रभ चंद, चंदपुर चंद चिन्न गन ।
महासैन विख्यात, मात लछमना स्वेत तन ॥
वैजयंततैं आय, काय खरगासनधारी ।
आव पुव्व दस लाख, भए सबकौं सुखकारी ॥
डेड़सै धनुष तन भविक जन, हंस पाय तुम मानसर।
सिर नाय नमौं० ॥ ९ ॥

पुष्पदन्त ।

सुबुधि सुबुधि करतार, सार प्रानतके थानी ।
महा भूप सुग्रीव, जीव जयवामा रानी ॥
उज्जल वरन सरीर, धीर खरगासन जानौं ।
काकंदीपुर साख, लाख दो पूरव मानौं ॥

१ लाल ।

तन धनुष एक सौ भौ-रहित, सहित चिन्न जलचर मकर ।
सिर नाय नमौं० ॥ १० ॥

शीतलनाथ ।

सीतल सीतल वचन, भद्रपुर आरन स्वर वर ।
दिढरथ तात विख्यात, सुनंदा माता अवतर ॥
नबै धनुषकौ देह, धीर कंचनमय गायौ ।
आव पुव्व इक लाख, खरगआसन सुख पायौ ॥
श्रीवृच्छ चिन्न केवल प्रगट, भिन्न भिन्न भाख्यौ सुपर।
सिर नाय नमौं० ॥ ११ ॥

श्रेयांसनाथ ।

भज स्रेयांस स्रेयास, स्वर्ग सोलमके वासी ।
विस्नुराज महाराज, मात नंदा परकासी ॥
असी चाप तनमाप, आप गैंडेकौ लच्छन ।
खरगासन भगवान, सिंहपुर कनक वरन तन ॥
चौरासी लाख वरस भुगत, दुख-दावानल-मेघ-झर।
सिर नाय नमौं० ॥ १२ ॥

वासुपूज्य ।

वासुपूज्य वसुपूज्य, भूप वसु विधिसौं पूजौं ।
दसम लोकतैं आय, रकत सुभ काय न दूजौं ॥
सत्तर चाप सरीर, धीर चंपापुर आए ।
लंछन महिष मनोग, जोग पदमासन गाए ॥
थिति लाख वहत्तरि वरसकी, जयावती माता सुमर ।
सिर नाय नमौं० ॥ १३ ॥

विमलनाथ ।

विमल विमल अवलोक, लोक द्वादस वस स्वामी।
कंपिलापुर आय, काय कंचन जग नामी ॥
कृतवर्मा भूपाल, भाल जयस्यामा माता ।
सूकर चिन्ह निसान, साठि धनु तन अति साता॥
थिति साठि लाख वरसन सुखी,खरगासन सवतैं जु वरा
सिर नाय नमौं० ॥ १४ ॥

अनंतनाथ ।

सुगुन अनंत अनंत, अंत सुर सोल जिनेस्वर।
सिंघसैन नृपराय, माय जयस्यामाके घर॥
कनक वरन परगास, तास पंचास चाप तन ।
आव लाख है तीस, ईसकौ सेही लंछन ॥
खरगासन कौसलपुर जनम, कुसल तहां आठौं पहर।
सिर नाय नमौं० ॥ १५ ॥

धर्मनाथ ।

धर्म धर्म परकास, वास सरवारथसिध भुव ।
भान राज जस ख्यात, मात सुप्रभादेवी हुव ॥
खरगासन निहपाप, चाप चालीस पंच तन ।
आव लाख दस वरस, सरस कंचनमय है तन ॥
लखि वज्र चिन्ह सुभ रतन पुर, पार न पावै सुर निकर।
सिर नाय नमौं० ॥ १६ ॥

शान्तिनाथ ।

सांति जगत सब सांति, भोगि सरवारथसिधि रिधि।
कामदेव तन कनक, रतन चौदहौं नवौं निधि ॥

विस्वसैन नृप तात, मात ऐरा मृगलंछन ।
हथनापुरमैं आय, काय चालीस धनुष तन ॥
थिति लाख वरस आसन पदम, नाम रटैं अघ जाय टर।
सिर नाय नमौं० ॥ १७ ॥

कुंथुनाथ ।

कुंथु कुंथु रखवार, सार सरवारथसिधि वस ।
हस्तिनागपुर आय, काय चामीकर हर सस ॥
सूरसैन नृप जैन, ऐन स्त्रीकांता सुभ मन ।
पंचानवै हजार, वरस पैंतीस धनुष तन ॥
खरगासन लंछन छाग सुभ, तारे जिन वैराग धर।
सिर नाय नमौं० ॥ १८ ॥

अरनाथ ।

अर अरि-करि-हर सिंघ, जयंत विमान जानि जन।
भूप सुदरसन सार, मित्रसैना माता भन ॥
हस्तिनागपुर आय, चाप तन तीस विराजै।
थिति चौरासी सहस, वरस कंचन छवि छाजै ॥
खरगासन लंछन मीन सुभ, वैन जलद सर-भविक भर।
सिर नाय नमौं० ॥ १९ ॥

मल्लिनाथ ।

मल्लि करम-रिपु-मल्ल, थान अपराजित जानौ ।
मिथिलापुर अवतार, सार घट चिन्ह पिछानौ ॥
कुंभराज महाराज, खरगआसन सरदहियै ।
धनुष पचीस सरीर, सहस पचपन थिति लहियै ॥

देवी प्रजापती कनक तन, अमल अचल अविकल अजर
सिर नाय नमौं० ॥ २० ॥

मुनिसुव्रत ।

मुनिसुव्रत व्रत वर्ग, स्वर्ग प्रानतकै थानी ।
भूप सुमित्र पवित्र, मित्र सुभ सोमा रानी ॥
राजगृहीमैं आय, काय कज्जल छवि छाजै ।
वरस सहस थिति तीस, बीस तन चाप विराजै ॥
लच्छन कछुआ आसन खरग, दीनदयाल दया नजर।
सिर नाय नमौं० ॥ २१ ॥

नमिनाथ ।

नमि नमि सुरनरराज, राज सरवारथसिधि कर ।
विजयराज महाराज, विप्पला रानी उर धर ॥
आव वरस दस सहस, पुरी मिथिला सुखदाई ।
पंद्रै धनुष सरीर, खरगआसन लौ लाई ॥
तन कनक वरन लच्छन कमल,ग्यान भान हर भ्रम तिमर
सिर नाय नमौं० ॥ २२ ॥

नेमिनाथ ।

नेमि धरम-रथ-नेमि, जयंत विमान वास किय ।
समुदविजै महाराज, सिवादेवी जानौं जिय ॥
नगर द्वारिका नाम, स्याम तन जन-मन-हारी ।
आव वरस इक सहस, चाप दस रजमति छाँरी ॥
खरगासन आसन मोखकौं, संख चिन्ह हरिवंस-नर ।
सिर नाय नमौं० ॥ २३ ॥

पार्श्वनाथ ।

पास पास अघ नास, वास प्रानत करि आए ।
अस्वसैन अवदात, मात वामा मन भाए ॥
नगर बनारसि थान, जान फनि लच्छन नामी ।
आव एक सौ वरस, खरग आसन सिवगामी ॥
तन हरित वरन नव कर धरन,वज्र प्रगट संवर सिखर।
सिर नाय नमौं० ॥ २४ ॥

वर्धमान ।

वर्धमान जस वर्ध,-मान अच्युत विमान गति ।
नगर कुंडपुर धार, सार सिद्धारथ भूपति ॥
रानी प्रियकारनी, वनी कंचन छवि काया ।
आव वहत्तर वरस, जोग खरगासन ध्याया ॥
तन सात हाथ मृग नाथपति,तुमतैं अवलौं धरम जर।
सिर नाय नमौं जुग जोरि कर,० ॥ २५ ॥

समुच्चय चौबीस तीर्थंकर ।

रिषभ अजित संभव अभिनंदन सुमति पदम सम ।
जिन सुपास प्रभु चंद, सुविधि सीतल स्रेयांस नम ॥
वासपूज्यजी विमल, अनंत धरम पंदरमा ।
सांति कुंथु अर मल्ल, सु मुनिसोविरत बीसमा ॥
नमि नेमि पास वीरेस पद, अष्ट सिद्धि नौ रिद्धि धर।
सिर नाय नमौं० ॥ २६ ॥

पांच कुमारतीर्थंकर ।

वासुपूज्य सुरपूज्य, मल्ल विधिमल्लजयंकर ।
नेमि देह जम नेम, पास भौ-पास-छयंकर ॥

१ दो पुस्तकोंमें 'ब्राह्मी' पाठ है ।

महावीर महावीर, धीर पर-पीर-निवारन।
बड़े पुरुष संसार, सार संपति सुखकारन॥
ए पंच कुमरपदई सुमर, कठिन सील बालक उमर।
सिर नाय नमौं० ॥ २७ ॥
कल्पवृच्छ कलपतैं, चिंततैं चिंतामनि मन।
पारस हू परसतैं, करैं हित एक जनम जन॥
भगत अकल्प अचिंत, अपरस तिहारी नामी।
भौ भौ सब सुख देहि, कौन उपमा है स्वामी॥
हौं लिपट सिथिलताके विषैं, चपल चित्त निसदिन फिकर।
सिर नाय नमौं० ॥ २८ ॥
महापुरान प्रवाँन, जान आठौं विध वरनन।
बासठ ठान वखान, जान दो लच्छन आसन॥
होय कोय संदेह, नेह करि तहां निहारौ।
सुद्ध छंद सो सुद्ध, फेरिकै कवित समारौ॥
हौं अलपबुद्धि बुद्धनविषैं, एक बात लीनी पकर।
सिर नाय नमौं० ॥ २९ ॥
जै जै मल ब्रह्मचरिज, अटल बल सकल बनाए।
एक एक जिन स्वाम, नाम दस दस गुन गाए॥
सुनत मुनत चित चुनत, धुनत दुख-संतत प्रानी।
द्यानतराय उपाय, गाय जिन पाय कहानी॥
गद जनम जरा मृतु नहिं भगत, भगति एक ओपध विगर।
सिर नाय नमौं जुग जोरि कर, भो जिनंद भवतापहर३०

इति दशस्थानचौवीसी।

व्यौहार-पचीसी।

अरहंतस्तुति-सवैया इकतीसा।

सरवग्यपदधारी तीनलोकअधिकारी,
क्रोध लोभ परिहारी ऐसौ महाराज है।
सबकौं समान गिना राग दोष भाव बिना,
पास नहिं तिना सक्र सौकौ सिरताज है॥
ताहीकौ वखान्यौ धर्म सोई सांचौ सोई पर्म,
औरकौ कह्यौ अधर्म झूठकौ समाज है।
सिवपुर बाटके बटाउनिकौं[1] संबलै[2] है,
सुखकौ दिवैया महाकालमाहिं[3] नाज[4] है॥ १॥

दयाधर्मस्वरूप।

साध और स्रावक सकलव्रत जातैं पलै,
गलै जास विना सुख संपतिकी जननी।
धर्मतरुमूल पाप धूल पुंज महा पौन,
विद्या उपजावनकौं बड़ी एक गननी॥
उच्च मोख भौनकी नसैनी इच्छपद दैनी,
जैनी प्रान-दया करौ दोषनिकी हननी।
अदयाकौ नाम दसौं दिसामाहिं सुंन गिना,
दया पुंन विना एक बात हू न वननी॥ २॥
दान दियैं कहा सिद्धि ध्यान कियैं कहा रिद्धि,
पाठ पढ़ैं कहा वृद्धि जीवनकौं जोरिकै।

१ बटोही-मुसाफिर। २ कलेबा-पाथेय। ३ दुर्भिक्षके समयमें। ४ अनाज-अन्न.

कविता वखान करी लोगनिमैं रीझ परी,
तपमाहिं बुद्धि धरी चंचलता छोरिकै ॥
एक बिना सबै हेय, ऐसी दया क्यौं न लेय,
छहौं धर्ममाहिं ध्येय पाप डोरि तोरिकै ।
कोमलता हियेकी सहेली आप ही अकेली,
स्वर्गकी नवेली निधि करै दुख बोरिकै ॥ ३ ॥

महालोभवशा ।

पाय दो अटपटात जान हू थकत जात,
कटि हू पिरात गात घात बात बनी है ।
छाती छवि छीज गई पीठ हू सकुच भई,
हाथ हलै चलै नई जरा पौन घनी है ॥
बैन गह्यौ रूप और आंखि लाज तजी ठौर,
कांन वांन सुनैं कौंन आन वनी अनी है ।
काल असवारीपै हुस्यारी मृत वासनकी, (?)
डूबै जहां बांस तहां पोरी किन गनी है ॥ ४ ॥

दानस्वरूप ।

अजस विहार करै वारिधि हू जाय परै,
आपदा प्रसंग हरै विस्न (?) एक हू कहां ।
क्रोधकी न जौन होय लोभकी न पौन होय,
नरककौ न गौन होय कौन कहै दुख तहां ॥
पापकौ विनास होय भोगभूमिवास होय,
स्वर्गमैं निवास होय शत्रु को रहै जहां ।
साधनकै दानतैं निधान-पुंज व्योम देत,
या समान दूसरौ न मोटौ गुन है इहां ॥ ५ ॥

सज्जनता ।

दानकौं विसन जापै ग्यानमैं रिस न कापै,
खानकौ न तिसना पै मिसना सरलता ।
सोमता सुभाव लियें जोमकी न बात हियें,
मोमरीति लई गई मानकी गरलता ॥
भोगनसौं विरमात जोगनसौं निजरात,
लोगनकी सुनत बात दोषमैं न ररता ।
रोस रीति भाननकौं तोष प्रीति ठाननकौं,
मोखफल खाननकौं वई है वर लता ॥ ६ ॥

शोकनिवारण ।

पीतम मरेकौ सोच करै कहा जीव पोच,
तजे तैं अंनते भव सो कछू सुरत है ।
एक आवै एक जाय ममतासौं बिललाइ,
रोज मरे देखै सुनै नैक ना झुरत है ॥
पूतसौं अधिक प्रीत वह ठानै विपरीत,
यह तौ महा अनीत जोग क्यौं जुरत है ।
मरनौ है सूझै नाहिं मोहकी गहलमाहिं,
काल है अवैया स्वास नौवति घुरत है ॥ ७ ॥

धनतृष्णानिवारण ।

एकनकैं सैकड़े हजार लाख कोटि दर्ब,
रोज आवै रोज जाहि ताहि ना खबर है ।
एकें हाट हाट माहिं वाट वाट बिललाहिं,
कौड़ी कन पावैं नाहिं नैक ना सबर है ॥

---

१ मिस–छल ।

सुभासुभ परतच्छ चच्छसौं विलोकत है,
पाप घन जोरि धन भानकौं अवर है।
धन परजन तन सबसौं निराला आप,
सुच्छ लखै दच्छ कर्म नासकौं जबर है ॥ ८ ॥

ममतानिवारण।

भोगक कियेतैं पापकर्मकौ संजोग भूरि,
संजम धरेतैं पुन्य कर्मकौ निवास है।
धनकै बढ़ेतैं मोह भावनकी बढ़वार,
आसकै निरोधसेती बोधकौ प्रकास है ॥
परगह भार गहैं आरंभ अपार होय,
संग-निरवार करैं दयाकौ विलास है।
द्यानत कुटुंब माहिं ममता छूटै है नाहिं,
एकरूप भए सम सुखता अभ्यास है ॥ ९ ॥

आशा।

केई विषै भोग पाय त्यागैं मन वच काय,
ह्वैकैं मुनिराय पाय वंदनीक भए हैं।
केई विषैमैं निवास चित्तमैं रहैं उदास,
ग्यानकौ प्रकास भववास पर गए हैं ॥
किनहीकैं विषै नाहिं वांछा हू न उरमाहिं,
चाह दाह हीन आप-लीन परनए हैं।
हमैं विषै योग उपयोग सुद्ध दोनौं नाहिं,
वृथा आस-पास परे दोषनिसौं छए हैं ॥ १० ॥
देस देस धाए गढ़ बांके भूपती रिझाय,
थल हू खुदाए गिरि ताए पारा ना मर्‌यौ।

सागरकौं तरि धाए मंत्र हू मसान ध्याए,
पर घर भोजन ससंक काक ज्यौं कर्‌यौ ॥
बड़े नाम बड़े ठाम कुल अभिराम धाम,
तजिकैं पराए काम करे काम ना सर्‌यौ।
तिसना निगोड़ीनैं न छोड़ी बात भौंड़ी कोऊ,
मति हू कनौड़ी कर कौड़ी धन ना सर्‌यौ ॥ ११ ॥

हर्षशोकत्यागके छह दृष्टान्त।

आंब फल छाहिं खरबूजे फल छाहिं नाहिं,
नीबमाहिं फल नाहिं छाहिं ही सहाय है।
आक फूल छाहिं नाहिं कंटक थूहर माहिं,
कांटे हैं बंबूर राह आए दुखदाय है ॥
पुन्य पाप उतकिष्ट मध्यम जघन्य भेद,
जैसा उदै तैसा धन दारा सुत पाय है।
हरख सोक कीयैं कहा बीज बोय वृच्छ लहा,
दावा तजि साखी होय आव बीती जाय है ॥१२॥

वाद विवादमें मत पड़ो।

साधरमी जन माहिं जो चरचा बनै नाहिं,
भेषधारी सिष्यनिमैं कहैं जे अबन हैं।
सेतपटधारी जे पुजारी लौंके ढूंढ़िये हैं,
वांभन वैरागी औ संन्यासी जे कठन हैं ॥
मीमांसक आदि जात जिनसौं मिलै न बात,
राग दोष कियैं घात ग्यानकै पतन हैं।
समता सरूप धरौ ऐंच खैंचमैं न परौ,
ग्रंथ नाय करौ हरौ दोष भरे जन हैं ॥ १३ ॥

शीतकालपरीषह।

कंज मुरझात कपिहूकौ मद गल जात,
दहत वृच्छनि पात रंक रोम खरे हैं।
सीतकी विथा अपार पानी जमै बारबार,
पौन लगै तीर धार लोक दुख भरे हैं ॥
तप-भौनमाहिं साधि ध्यान ऊषमा अराधि,
नदी तट चौपथमैं कर्मनिसौं अरे हैं।
जोगी बड़े धीर वीर पावैं भव नीर तीर,
देहु मोखलच्छि हियैं भद्र भाव धरे हैं ॥ १४ ॥

ग्रीष्मकालपरीषह।

ग्रीषमकौ तेज सूर गरमी परत भूर,
सूकत है जलपूर धूर पांवकौं धरे।
धूप है अगनिरूप लू फुलिंगकौ सरूप,
दिनमैं दुखी अनूप रात नींद को करे ॥
भूमिकी तपतिसौं दसौं दिसा तपै है सैल-
सिलापर निराधार खरे साध भै हरे।
ग्यान जोत उर धार तमकी हरनहार,
वंदत हौं पाय जातैं मेरे भव भय टरे ॥ १५ ॥

वर्षाकालपरीषह।

स्याम घटा अति घोर वरसै करत सोर,
रहै नाहिं एक ओर मूसलसी धार हैं।
मानौं जल पियौ छार सोई वम्यौ है अपार,
नदी दौरै टूटि टूटि खरते पहार हैं ॥
कारी निस बीजली गरज और झंझा पौन,
तामैं साध वृच्छ तलैं ठाड़े निरधार हैं।

आप सुद्ध ध्यावत हैं कर्मकौं बहावत हैं,
तेई मोख पावत हैं नमौं सुखकार हैं ॥ १६ ॥

ज्ञानकी कार्यकारिता।

सीत ताप पावसकौं सहैं धीर वीर होय,
भेदग्यान भए बिना आपसौं विकल है।
तीन कर्म सेती भिन्न सदा चेतना ही चिन्न,
ताकी न खबरि कैसैं जगसौं निकल है ॥
बरसौं लौं धूल धोय न्यारिया सुखी न होय,
धातकी पिछान बिना दाम एक न लहै।
आप ग्यान जानत है साम्य भाव आनत है,
घोर तप ठानत है कर्मसौं विकल है ॥ १७ ॥

हितोपदेश।

भम्यौ तू अनंती बार सम्यक न लह्यौ सार,
तातैं देव धर्म गुरू तीनौं ठहराय रे।
लाग रह्यौ धन धाम इनसौं है कहा काम,
जपै क्यौं न जिन नाम अंत सो सहाय रे ॥
क्रोध है कठिन रोग छिमा ओषधी मनोग,
ताकौ भयौ है सँजोग संगत उपाय रे।
पूरब कमायौ सो तौ इहां आय खायौ अब,
करि मन लाय जो पै आगैं जाय खाय रे ॥ १८ ॥
बाग चलनैंकौं त्यार ढीलौ तीरथ मझार,
झूठ कहनकौं हुस्यार सांच ना सुहाय रे।
देखत तमासा रोज दर्सनकौ नाहिं खोज,
विकथा सुनन चोज सास्त्रकौं रिसाय रे ॥

खान पानकौं खुस्याल व्रत सुनैं विकराल,
स्रावककी कुल चाल भूली बहु भाय रे।
पूरव कमायौ सो तौ इहां आय खायौ अब,
करि मन लाय जो पै आगैं जाय खाय रे॥ १९॥

उद्यमी पुरुष। अनंगशेखर छन्द।

मिथ्यात जात घातकैं सुधा सुभाव रातकैं,
अवृत्तकौं निपातकैं सुवृत्तकी दसा वरी।
कुराग दोस नासकैं कुआसकौ निरासकैं,
प्रसांतता प्रकासकैं उदास रीत आदरी॥
सरीर प्रीत छारकैं अनेक रिद्धि डारकैं,
सुसिद्धिकौं निहारकैं स्वरिद्धि सिद्धि लौं धरी।
अकर्म कर्म ह्वै गया सुग्यान ग्यानमैं भया,
महा स्वरूप देखकैं सुवंदना हमौं करी॥ २०॥
छुधा त्रिषा न भै करै न सीत तापसौं डरै,
न राग दोषकौं धरै न काम भोग भोगना।
त्रिभेद आप धारकैं त्रिकर्मसौं निवारकैं,
त्रिजोगसौं विचारकैं त्रिरोगका मिटावना॥
अराधना अराधकैं कपायकौं विराधकैं,
सु सामभाव साधकैं समाधका लगावना।
वहाय पाप पुंजकौं जलाय कर्म कुंजकौं,
सुमोख माहिं जाहिंगे इहां न फेर आवना॥ २१॥

भगवानसे यथार्थ विनती। सवैया–इकतीसा।

तारक स्वरूप तेरौ जानत है मन मेरौ,
ध्यान माहिं घेरौ घिरै नाहिं को उपाय है।

तात मात भ्रात नात सात-धात-जात गात,
हमसौं निराले सदा चित्त क्यौं लुभाय है॥
क्रोध मान माया लोभ पांचौं इंद्रीविषै सोभ,
महा दुखदाय जीव काहे ललचाय है।
न्याव तौ तिहारे हाथ द्यानत त्रिलोकनाथ,
नावत हौं माथ करौ जो तुमैं सुहाय है॥ २२॥

शिक्षा।

चाह रहै भोगनिसौं लागत है लोगनिसौं,
वेऊ तौ फकीर तोहि कैसैं सुख करैंगे।
जाकी छाहिं छिन माहिं चाह कछू रहै नाहिं,
ताहि क्यौं न सेवै तेरे सब काम सरैंगे॥
ग्रीषम तपत सैल नीचैं बहु जलकुंड,
धाराधर आए बिन कौन ताप हरैंगे।
गंगा जमना अनेक नदी क्यौं न चली जाहु,
चातककौं स्वाति बूंद महाराज झरैंगे॥ २३॥
आए तजि कौन धाम चलिवौ है कौन ठाम,
करते हौ कौन काम कछू हू विचार है।
पूरव कमाय लाय इहां आय खाय गए,
आगैंकौ खरच कहा बांध्यौ निरधार है॥
विना लियैं दाम एक कोस गामकौं न जात,
उतराई दियैं विना कौन भयौ पार है।
आजकाल विकराल काल सिंह आवत है,
मैं कह्यौ पुकार धर्म धार जो तू यार (?) है॥ २४॥

धर्ममहिमा।

धर्म नास करै ताकौं धर्म भी विनास करै,
धर्म रच्छा करै ताकी धर्म रच्छा करै है।
दुखी करैं दुख जाय सुखी करैं सुख पाय,
नर्क दुःखतैं निकाल मोख माहिं धरै है॥
धर्म करैं जय होय पाप करैं छय होय,
भासत हैं सब लोय ताहि क्यौं विसरै है।
आगिमैं जलत नाहिं पानीमैं गलत नाहिं,
जगमैं जैवंत सदा धर्म धरैं तरै है॥ २५॥
चाहत धन संतान नई देह मिलै आन,
डरै कालसेती सदा तनहीमैं रहै है।
वांछा अरु भय दोऊ भाव भख्यौ दीसत है,
नाना भांति सुख देखि साता नहिं लहै है॥
पाप देखि रोवै पाप खोवै नाहिं महामूढ़,
स्वान-बांन डारि कोऊ सिंह-बान गहै है।
द्यानत व्यौहारकी पचीसी पढ़ौ संत सदा,
ग्यान बुद्धि थिर होय आन नाहिं वहै है॥ २६॥

इति व्यवहारपचीसी।

१ आदत।

आरतीदशक।

इह बिध मंगल, आरती कीजै।
पँच परम पद भजि, सुख लीजै॥ इह० ॥ टेक॥
प्रथम आरती, श्रीजिनराजा।
भव-जल-पार उतार जिहाजा॥ इह० ॥ १॥
दूजी आरति, सिद्धन केरी।
सुमिरन करत मिटै भवफेरी॥ इह० ॥ २॥
तीजी आरति सूरि मुनिंदा।
जनम मरन दुख दूरि करिंदा॥ इह० ॥ ३॥
चौथी आरति श्रीउवझाया।
दर्सन देखत पाप पलाया॥ इह० ॥ ४॥
पंचमि आरति साध तुमारी।
कुमतिविनासन सिव अधिकारी॥ इह० ॥ ५॥
छट्ठी ग्यारह प्रतिमाधारी।
स्रावक वंदौं आनँदकारी॥ इह० ॥ ६॥
सातमी आरती श्रीजिनवानी।
द्यानत सुरग मुकतिकी दानी॥ इह० ॥ ७॥

जिनराजकी आरती।

आरती श्रीजिनराज तुमारी।
करम दलन संतन-हितकारी। टेक॥
सुर नर असुर करत तुम सेवा।
तुम हि देव देवनिकै देवा॥ आरती० ॥ १॥

पंच महाव्रत दुद्धर धारैं।
राग दोष परनाम विडारैं ॥ आरती० ॥ २ ॥
भवभयभीत सरन जे आए।
ते परमारथ पंथ लगाए ॥ आरती० ॥ ३ ॥
जो तुम नाम जपै मन माहीं।
जनम मरन भय ताकौं नाहीं ॥ आरती० ॥ ४ ॥
समोसरन संपूरन सोभा।
जीते क्रोध मान छल लोभा ॥ आरती० ॥ ५ ॥
तुम गुन हम कैसे करि गावैं।
गनधर कहत पार नहिं पावैं ॥ आरती० ॥ ६ ॥
करुनासागर करुना कीजै।
द्यानत सेवककौं सुख दीजै ॥ आरती० ॥ ७ ॥

मुनिराज-आरती।

आरती कीजै श्रीमुनिराजकी।
अधम उधारन आतम काजकी ॥ टेक ॥
जा लच्छीके सब अभिलाखी।
सो साधनि कर्दम वत नाखी ॥ आरती० ॥ १ ॥
सब जग जीति लियौ जिन नारी।
सो साधनि नागिन वत छारी ॥ आरती० ॥ २ ॥
विषयन सब जग बौरे[1] कीनैं।
ते साधनि विष वत तजि दीनैं ॥ आरती० ॥ ३ ॥
भूकौ राज चहत सब प्रानी।
जीरन तृन वत त्यागत ध्यानी ॥ आरती० ॥ ४ ॥

१ बावरे (पागल)।

सत्रु मित्र दुख सुख सम मानैं।
लाभ अलाभ बराबर जानैं ॥ आरती० ॥ ५ ॥
छहौं काय पीहर[1] व्रत धारैं।
सबकौं आप समान निहारैं ॥ आरती० ॥ ६ ॥
यह आरती पढ़ै जो गावै।
द्यानत मनवांछित फल पावै ॥ आरती० ॥ ७ ॥

नेमिनाथ तीर्थंकरकी आरती।

किह विध आरति करौं प्रभु तेरी।
अगम अकथ जस बुधि नहिं मेरी ॥ टेक० ॥
समुदविजै सुत रजमति छांरी।
यौं कहि थुति नहिं होय तुम्हारी ॥ किह० ॥ १ ॥
कोट खंभ वेदी छवि सारी।
समोसरन थुति तुमतैं न्यारी ॥ किह० ॥ २ ॥
चारग्यानजुत तिनके स्वामी।
सेवकके प्रभु यह बच खामी ॥ किह० ॥ ३ ॥
सुनकैं वचन भविक सिव जाहीं।
सो पुदगलमैं तुम गुन नाहीं ॥ किह० ॥ ४ ॥
आतम जोति समान बताऊं।
रवि ससि दीपक मूढ़ कहाऊं ॥ किह० ॥ ५ ॥
नमत त्रिजगपति सोभा उनकी।
तुम सोभा तुममैं निज गुनकी ॥ किह० ॥ ६ ॥
मानसिंघ महाराजा गावै।
तुम महिमा तुम ही बनि आवै ॥ किह० ॥ ७ ॥

१ पीड़ानाशक (अहिंसाव्रत)।

निश्चय आरती।

इह विध आरति करौं प्रभु तेरी।
अमल अबाधित निज गुन केरी॥ टेक॥
अचल अखंड अतुल अविनासी।
लोकालोक सकल परगासी॥ इह०॥ १॥
ग्यान दरस सुख बल गुन धारी।
परमातम अविकल अविकारी॥ इह०॥ २॥
क्रोध आदि रागादि न तेरे।
जनम जरा मृतु कर्म न नेरे॥ इह०॥ ३॥
अवपु अबंध करन-सुखनासी।
अभय अनाकुल सिवपदवासी॥ इह०॥ ४॥
रूप न रेख न भेख न कोई।
चिनमूरति मूरति नहिं होई॥ इह०॥ ५॥
अलख अनादि अनंत अरोगी।
सिद्ध विसुद्ध सु आतमभोगी॥ इह०॥ ६॥
गुन अनंत किम वचन बतावै।
दीपचंद भवि भावन भावै॥ इह०॥ ७॥

आत्माकी आरती।

करौं आरती आतमदेवा।
गुन परजाय अनंत अभेवा॥ टेक॥
जामैं सब जग वह जगमाहीं।
वसत जगतमैं जग सम नाहीं॥ करौं०॥ १॥
ब्रह्मा विस्नु महेसुर ध्यावैं।
साधु सकल जिहके गुन गावैं॥ करौं०॥ २॥

बिन जानैं जिय चिर भव डोलै।
जिहि जानैं छिन सिव-पट खोलै॥ करौं०॥ ३॥
व्रती अव्रती विध व्यौहारा।
सो तिहु काल करमतैं न्यारा॥ करौं०॥ ४॥
गुरु सिख उभै वचन करि कहिए।
वचनातीत दसा तिस लहिए॥ करौं॥ ५॥
सुपर भेदकौ देखि उछेदा।
आप आपमैं आप निवेदा॥ करौं०॥ ६॥
सो परमातम पद सुखदाता।
होहि विहारीदास विख्याता॥ करौं०॥ ७॥

गौरी राग, आरती।

कहा लै पूजा भगत बढ़ावैं।
जोग वस्तु कहांतैं लै आवैं॥ टेक॥
छीरउदधि जलमेरु न्हुलावैं।
सो गिरि नीर कहां हम पावैं॥ कहा०॥ १॥
समोसरनविधि सरव बनावैं।
सो न बनै मुख क्या दिखलावैं॥ कहा०॥ २॥
जल फल स्वर्ग लोकतैं ल्यावैं।
सो हमपैं नहिं कहा चढ़ावैं॥ कहा०॥ ३॥
नाचैं गावैं वीन बजावैं।
सो न सकति किम पुन्य उपावैं॥ कहा०॥ ४॥
द्वादसांग स्रुत जो थुत गावैं।
सो हम बुद्धि न कहा बतावैं॥ कहा०॥ ५॥
चार ग्यान धर गनधर गावैं।
सो थिरता नहिं चपल कहावैं॥ कहा०॥ ६॥

द्यानत प्रीतिसहित सिर नावैं ।
जनम जनम यह भक्ति कमावैं ॥ कहा० ॥ ७ ॥

वर्धमानकी आरती, राग गौरी० ।

करौं आरती वर्धमानकी ।
पावापुर निरवान थानकी ॥ टेक ॥
राग विना सब जग-जन तारे ।
दोष विना सब कर्म विडारे ॥ करौं० ॥ १ ॥
सील धुरंधर सिव-तिय-भोगी ।
मनवचकायन कहियै जोगी ॥ करौं० ॥ २ ॥
रत्नत्रयनिधि परिगह डारी ।
ग्यान-सुधा-भोजन व्रत-धारी ॥ करौं० ॥ ३ ॥
लोकअलोकव्यापि निज माहीं ।
सुखमय इंद्री सुख दुख नाहीं ॥ करौं० ॥ ४ ॥
पंचकल्यानकपूज्य विरागी ।
विमल दिगंबर अंबरत्यागी ॥ करौं० ॥ ५ ॥
गुनमनिभूषन भूषन स्वामी ।
जगत उदास जगंतरजामी ॥ करौं० ॥ ६ ॥
कहै कहां लौं तुम सब जानौं ।
द्यानतकी अभिलाख प्रमानौं ॥ करौं० ॥ ७ ॥

वृषभनाथकी आरती ।

कहा ले आरती भगत करैं जी ।
तुम लायक नहिं हाथ परैं जी ॥ टेक ॥
छीर जलधिकौ नीर चढ़ायौ ।
कहा भयौ मैं भी जल लायौ ॥ कहा० ॥ १ ॥

उज्जल मुक्ताफलसौं पूजौं ।
हम पै तंदुल और न दूजौं ॥ कहा० ॥ २ ॥
कलपवृच्छ-फलफूल तुम्हारे ।
सेवक क्या ले भगति विथारै ॥ कहा० ॥ ३ ॥
तनसौं चंदन अगर न लागै ।
कौन सुगंध धरैं तुम आगै ॥ कहा० ॥ ४ ॥
नख सम कोटि चंद रवि नाहीं ।
दीपक जोति कहो किह माहीं ॥ कहा० ॥ ५ ॥
ग्यानसुधाभोजन व्रतधारी ।
नेवज कहा करैं संसारी ॥ कहा० ॥ ६ ॥
द्यानत सकत समान चढ़ावै ।
कृपा तिहारीतैं सुख पावै ॥ कहा० ॥ ७ ॥

परमात्माकी आरती ।

मंगल आरती आतमराम ।
तन मंदिर मन उत्तम ठाम ॥ टेक ॥
सम रस जल चंदन आनंद ।
तंदुल तत्त्व-सरूप अमंद ॥ मं० ॥ १ ॥
समैसार फूलनकी माल ।
अनुभौ सुख नेवज भरि थाल ॥ मं० ॥ २ ॥
दीपक ग्यान ध्यानकी धूप ।
निर्मल भाव महा फलरूप ॥ मं० ॥ ३ ॥
सुगुन भविक जन इक रंग लीन ।
निहचै नौधा भगति प्रवीन ॥ मं० ॥ ४ ॥
धुनि उत्साह सु अनहद ग्यान ।
परमसमाधिनिरत परधान ॥ मं० ॥ ५ ॥

बाहज आतम भाव बहाव ।
अंतर ह्वै परमातम ध्याव ॥ मं० ॥ ६ ॥
साहब सेवक भेद मिटाय ।
द्यानत एकमेक हो जाय ॥ मंगल० ॥ ७ ॥

मंगल आरती ।

मंगल आरती कीजै भोर, विघनहरन सुख करन किरोर ॥ १
अर्हंत सिद्ध सूरि उवझाय, साध नाम जपियै सुखदाय ।मंगल०
नेमिनाथ स्वामी गिरनार, वासुपूज्य चंपापुर धार ।
पावापुर महावीर मुनीस, गिरिकैलास नमौं आदीस ॥मंगल०
सिखर समेद जिनेसुर बीस, वंदौं सिद्धभूमि निसदीस ।
प्रतिमा स्वर्ग मर्त्य पाताल, पूजौं कृत्य अकृत्य त्रिकाल॥मंगल०
पंचकल्यानक काल नमाम, परमौदारक तन गुनधाम ।
केवल ग्यानआतमाराम, यह षटविध मंगलअभिराम॥मंगल०
मंगल तीर्थंकर चौवीस, मंगल सीमंधर जिन बीस ।
मंगल श्रीजिनवचन रसाल, मंगल रत्नत्रय गुनमाल ॥मंगल०
मंगल दसलच्छन जिनधर्म, मंगल सोलैकारन पर्म ।
मंगल बारै भावन सार, मंगल चार संघ परकार ॥मंगल०॥७॥
मंगल पूजा श्रीजिनराज, मंगल सास्त्र पढ़ैं हितकाज ।
मंगल सतसंगति समुदाय, मंगल सामायिक मन लाय॥मंगल०
मंगल दान सील तप भाव, मंगल मुक्तवधूकौ चाव ।
द्यानत मंगलआठौं जाम, मंगल महाभक्तिजिनस्वाम॥मंगल०

इति आरतीदशक ।

दशबोल पचीसी ।

मंगलाचरण, छप्पय ।

एक सरूप अभेद, दोय विध विधि-निषेधमैं ।
रतनत्रै करि तीन, चार विध दर्वादिकमैं ॥
पंचम गति सुचि ठौर, आप पटकारक राजै ।
सातौं भैकरि भिन्न, आठ गुनसहित विराजै ॥
नव नो-कषाय दस बंध हरि, तास रूप हिरदै धरौं ।
पूजौं ध्याऔं गाऔं सदा, जिह तिह विध भव जल तरौं॥

एक बोलके चौवीस भेद ।

वंदौं बानी एक, एक ध्यानी अघनासक ।
एक दरव आकास, एक केवल सब भासत ॥
परमानू इक चलै, एक कालानू परसै,
एक समै निरअंस, एक तीर्थंकर दरसै ॥
इक गुरु निरग्रंथ जिहाज सम, एक दया-मारग भला ।
इक समै जीव रिजुगति करै, एक आप अनुभौ कला ॥२॥
एक प्रान चौदहैं बंध, इक तेरम जिनवर ।
एक मेर मरजाद, एक मिथ्यात घातकर ॥
जघन देह इक समै, राजु चौदै अनु जावै ।
धर्म अधर्म विमान, एक वसि सिव पद पावै ॥
स्रुत ग्यान करम बिन इक समै, जीव तत्त्व नौ परिनमै ।
इक नभ प्रदेस बहु देसकौं, ठौर देत जिनवचनमै ॥ ३॥

दो बोलके चौवीस भेद ।

नमौं दुविध जिनराय, जीव निरजीव बखानैं ।
सिद्ध और संसार भेद, त्रस थावर जानैं ॥

कही प्रतेक निगोद, नित्त ईतर साधारन ।
सूच्छम थूल वखान, पंचइंद्री मन विन मन ॥
आगम अध्यातम कथन सुन, सुपर भेदकौं परनए ।
थिरकलप[1] त्यागि जिन कलप धरि, केवल ग्यान दरस भए ॥
वंदौं वंदसरूप, साध स्रावग सुखदायक ।
नित्त अनित्त प्रवान, गुनी गुन सबके ग्यायक ॥
पुन्य पाप परकासि, तास फल सुख दुख भाखैं ।
रूप अरूप निहार, दोय परिगह नहिं राखैं ॥
दो भेद ग्यान वरनन करैं, दरव भावसौं पूजियै ।
निहचै व्यौहार सँभार मन, दोय दयामय हूजियै ॥५॥

तीन बोलके चौवीस भेद ।

तीन साध आराध, वचन मन काय लायकर ।
तीन पात्र सरधान, तीन विध आतम मन धर ॥
तीन लोककौं जान, काल तीनौं अवधारौं ।
संख असंख अनंत, दरव गुन परज विचारौं ॥
संसै-विमोह-विभ्रमरहित, ध्यान ध्येय ध्याता मुनौं ।
करतार करम किरिया समझि, ग्यान ग्येय ग्याता सुनौं ॥६
सामायिक तिहुँ वार, तीन सव सल्ल नसाऊं ।
तीनौं दरसन मोह, जनम मृत जरा मिटाऊं ॥
तजि तीनौं अग्यान, तीन समकित मन आनौं ।
तीन समै अनहार, देवगुरुधर्म प्रवानौं ॥
लखि भाव पारनामी त्रिविध, तीन करमसौं भिन्न है ।
तजि राग दोष अरु मोहकौं, तीन चेतना चिन्न है ॥७

1 स्थविरकल्प ।

चार बोलके चौवीस भेद ।

चतुरानन भगवान, दान विध च्यारि वतावैं ।
च्यारि अराधन धारि, च्यारि अरथनिकौं पावैं ॥
च्यारि संघ आराधि, च्यारि विध वेद वखानैं ।
नमैं च्यारि विध देव, च्यारि निच्छेपै जानैं ॥
बहु घाति करम चकचूर करि, जरि संग्या चारौं गईं ।
चहु ध्यान बखान त्रिधानसौं, च्यारि भावना मन भईं ॥
सहित अनंत चतुष्ट, च्यारि चौकरी विनासी ।
च्यारि कषाय जलाय, च्यारि विकथा नहिं भासी ॥
प्रान च्यारि परकार, च्यारि दरसन परगासक ।
पुग्गलके गुन च्यारि, नारि चहु सील विनासक ॥
सहि च्यारि जात उपसर्गकौं, च्यारि भेद मन वस किया ।
तिन बंध च्यारि परकार हरि, चहु गतिकौं पानी दिया ॥

पांच बोलके चौवीस भेद ।

नमौं पंच पद सार, पंच इंद्री वस कीजै ।
पंच लवधिकौं पाय, पंच स्वाध्याय पढ़ीजै ॥
चारित पंच विचारि, पंच परमाद विसारौं ।
अंतराय विध पांच, पांच मिथ्यात निवारौं ॥
पांचौं सरीर ममता तजौ, नींद पांच नहिं कीजियै ।
धरि पंच महाव्रत भावसौं, पंच समिति चित दीजियै ॥
सिद्ध पंच ही भाव, पांच पैताले जानौं ।
पंचाचार विचार, पंच सिवकारन मानौं ॥

पंच जोतिषी देव, पंच गोले[1] साधारन ।
षट् पंचासतिकाय[2], मूलके भाव पंच गन ॥
भव पंच परावरतनि निकलि, पंच नरक दुखसौं डरौ।
बहु भेद पंच थावर समझि, पंच कल्यानकपद धरौ ११

छह बोलके चौवीस भेद ।

नमौं छमतमैं सार, दर्व षट् भेद प्रकासक ।
वाहज तप षट भेद, भाव तप षट दुखनासक ॥
षट अनायतन तजौ, हानि षट वृद्धि अगुरू लघु ।
पुग्गलकै षट भेद, क्रिया षट गेह माहिं अघ ॥
षट नरक जाय नारी कुमति, षट विध समकित वरनयौ।
पूजादि कर्म षट् पापहर, षडावसिकसौं सुख भयौ ॥१२॥
षट मंगल बंदामि, छहौं परजापति जानौ ।
षट सैना चक्रेस, संघनन षट परवानौ ॥
संसथान षट जान, छविधि परजै नै धारौ ।
छहौं काल परवान, काय षट दया विचारौ ॥
जिय मरन बेर षट दिसि चलै, षट लेस्या जो धारि है।
षट अवधि ग्यानके भेद षट, विध निहचै व्यौहार है१३

सात बोलके चौवीस भेद ।

सात नरक भयकार, व्यसन सातौं तज भाई ।
सात खेत धन खरचि, प्रकृति सातौं दुखदाई ॥
सक्र सात विध सैन, रतन सब सात कृष्ण घर ।
सात अचेतन रतन, सात चेतन चक्रेसर ॥

१ स्कंध-अंडर-आवास-पुलवि-देह गोलाकार पांच साधारण हैं। २ पांच अस्तिकाय ।

लखि सात धातमय तन असुचि, मौन सात विध धारकैं।
दाता गुन सातौं सात विध, अंतरायकौं टारकैं ॥१४॥
सात भंग सरधान, जान तन जोग सात हैं ।
समुद्घात हैं सात, सात संजम विख्यात हैं ॥
तीन जोग विध सात, सात तन मैल वखानैं ।
सात स्वरनके भेद, सीलव्रत सातौं जानैं ॥
निज नाम सात सातौं उदधि, यहां सात ही खेत हैं ।
प्रभु नाम ईति सातौं टलैं, सात तत्त्व सिवहेत हैं ॥१५॥

आठ बोलके चौवीस भेद ।

आठ मूलगुन पाल, आठ मद तजौ सयानैं ।
सम्यक आठौं अंग, ग्यानके आठ वखानैं ॥
आठ ठौर न निगोद[1], आठ गुन सुरगन छाजैं ।
आठ जुगलके देव, आठ विध व्यंतर राजैं ॥
पूजियै आठ बिध देव जिन, आठौं अंग नवाइयै ।
देहरे आठ मंगल दरव, आठ पहर लौं लाइयै ॥१६॥
आठौं प्रवचन धार, जोगके आठ अंग हैं ।
आठ रिद्धि दातार, फरसके आठ भंग हैं ॥
आठ समै दंडादि, आठ उपमान वखानैं ।
आठ भेद सत आदि, आठ लौकांतिक जानैं ॥
अंगुल उत्तमभुव रोम वसु, आठ प्रातहारज भले ।
सब आठ ध्यान-पावकविषैं, काठ करम आठौं जले ॥१७॥

नव बोलके चौवीस भेद ।

नवौं पदारथ धार, दरसनावरनी नौ विधि ।
नौ नै नैगम आदि, चक्रधारीकैं नौ निधि ॥

१ पृथ्वी, जल, तेज, वायु, केवलीका शरीर, तथा आहारक ये छह और देव नारकीके शरीर, इन आठ स्थानोंमें निगोदजीव नहीं होते हैं।

नौ नारायन जानि, मानि नौ हैं बलभद्दर।
प्रतिनारायण नवौं, नवौं नारद हरि हितकर॥
नौ नै गुन परजै दरवकी, आव बंध नौ बार है।
नौ गुनथानकके भेद नौ, समकित नौ परकार है॥१८॥
छायक गुन नौ नमौं, सील नौ बारि संभारौ।
प्रायश्चित नौ भेद, सांत रस नौमैं धारौ॥
नौ ग्रैवक उर धार, नौ नउत्तरे भरे बुध।
जोनि-भेद नौ जान, मान मंगल नौ पद सुध॥
नौ गुनथानक नव कोरि मुनि, नौ गुरु अच्छर अंक सब।
नौ दानतनी विध जानकैं, नौधा भगति विना गरब १९

दश बोलके चौवीस भेद।

पूजौं दस अवतार, जनम दस गुन जिन साहब।
घाति घाति दस सुगुन, दसौं समकित भाखे सब॥
इंद्र आदि दस भेद, भवनवासी दस जानैं।
पुग्गल दस परजाय, सूत्र दस भेद बखानैं॥
दस दोषरहित आलोचना, काम कुचेष्टा दस तजै।
भुव आदि जीवके भेद दस, वैयावृत दस विध भजै २०
दसौं दिसा मन रोकि, प्रान दस भिन्न चेतना।
दरवतने दस भेद, संग दस साथ लेत ना॥
दस विध हैं दिगपाल, निरजरा दस विध जानी।
दसौं विसेख सुभाव, अंक दस सिवपदवानी॥
दस विध कुदान फल नरक दुख, दस सामानिक गुन दरव
सुभ समोसरनमैं दस धुजा, धरमध्यान दस विध सरव॥

षट् नय।

असत कथन उपचार, जीवकौं जन धन जानौं।
असत बिना उपचार, काय आतमकौं मानौं॥

सांच कथन उपचार, हंसकौं राग विचारौ।
सांच विना उपचार, ग्यान चेतनकौं धारौ॥
निहचैं असुद्ध नर भेदनै, रागसरूपी आतमा।
आदेय सुद्ध निहचैं समझि, ग्यानरूप परमातमा॥२२॥

व्यवहार और निश्चय नयसे द्रव्य कर्म, भाव कर्म, शुद्ध भावका कर्त्ता कौन है?

दरव करमकौं करै, जीव व्यौहार बतावै।
दरव करम पुद्गलसरूप, निहचै नै गावै॥
भाव करम करतार, धार व्यौहार सु पुद्गल।
भाव करम आतमारूप, निहचै नैकौ बल॥
दोनौं असुद्ध जिय मोहमैं, पुग्गल खंध लगावना।
अनुभवौ सुद्ध पुद्गल अनू, जीव ग्यानमय भावना २३

शिक्षारूप श्रद्धान।

न रचौ विषयनि माहिं, करौ परचौ इनमैं नर।
खरचौ दरव सुखेत, सदा अरचौ श्रीजिनवर॥
चरचौ बारंबार, अतरचौ (?) मन सुखदायक।
पुद्गल धर्म अधर्म, व्योम जम जड़ जी ग्यायक॥
सब अकृत अनादि अजर अमर, गुन परजाय दरवमई।
प्रतिभासै केवल आरसी, माहिं मोहि सरधा भई॥२४॥

कविकृत लघुता।

वृषभसैन गुनसैन, गोतम नरोत्तम गनधर।
सकल पाय सिर नाय, पुन्य उपजाय बुद्धि वर॥
कहे कवित हितकार, सार जहां हीन अधिक अति।
छमा वरौ सुख करौ, दोष मति धरौ विपुलमति॥
यह शब्द ब्रह्म वारिधि लहर, गनत पार को पाय है।
द्यानत ग्यानी आतम मगन, यह पुद्गल-परजाय है २५

इति दश-बोल-पचीसी।

जिनगुणमालसप्तमी ।

अशोकपुष्पमंजरी (एक गुरु एक लघुके क्रमसे ३१ वर्ण)

मान थंभ देख औ सरोवरी भरी विसेख,
खातका गभीर पेख पुष्प वारि राज हीं ।
रूपकोट नाटसाल भाग दो वनै विसाल,
वेदिका धुजा सताल माल आदि छाजहीं ॥
हेमकोट कल्पवृच्छ वाग सोहने प्रतच्छ,
रत्नपुंज धाम आवली मनोग गाजहीं ।
वज्र कोट चार पौल वार कोट सोल भीत,
वीच वेदिका त्रिपीठ संभुजी विराजहीं ॥ १ ॥

जन्मके दश गुण । सवैया इकतीसा ।

वल तौ अतुल वीर स्रमकौ न होय नीर,
हितमित वानी सव प्रानीकौं सुहावनी ।
आदि संसथान है गभीर संहनन धीर,
रूपकी सोभा अनूप सवकौं रिझावनी ॥
सहस आठ लच्छन सरीर लोहू है खीर,
देहकी सुगंध और गंधकौं लजावनी ।
मलकौ न लेस लीयैं उपजैं दसौं जिनेस,
मेर करैं न्हौन सो सुरेस भक्त भावनी ॥ २ ॥

घातिया कर्मोंके नाशसे दश गुण ।

जोजन सौ सौ सुभिच्छ व्योम चलैं अंतरिच्छ,
चारौं मुख चारौं दिस सव विद्यापत हैं ।
जीवकौ न वध होय उपसर्ग नाहीं कोय,
कौलाहार लेत नाहिं ग्यानसुधा-रत हैं ॥

निर्मल सरूप माहिं तनकी न परै छाहिं,
नख केस वढ़ैं नाहिं आंख ना लगत हैं ।
घातिया करम नासि दसौं गुन परगास,
जिनकी भगत कीयैं पाप-भै भगत हैं ॥ ३ ॥

देवोंकृत चौदह गुण ।

अरध मागधी भाषा सवै रितु फल फूल,
सिंह स्याल प्रीति रीति आरसी अवनि है ।
पौन वुहारै मेघ जल कन सुगंध झारै,
पाय तलैं कंज धारैं आनंद सवनि है ॥
निर्मल गगन और दसौं दिसा उज्जल हैं,
फलैं खेत सोभै भूमि धर्म चक्र मनि है ।
आठौं मंगलीक सार सुर करैं जैजैकार,
चौदै अतिसय तेरैं देवकृत धनि है ॥ ४ ॥

आठ प्रातिहार्य ।

फूल सनमुख वरखत मानौं वंदनिकौं,
देव दुंदुभीके वाजैं भाजैं पापभार जी ।
सिंघासन तीनसेती तीनलोकसाहव हौ,
तीन छत्र कहैं रतनत्रय दातारजी ॥
जानौं अच्छर सुपेद चौसठि चमर ढुरैं,
औ कहा असोक वृच्छ हू असोक धारजी ।
भामंडल आरसी है वानी सुधा-धारसी है,
नमौं आठ प्रातिहारजके सिरदारजी ॥ ५ ॥

अनंतचतुष्टय ।

लोकालोक दर्व गुन परजाय तिहूं काल,
टांकी ज्यौं उकेर राखै ग्यानमैं प्रकास है ।

चंद भान असंख्याततैं अनंतगुनी जोति,
सोऊ नाहिं लगै ऐसैं दर्सनकी रास है ॥
निराबाध सास्वतौ अनाकुल अनंत सुख,
अंस हू न लोकमाहिं इंद्री सुखभास है ।
सत इंद्रसेती जोर बलकौ नहीं है ओर,
अनंतचतुष्टै नाथ वंदौं अघ नास है ॥ ६ ॥

छयालीस गुणवर्णन ।

दसौं जनमत सार दसौं घात घात कर,
चौदै सुरकृत प्रातिहारज आठौं गहे ।
अनंतचतुष्टै कहिवतकौं छियालीस हैं,
गुन हैं अनंत तेरे ग्यानी ग्यानमैं लहे ॥
तारनकौं मान मेघ धारके प्रवांन और,
संभूरमनि-लहर तातैं अधिके कहे ।
कौन भांति भाखे जाहिं थिरता औ बुद्धि नाहिं,
द्यानत सेवकने न्यारे न्यारे सरदहे ॥ ७ ॥

इति जिनगुनमालसप्तमी ।

समाधिमरण ।

जोगीरासा ।

गौतम स्वामी वंदौं नामी, मरनसमाधि भला है ।
मैं कब पाऊं निसदिन ध्याऊं, गाऊं वचन कला है ॥
देवधरम गुरु प्रीति महा दिढ़, सात विसन नहिं जानै ।
तजि वाईस अभच्छ संयमी, बारह व्रत नित ठानै ॥ १ ॥
चक्की उखरी चूल बुहारी, पानी त्रस न विराधै ।
बनिज करै परद्रव्य हरै नहिं, कर्म छहौं इम साधै ॥
पूजा सास्त्र गुरूकी सेवा, संजम तप बहु दानी ।
पर उपगारी अल्प अहारी, सामायिकविधग्यानी ॥ २ ॥
जाप जपै तिहुं जोग धरै थिर, तनकी ममता टारै ।
अंतसमै वैराग सँभारै, ध्यानसमाधि विचारै ॥
आग लगै अरु नाव जु डूबै, धर्मविघन जब आवै ।
चार प्रकार अहार त्यागिकैं, मंत्रसु मनमैं ध्यावै ॥ ३ ॥
रोग असाध्य जरा बहु दीखै, कारन और निहारै ।
बात बड़ी है जो बनि आवै, भार भवनकौ डारै ॥
जो न बनै तौ घरमैं रहिकैं, सबसौं होइ निराला ।
मात पिता सुत तियकौं सोंपै, निज परिगह अहि काला ॥४॥
कुछ चैत्यालै कुछ स्रावक जन, कुछ दुखिया धन देई ।
छिमा छिमा सबसौं करि आछै, मनकी सल्य हनेई ॥
सत्रुनिसौं मिलि निज कर जोरै, मैं बहु करी बुराई ।
तुमसे पीतमकौं दुख दीनैं, ते सब बकसौ भाई ॥ ५ ॥
धन धरती जो मुखतैं मांगै, सो सब दे संतोखै ।
छहौं कायके प्रानी ऊपर, करुना भाव विसेखै ॥

नीचैं घर बैठे इक जागे, कुछ भोजन कुछ पै लै ।
दूधाधारी क्रमक्रम तजिकैं, छाछि अहार पहै लै (?) ॥६॥
छाछि त्यागिकैं पानी राखै, पानी तजि संथारा ।
भूमिमाहिं थिर आसन मांड़े, साधरमी ढिग प्यारा ॥
जब तुम जानौ यह न जपै है, तब जिनवानी कहियौ ।
यौं कहि मौन लियौ सन्यासी, पंच परमपद गहियौ ॥७॥
च्यारौं आराधन मन ध्यावै, बारै भावन भावै ।
दस लच्छन मुनिधर्म विचारै, रत्नत्रय मन लावै ॥
पैंतिस सोलै षट पन चारौं, दो इक वरन विचारै ।
काया तेरी दुखकी ढेरी, ग्यानमई तू सारै ॥ ८ ॥
अजर अमर निज गुनगन पूरौ, परमानंद सुभावै ।
आनँदकंद चिदानँद साहब, तीन जगतपति ध्यावै ॥
छुधा तृषादिक हौंहिं परीषह, सहै भाव सम राखै ।
अतीचार पांचौं सब त्यागै, ग्यानसुधारस चाखै ॥ ९ ॥
हाड़ चाम रहि सूकि जाय सब, धरमलीन तन त्यागै ।
अदभुत पुंन उपाय सुरगमैं, सेज उठै ज्यौं जागै ॥
तहाँसौं आवै सिवपद पावै, विलसै सुक्ख अनंता ।
द्यानत यह गति होहि हमारी, जैनधर्म जैवंता ॥ १० ॥

इति समाधिमरण ।

आलोचनापाठ ।

प्रथम नमौं अरहंतानं, दुतिय नमौं सिद्धानं जी ।
त्रितिय नमौं आइरियानं, नमौं उवज्झायानं जी ॥
पंच नमौं लोए सव्व, साहूनं गुन गाऊं जी ।
चारौं मंगल अरहंत, सिद्ध साधु धर्म ध्याऊं जी ॥ १ ॥
चारौं उत्तम लोकमैं, जिन सिद्ध साधु सुधर्म जी ।
चारौं सरन गहौ जिनवर, सिद्ध साध धर्म पर्म जी ॥
वृषभ चंदप्रभ सांतजिनं, वर्धमान मन वंदौं जी ।
हुई होहिंगी चौवीसी, सब नमि पाप निकंदौं जी ॥ २ ॥
श्रीजिनवचन सुहावने, स्याद्वाद अविरुद्धं जी ।
तीन भवनमैं दीपक वंदौं, त्रिकरण सुद्धं जी ॥
प्रतिमा श्रीभगवंतकी, स्वर्ग मर्त्य पातालं जी ।
कृत्य अकृत्य दुभेदसौं, वंदन करौं त्रिकालं जी ॥ ३ ॥
पूरव पाप जु मैं कियौ, कृत कारन अनुमोदं जी ।
मन वच काय त्रिभेदसौं, सब मिथ्या होदं (?) जी ॥
आगैं पाप जु होयगौ, उनंचास विध नासौं जी ।
वर्तमान अघ छै करौं, तुम आगैं परकासौं जी ॥ ४ ॥
सर्व जीवसौं मित्रता, गुनी देखि हरखाऊं जी ।
दीन दया सठसौं समता, चारौं भावन भाऊं जी ।
प्रभु पूजूं जुग भेदसौं, गुरुपदपंकज सेऊं जी ।
आगम अभ्यासौं सदा, रतनत्रै नित वेऊं जी ॥ ५ ॥
अच्छर मात्र अरथ अनमिल, भूलि कह्यौ सु खिमाऊं जी ।
प्रात दोपहर सांझकौं, अर्ध रात्रमैं भाऊं जी ॥
द्यानत दीनदयालनौं, भौ भौ भगति सु दीजै जी ।
अंत समाधिमरन करौं, राग विरोध हरीजै जी ॥ ६ ॥

इति आलोचनापाठ ।

एकीभावस्तोत्रभाषा[1] ।

दोहा ।

वंदौं श्रीजिनराजपद, रिद्धिसिद्धिदातार ।
विघनहरन मंगलकरन, दारिद दलन अपार ॥

चौपाई ।

मिथ्याभावकरमवँध भयौ, दुरनिवार भव भव दुख दयौ ।
सो सव नास भगतितैं होय, रहै न प्रभु दुखकारन कोय ॥१॥
ग्यान जोत अघतमछ्यकार, अघट प्रकासि कहैं गनधार ।
मो मन-भवन वसै तुव नाम, तहां न भरम तिमिरकौ काम२
पूजा गदगद वच मन काय, करौं हर्ष-जल वदन न्हुवाय ।
विषयव्याल चिरकाल अपार, भाजैं तज तन वंवइ[2] द्वार ३
प्रथम कनकमय भू सव करौ, भविक भाग सुरतैं अवतरौ ।
चित-गृह ध्यान-द्वार तुम आय, करौ हेम तन चित्र न काय४
विन स्वारथ सव जग सुखदाय, जानौ सर्व दर्व परजाय ।
भगति रची चित-सज्या मोहि, तुम वस दुख-गन कैसे होहि५
भम्यौ जगत वनमैं चिरकाल, उपज्यौ खेद अगनि विकराल ।
तुम नय-सुधा-सीत-वावरी[3], पुन्य उदै लहि सव तप हरी ॥६॥
गमन प्रभाव कमल ह्वै देव, परमल श्रीजुत कनक अभेव ।
मो मन परसै तुम सव काय, क्यौं न मिलै मुझ सव सुख आय।
विधि वन तजि सिवसुख घर कियौ, मदन-मानछिनमैं हर लियौ
पीत-पात्र वच सुधा पिवंत, विषै रोगरिपु-त्रास हनंत ॥८॥
तुम ढिग मानसथंभ जु रहै, रतनरासि वहु सोभा लहै ।
देखत मान रोग छय होय, जद्यपि है पाहनमय सोय ९

१ श्रीवादिराजसूरिके संस्कृत एकीभावस्तोत्रका भावानुवाद । २ वमीठा–सर्पका बिल । ३ बावड़ी–वापी ।

तुम मूरति-गिरि सपरस वाय[1], लगैं कर्मरजपुंज पलाय ।
ध्यान तोहि उर कमल मझार, होइ परम पद जग निस्तार१०
भव भव पायौ दुःख अपार, यादि करत लागै असि-धार ।
तुम सव जान प्रधान कृपाल, करी भगति अव होहु दयाल११
पापी स्वान अंतकी वार, लह्यौ स्वर्ग-सुख सुनि नौकार ।
जपौं अमल मन तुम भगवान, अचरज कहा वरौं सिवथान ॥
तुम प्रभु सुद्ध ग्यान-दृगवंत, ताली-भगति विना जो संत ।
मोह जरे दृढ़ मोख-किवार, खोल सकै न लहै सुख सार॥१३॥
मुकति-पंथ अघ तम वहु भर्‍यौ, गढ़े कलेस विषम विसतर्‍यौ ।
सुखसौं सिवपद पहुंचै कोय?जो तुम वच मन दीप न होय ।
कर्म धरा आतम निधि भूरि, दवी कवी[2] पावैं नहिं कूर ।
भगति कुदाल खोद लैं संत, विलसैं परमानंद तुरंत ॥१५॥
स्यादवाद हिमगिरिसौं चली, तुम पद परसि उदधि सिव रली।
भगति गंगमैं मो मन न्हाय, क्यौं न पाप मल कलुष तजाय १६
परमातम थिरपद सुखमई, मैं सदोष तुम सम वुध ठई ।
यदपि असत यह ध्यान तुम्हार, तदपि सुवांछित फलदातार
वचन उदधि सव जग विसतर्‍यौ, स्याद लहरि मिथ्यामल हर्‍यौ।
थिर मन द्वादसांगमैं धरै, ग्यान सुधा पी जम-भय हरै १८
भूषन वसन कुसुम असि गहैं, सोभा रंचक देव न लहैं ।
तुम निपरिग्रह अभै मनोग, कौन काज भूषन असि जोग१९
तुम सोभा नहिं इंद्र जु नयौ, एकाअवतारी सो भयौ ।
लोकनाथ भौ-वारिधि पोत, मुकति-कंत इह विध थुति होत ॥

१ वायु–हवा । २ कभी ।

ए थुतिवचन सु पुदगलरूप, नहिं व्यापैं तुम गुन चिद्रूप।
तद्यपि भगति सुधा जो गहै, मनवांछित फल सुरतरु लहै २२
राग दोष बिन परम उदास, चाहरहित अरु सब जग दास।
भुवनतिलक तुम ढिग रिपु नसै, यह प्रभुता कहिं आन न लसै॥
जस गावैं सुरनारि अपार, ग्यानरूप ग्यायक संसार।
द्वादसांग पढ़ि मोह न रहै, थुति करि सुगमपंथ सिव लहै२३
अनँतचतुष्टयरूप निहाल, ध्यावै मन रुचि सहित त्रिकाल।
पुन्यवान सुभ मारग होइ, तीर्थंकर पद विलसै सोइ ॥२४॥
इंद्र सेव करि पार न लहैं, गनधरादि सब गुन नहिं कहैं।
हम मति तनक कियौ कछु एहु, भगतनि सिव सुरतरु सम देहु

दोहा।

सबद काव्य हित तर्कमैं, वादिराज सिरताज।
एकीभाव प्रगट कियौ, द्यानत भगति जहाज॥२६॥

इति एकीभावस्तोत्र।

स्वयंभूस्तोत्र।

चौपई।

राजविषैं जुगलन सुख किया, राज त्याज भवि सिवपद दिया।
स्वयंबोध स्वंभू भगवान, वंदौं आदिनाथ गुनखान ॥१॥
इंद्र छीरसागर जल लाय, मेर न्हुलाए गाय बजाय।
मदनविनासक सुखकरतार, वंदौं अजित अजितपदधार २
सुकल ध्यान करि करम विनास, घाति अघाति सकल दुखरास
लह्यौ मुकतिपद सुख अविकार, वंदौं संभव भवदुखटार ३
माता पच्छिम रैन मझार, सुपनै सोलैं देखे सार।
भूप पूछि फल सुन हरखाय, वंदौं अभिनंदन मन लाय ४
सब कुवादवादी सिरदार, जीते स्यादवाद धुनि धार।
जैनधरमपरकासक स्वाम, सुमतिदेव पद करौं प्रनाम ५
गरभ अगाऊ धनपति आय, करी नगरसोभा अधिकाय।
बरखे रतन पंदरै मास, नमौं पदमप्रभु सुखकी रास ॥६॥
इंद्र फनिंद्र नरिंद्र त्रिकाल, वानी सुनि सुनि होंहिं खुस्याल।
बारै सभा ग्यानदातार, नमौं सुपारसनाथ निहार ॥७॥
सुगुन छियालिस हैं तुम माहिं, दोष अठारै कोऊ नाहिं।
मोह महातमनासक दीप, नमौं चंदप्रभु राख समीप ॥८॥
बारै विध तप करम विनास, तेरै भेद चरित परकास।
निज अनिच्छ भवि इच्छकदान, वंदौं पहुपदंत मन आन ९
भवि सुखदाय सुरगतैं आय, दसविध धर्म कह्यौ जिनराय।
आप समान सबनि सुख देह, वंदौं सीतल धरि मन नेह १०
समता सुधा कोपविषनास, द्वादसांग वानी परकास।
चारि संघ आनँददातार, नमौं स्त्रिअंस जिनेसुर सार ११
रतनत्रय सिर मुकुट विसाल, सोभै कंठ सुगुनमनिमाल।
मुकत-नारि-भरता भगवान, वासुपूज्य वंदौं धरि ध्यान १२

परम समाधिसरूप जिनेस, ग्यानी ध्यानी हितउपदेस ।
करम नास सिवसुख विलसंत, वंदौं विमलनाथ भगवंत १३
अंतर बाहर परिगह डार, परम दिगंवर व्रतकौं धार ।
सरव जीव हित राह दिखाय, नमौं अनंत वचन मन काय ।
सात तत्त्व पंचासति काय, अरथ नवौं छ दरव बहु भाय ।
लोक अलोक सकल परकास, वंदौं धर्मनाथ अघनास १५
पंचम चक्रवर्त्ति निधि भोग, कामदेव द्वादसम मनोग ।
सांतिकरन सोलम जिनराय, सांतिनाथ वंदौं हरखाय १६
बहु थुति करैं हरख नहिं होय, निंदैं दोष गहैं नहिं सोय ।
सीलवान परब्रह्मस्वरूप, वंदौं कुंथुनाथ सिवभूप ॥ १७ ॥
बारै गन पूजैं सुखदाय, थुति वंदना करैं अधिकाय ।
जाकी निज थुति कबहु न होय, वंदौं अर जिनवर पद दोय ।
परभौ रतनत्रै अनुराग, इस भौ व्याह समै वैराग ।
बाल ब्रह्म पूरनव्रतधार, वंदौं मल्लिनाथ जितमार ॥ १९ ॥
विन उपदेस स्वयं वैराग, थुति लौकांत करैं पग लाग ।
'नमः सिद्ध' कहि सब व्रत लेहिं, वंदौं मुनिसुव्रत व्रत देहिं २०
स्रावक विद्यावंत निहार, भगतिभावसौं दियौ अहार ।
वरखै रतनरासि ततकाल, वंदौं नमि प्रभु दीनदयाल २१
सब जीवनके वंदी छोर, राग दोष दो बंधन तोर ।
रजमति तजि सिव तियकौं मिले, नेमिनाथ वंदौं सुखनिले ।
दैत्य कियौ उपसर्ग अपार, ध्यान देखि आयौ फनिधार ।
गयौ कमठ सठ मुख करि स्याम, नमौं मेरु सम पारसस्वाम ।
भौसागरतैं जीव अपार, धरमपोतमैं धरे निहार ।
डूबत काढ़े दया विचार, वरधमान वंदौं बहु वार ॥२४॥

दोहा ।

चौबीसौं पदकमलजुग, वंदौं मन वच काय ।
द्यानत पढ़ै सुनै सदा, सो प्रभु क्यौं न सुहाय ॥ २५ ॥

इति स्वयंभूस्तोत्र ।

पार्श्वनाथस्तवन ।

भुजङ्गप्रयात ।

नरिंदं फनिंदं सुरिंदं अधीसं ।
सतिंदं सुपूजैं भजैं नाइ सीसं ॥
मुनिंद्रं गनिंद्रं नमैं जोरि हाथं ।
नमौं देवदेवं सदा पार्सनाथं ॥ १ ॥
गजेंद्रं मृगेंद्रं गह्यौ तू छुटावै ।
महा आगतैं नागतैं तू बचावै ॥
महानीरतैं जुद्धतैं तू जितावै ।
महारोगतैं बंधतैं तू खुलावै ॥ २ ॥
दुखी दुःखहर्ता सुखी सुःखकर्ता ।
सबै सेवकोंकौं महानंदभर्ता ॥
हरै जच्छ राच्छस भूतं पिसाचं ।
विषं डाकिनी विघ्नके भै अवाचं ॥ ३ ॥
दरिद्रीनिकौं तैं भले दान दीनैं ।
अपुत्रीनिकौं तैं भले पुत्र कीनैं ॥
महा संकटोंतैं निकालै विधाता ।
सबै संपदा सर्वकौं देह दाता ॥ ४ ॥
महा चोरकौ वज्रकौ भै निवारै ।
महा पौनके पुंजतैं तू उबारै ॥
महा क्रोधकी आगकौं मेघधारा ।
महालोभ सैलेसहीं वज्र भारा ॥ ५ ॥
महा मोह अंधेरकौं ग्यान भानं ।
महा कर्म-कांतारकौं दौ प्रधानं ॥

किये नाग नागी अधोलोकस्वामी ।
हर्यौ मान तैं दैत्यकौ ह्वै अकामी ॥ ६ ॥
तुही कल्पवृच्छं तुही कामधेनं ।
तुही दिव्य चिंतामनिं नास ऐनं ॥
पसू नर्कके दुःखसेती छुड़ावै ।
महा स्वर्गमैं मोच्छमैं तू बसावै ॥ ७ ॥
करै लोहकौं हेम पाखान नामी ।
रटै नाम सो क्यौं न हो मोखगामी ॥
करै सेव ताकी करैं देव सेवा ।
सुनै बैन सो ही लहै ग्यान मेवा ॥ ८ ॥
जपै जाप ताकौं कहा पाप लागैं ।
धरैं ध्यान ताके सबै दोष भागैं ॥
बिना तोहि जानैं धरे भौ घनेरे ।
तिहारी कृपातैं सरे काज मेरे ॥ ९ ॥

सोरठा ।

गनधर इंद्र न करि सकैं, तुम विनती भगवान ।
द्यानत प्रीत निहारिकैं, कीजै आप समान ॥ १० ॥

इति पार्श्वनाथस्तोत्र ।

तिथिषोड़शी ।

दोहा ।

बानी एक नमौं सदा, एक दरव आकास ।
एक धरम अधरम दरव, पड़िवा सुद्ध प्रकास ॥ १ ॥

चौपई ।

दोज दुभेद सिद्ध संसार, संसारी त्रस थावर धार ।
सु-पर-दया दोनौं मन धरौ, राग दोष तजि समता करौ॥२
तीज त्रिपात्र दान नित भजौ, तीन काल सामायिक सजौ ।
वै उतपात ध्रौव्य पद साध, मन वच तन थिर होय समाध॥३
चौथ चार विध ध्यान विचार, चार्‌यौं आराधना सँभार ।
मैत्री आदि भावना चार, चार बंधसौं भिन्न निहार ॥ ४ ॥
पांचैं पंच लबधि लहि जीव, भज परमेष्ठी पंच सदीव ।
पांच भेद स्वाध्याय बखान, पांचौं पैंताले पहचान ॥ ५ ॥
छट छै लेस्याके परनाम, पूजा आदि करौ षट काम ।
पुग्गलके जानौं षट भेद, छहौं काल लखिकैं सुख वेद ॥ ६ ॥
सातैं सात नरकतैं डरौ, सात खेत धन जलसौं भरौ ।
सातौं नय समझौ गुनवंत, सात तत्त्व सरधा करि संत ॥७॥
आठैं आठ दरसके अंग, ग्यान आठ विध गहौ अभंग ।
आठ भेद पूजौ जिनराय, आठ जोग कीजै मन लाय ॥ ८ ॥
नौमी सील-वाड़ि नौ पाल, प्रायश्चित नौ भेद सँभाल ।
नौ छायिक गुन मनमैं राख, नो कषायकी तजि अभिलाख ॥
दसमी दस पुग्गल परजाय, दसौं बंध हर चेतनराय ।
जनमत दस अतिसै जिनराज, दस विध परिगहसौं क्या काज
ग्यारसि ग्यारै भाव समाज, सब अहमिंदर ग्यारै राज ।
ग्यार जोग सुरलोक मझार, ग्यारै अंग पढ़ैं मुनि सार ११

बारसि बारै विध उपजोग, बारै प्रकृति दोषकी रोग ।
बारै चक्रवर्ति लखि लेहु, बारै अव्रतकौं तजि देहु ॥ १२ ॥
तेरसि तेरै स्रावक थान, तेरै भेद मनुज पहचान ।
तेरै रागप्रकृति सब निंद, तेरै भाव अजोगि-जिनंद ॥ १३ ॥
चौदस चौदै पूरव जान, चौदै बाहिज अंग बखान ।
चौदै अंतर परिगह डार, चौदै जीवसमास विचार ॥ १४ ॥
मावस सम पंद्रै परमाद, करम भूमि पंदरै अनाद ।
पंच सरीर पंदरै रूप, पंदरै प्रकृति हरै मुनिभूप ॥ १५ ॥
पूरनमासी सोलै ध्यान, सोलै स्वर्ग कहे भगवान ।
सोलै कषाय राह घटाय, सोल कला सम भावनि भाय १६
सब चरचाकी चरचा एक, आतम आतम पर पर टेक ।
लाख कोटि ग्रंथनकौ सार, भेद-ग्यान अरु दयाविचार १७

दोहा ।

गुनविलास सब तिथि कहीं, हैं परमारथरूप ।
पढ़ै सुनै जो मन धरै, उपजै ग्यान अनूप ॥ १८ ॥

इति तिथिषोड़शी ।



स्तुतिबारसी ।

दोहा ।

तुम देवनिके देव हौ, सुखसागर गुनखान ।
मूरति गुन को कहि सकै, करौं कछू थुति गान ॥ १ ॥
फलै कलपतरुवेलि ज्यौं, वंछित सुर नर राज ।
चिंतामनि ज्यौं देत है, चिंतित अर्थसमाज ॥ २ ॥
स्वामी तेरी भगतिसौं, भक्त पुन्य उपजाय ।
तीन अरथ सुख भोगवै, तीनौं जगके राय ॥ ३ ॥
तेरी थुति जे करत हैं, तिनकी थुति जग होय ।
जे तुम पूजैं भावसौं, पूजनीक ते लोय ॥ ४ ॥
नमस्कार तुमकौं करैं, विनयसहित सिर नाय ।
वंदनीक ते होत हैं, उत्तम पदकौं पाय ॥ ५ ॥
जे आग्या पालैं प्रभू, तिन आग्या जगमाहिं ।
नाम जपै तिस नामना, जग फैलै जस छाहिं ॥ ६ ॥
सफल नैन मेरे भये, तुम मुख सोभा देख ।
जीभ सफल मेरी भई, तुम गुन नाम विसेख ॥ ७ ॥
सफल चित्त मेरौ भयौ, तुम गुन चिंतत देव ।
पाय सफल आयें भये, हाथ सफल करि सेव ॥ ८ ॥
सीस सफल मेरौ भयौ, नमौं तुमैं भगवान ।
नर-भौ लाहा मैं लहा, चरनकमल सरधान ॥ ९ ॥
गनधर इंद्र न जात हैं, तुम गुनसागर पार ।
कौन कथा मेरी तहां, लीजै प्रीत निहार ॥ १० ॥
तातैं बंदौं नाथजी, नमौं सुगुनसमुदाय ।
तीर्थंकर पदकौं नमौं, नमौं जगत सुखदाय ॥ ११ ॥
पूजा थुति अरु बंदना, कीनी निज मन आन ।
द्यानत करुना भावसौं, कीजै आप समान ॥ १२ ॥

इति स्तुतिबारसी ।

यतिभावनाष्टक ।

सवैया इकतीसा ।

जगत उदास आपकौं प्रकास संग नास,
धर सुभ व्रत रास बनवास बसे हैं ।
मोह कर्मकौ प्रभाव संकल्प विकल्प भाव,
सबकौ अभाव करि अंतरकौं धसे हैं ॥
प्रानायाम विध साध ध्यानरीतिकौं अराध,
पौन मन ग्यान थिर एक रूप लसे हैं ।
परमानंद लीन धीर मेर ज्यौं अचल बीर,
नमौं साध पायनिकौं देखैं दुख नसे हैं ॥ १ ॥
मनकौं निरोध इंद्री सांपकौ जहर सोध,
सासोस्वास पौन सोऊ थिर भाव करी है ।
सूनी कंदरामैं पैठि वैठि पदमासनसौं,
सिव अभिलाखा अभिलाख सब हरी है ॥
तजि राग दोष व्याध समता चेतन साध,
धीरजसौं अंतर सरूप दिष्टि धरी है ।
ऐसी दसा होयगी हमारी कब भगवान,
सोई पुरुषारथ है सोई धन घरी है ॥ २ ॥
धूलि करि मंडित न मंडित है अंबरसौं,
बैठि पदमासन खड़ासन अटल है ।
तत्त ग्यान सार गहि मौन सांत मुद्रा धारि,
अध खुले नैन दिष्टि नासिका अचल है ॥
बाहर वैरागरूप अंतर निरंजन लौ,
खाजकौं खुजावैं मृग जानकै उपल है ।

१ परिग्रह । २ कपड़ा ।

ऐसी दसा होयगी हमारी तब जानहिंगे,
नरभव पाय पायौ सुक्रतकौ फल है ॥ ३ ॥
सून्यवास घर वास छिमा नारिसौं अभ्यास,
दसौं दिसा अंबर संतोष महा धन है ।
सैल-सिला सेज सार दीप चंद्रमा निहार,
तपका व्यौहार सब मैत्री परिजन है ॥
ग्यान सुधा भोजन है अनुभौ-सरूप सुख,
ऐसी सौंज परसेती कहा परोजन है ।
एक दसा लई महाराजकी अवस्था भई,
समता कहा है महा लोभकौ सदन है ॥ ४ ॥
जगमैं चौरासी लाख जोनिकौ फिरनहार,
नर अवतार महा पुन्य उदै पावै है ।
उत्तम सुकुल दिढ़ काय आयु पूरनता,
बुद्धि सास्त्र-ग्यान भागसेती बनि आवै है ॥
तिसपै वैराग होय तप तपै कृती सोय,
सोऊ ध्यान सुधापान करै लव लावै है ।
कंचन महल पर मनिमै कलस धर,
आतमतैं सोई परमातम कहावै है ॥ ५ ॥
ग्रीषम सिखर सीस पावसमैं तरु तलैं,
सीत काल चौपथमैं देह नेह हस्यौ है ।
वज्र परैं त्रासनसौं आगके प्रकासनसौं,
प्रानके विनासनसौं ध्यान नाहिं टस्यौ है ॥
जप जोग तप धारि भेदग्यानकौं संभारि,
चंचलता चित्त मारिकै समाध वस्यौ है ।

१ प्रयोजन–मतलब । २ मणिमय–रत्नजडित ।

समरस-धाम अभिराम साध राजत है,
ऐसे कब हौंहिं हम ऐसौ मन कर्‌यौ है ॥ ६ ॥
विवहारमाहिं तत्त्व बैनद्वार आवत है,
निहचै विसुद्धरूप न्यारौ है उपाधसौं ।
चिदानंद जोतकौ उदोत अंतरंग भयौ,
ताहीमैं मगन सदा भीजै है समाधसौं ॥
सोई धन सोई धाम सोई सोभ सोई काम,
सोई प्रीत सोई सुख सिद्धता अराधसौं ।
ऐसे मुनिराज मम काज करौ दोष हरौ,
निज मुद्रा देहु हम छूटैं आध व्याधसौं ॥ ७ ॥
पाप-अरि-हार चक्र सक्र सिव-सुखकार,
धीरज बढ़ै अपार वंछित दातार जी ।
भागैं भोग कारे नाग प्रगटै महा विराग,
साधभावनाअष्टक पढ़ौ तिहुं बार जी ॥
चिदानंद भावमैं पद्‌मनंद राजत हैं,
भक्तिवस भव्यनकौ कीनौ उपगारजी ।
भूल चूक सोधि लेहु हमैं मति दोष देहु,
द्यानत या मिससेती लीनौं नाम सार जी ॥ ८ ॥

दोहा ।

द्यानत जिनके नामतैं, पाप धूरि हो दूरि ।
तिन साधनकी भावना, क्यौं न लहै सुख भूरि ॥ ९ ॥

इति यतिभावनाष्टक ।

---

१ यह पद्मनन्दि आचार्यकी पद्मनन्दिपंचविंशतिकाके एक अष्टकका अनुवाद है ।

सज्जनगुणदशक ।

सवैया इकतीसा ।

तरौंकी कलम सिंधु स्याही भूमि कागदपै,
सारदा सहस कर सदा लिखै नाथ जी ।
तुम गुनकौ न पार ग्यानादि अनंत सार,
कर्म घन हान निरावर्ण भान आथ (?) जी ॥
तिनमैं कौ कोई एक गुनहूकौ कोई अंस,
हमैं देहु सज्जन कहावैं संत साथ जी ।
तुम हौ कृपाल प्रतिपाल दीनके दयाल,
द्यानत सेवक वंदै हाथ लाय माथ जी ॥ १ ॥
धन तौ तनक पाय दानकौ पन न जाय,
काय है निवल व्रत धीरजसौं धरैं हैं ।
बुद्धि थोरी जिय माहिं पै अभ्यास किये जाहिं,
बात नाहिं कहैं जो पै कहैं सोई करैं हैं ॥
कैसे किन कष्ट परैं सज्जनतासौं न टरैं,
ग्रीषममैं चंद किरन अमृत ही झरैं हैं ।
साहवसेती हजूर भोगनसौं रहैं दूर,
सुख भरपूर लहैं दुःखमूर हरैं हैं ॥ २ ॥
बात कहा दुष्टनिकी सांपकौ सुभाव लियैं,
गुन दूध दियैं विष औगुन धरत हैं ।
ऐसे बहु जीव गुन दोष गुन दोष करैं,
गालागाली मुजरेसौं मुजरा करत हैं ॥
धनि आम ईखसे हैं मारैं फल पीड़ैं रस,
चंद जैसे जनदुख-तापकौं हरत हैं ।

पर उपगारी गुन भारी सो सराहनीक,
और सब जीव भव भाँवर भरत हैं ॥ ३ ॥
एकनिकैं पुन्य उदै पुन्यकर्मबंध होय,
एकनिकैं पुन्य उदै पापबंध होत है ।
एकनिकैं पाप उदै पापकर्मबंध होय,
एकनिकैं पाप उदै बंधे पुन्य गोत है ॥
उदै सारू कौन बात उदै कहैं मूढ़ भ्रात,
आलस सुभावी जिनके हियैं न जोत है ।
उद्यमकी रीत लई पर्मारथ प्रीत भई,
स्वारथ विसारैं निज स्वारथ उदोत है ॥ ४ ॥
विद्यासौं विवाद करैं धनसौं गुमान धरैं,
बलसौं लराई लरैं मूढ़ आधव्याधमैं ।
ग्यान उर धारत हैं दानकौं संभारत हैं,
परभै निवारत हैं तीनौं गुन साधमैं ॥
पर दुख दुखी सुखी होत हैं भजनमाहिं,
भवरुचि नाहीं दिन जात हैं अराधमैं ।
देहसेती दुबले हैं मनसेती उजले हैं,
सांति भाव भरैं घट परैं ना उपाधमैं ॥ ५ ॥
पोषत है देह सो तौ खेहकौ सरूप बन्यौ,
नारि संग प्यार सदा जार-रंग राती है ।
सुतसौं सनेह नित 'देह देह' किया करै,
पावै ना कदाचि तौ जलावै आन छाती है ॥
दामसौं बनावै धाम हिंसा रहै आठौं जाम,
लछमी अनेक जोरै संग नाहिं जाती है ।

नामकी विटंबनासौं खाम काम लागि रह्यौ,
साहबकौं जानैं बिन होत ब्रह्मघाती है ॥ ६ ॥
काहू न सतावै छल छिद्र न बनावै सब-
हीके मन भावै परमारथ सुनावना ।
लोभकी न वाव होय क्रोधकौ न भाव जोय,
पांचौं इंद्री संवर दिगंबरकी भावना ॥
अरचाकी चाल लियें चरचाकौ ख्याल हियें,
साधनिकी संगतिमैं निहचैंसौं आवना ।
मौन धर रहै कहै सुखदाई मीठे बैन,
प्रभुसेती लव लाय आपकौं रिझावना ॥ ७ ॥
वृच्छ फलैं पर-काज नदी औरके इलाज,
गाय-दूध संत-धन लोक-सुखकार है ।
चंदन घसाइ देखौ कंचन तपाइ देखौ,
अगर जलाइ देखौ सोभा विसतार है ॥
सुधा होत चंदमाहिं जैसैं छांह तरु माहिं,
पालेमैं सहज सीत आतप निवार है ।
तैसैं साधलोग सब लोगनिकौं सुखकारी,
तिनहीकौ जीवन जगत माहिं सार है ॥ ८ ॥
पूजा ऐसी करैं हमैं सब संत भला कहैं,
दान इह विध दैहिं लैहिं मुझ नामकौं ।
सास्त्रके संजोग कर लोग आवैं मेरे घर,
बात अच्छी कहूं मोहि पूछैं सब कामकौं ॥
प्रभुताकी फांसमैं फस्यौ है जगवासी जीव,
अविनासी बूझ नाहिं लाग्यौ धन धामकौं ।

धारी तैं अनंती जोनि नाम गह्यौ कौन कौन,
तेरौ नाम चेतन तू देखि आप ठामकौं ॥ ९ ॥
भाड़ा दे वसत जैसैं भौनमैं लसत ऐसैं,
आपकौं मुसाफिर ही सदा मान लेत है।
धाय-नेह बालक ज्यौं पालक कुटंब सब,
ओषध ज्यौं भोगनिकौं भोगत सचेत है ॥
नीतिसेती धन लेय प्रीतिसेती दान देय,
कब घर छूटै यह भावनासमेत है।
औसरकौं पाय तजि जाय एक रूप होय,
द्यानत बेपरवाह साहबसौं हेत है ॥ १० ॥
पंडित कहावत हैं सभाकौं रिझावत हैं,
जानत हैं हम बड़े यही बड़ी मार है।
पूरव आचारजौंकी बानी पेख आप देख,
मैं तौ कछु नाहिं यह बात एक सार है ॥
भाषत हौं कौन ठाम ठानत हौं कौन काम,
आवत है लाज दूजी बात सिरदार है।
तीजी बात बैन सब पुद्गल दरवरूप,
द्यानत हम चिद्रूप लखैं होत पार है ॥ ११ ॥

इति सज्जनगुणदशक।

वर्तमान-बीसी-दशक।

कवित्त (३१ मात्रा)।

सीमंधर परथम जिन साहब, अंत अजितवीरज परमेस।
भविक जीव मन-पदम विकासन, मोह तिमिरकौं हरन दिनेस
समोसरन बारै जोजन धनु, पनसै पूरब कोड़ गनेस।
बीसौं जिन अब हैं विदेहमैं, वंदि निकंदौं पाप कलेस ॥ १ ॥
जंबु सुदरसन मेर मध्यतैं, पूर्वविदेह आठमा थान।
सीता नदी तासतैं उत्तर, नील सिखरतैं दच्छिन आन ॥
देवारन वनके समीप है, पुंडरीकनी नगरी मान।
तामैं श्रीदेवाधिदेव सीमंधर स्वामि नमौं धरि ध्यान ॥ २ ॥
जंबु सुदरसन मेर मध्यतैं, पछिम विदेह आठमा ओर।
सीतोदाकी उत्तरकी दिसि, नील सिखरतैं दच्छिन जोर ॥
भूतारन वनके समीप है, नगरी विजय वचन न कठोर।
परमपूज जुगमंधर सूरज, भजैं भजैंगे पातिग चोर ॥ ३ ॥
जंबु सुदरसन मेर मध्यतैं, पूर्व विदेह आठमा थान।
सीता नदी तासतैं दच्छिन, निषध सैलतैं उत्तर जान ॥
देवारन वनके समीप है, पुरी सुसीमा सुखकी खान।
करुनासिंधु सुबाहु जिनेसुर, सेऊं मनवांछित-फल-दान॥४॥
जंबु सुदरसन मेर मध्यतैं, पच्छिम दिसि अष्ठम सुभ खेत।
सीतोदातैं दच्छिनकी दिस, निषध सैलतैं उत्तर चेत ॥
भूतारन वनके समीप है, नगरी बीतसोक सुखहेत।
बाहु प्रभू सिवराह बतावत, वंदत पाऊं परम निकेत ॥५॥
विजय मेरतैं चार इही विध, अचल मेर चव इसी प्रकार।
मंदर मेर चार याही बिध, विद्युतमाली इह विध चार ॥

अष्टम थान नदी गिर वन पुर, पूरववत सोलै जिन सार।
अनुक्रम नाम फेर अरु कछुना, वंदों वीसौं सुखदातार ॥६॥

सवैया इकतीसा।

सीमंधर जुगमंधर औ सुबाहु बाहुजी,
सुजात स्वयंप्रभजी नासौ भव-फंदना।
रिखभानन अनंत वीरज सौरीप्रभजी,
विसाल वज्रधार चंद्राननकौं वंदना॥
भद्रबाहु स्रीभुजंग ईस्वरजी नेमि प्रभू,
वीरसेन महाभद्र पापके निकंदना।
जसोधर अजितवीर्ज वर्तमान वीसौं जी,
द्यानतपै दया करौ जैसैं तात नंदना॥ ७॥

कवित्त (३१ मात्रा)।

जहां कुदेव कुलिंग कुआगम,-धारक जीव छहौं नहिं कोय।
तीन वरन इक जैन महामत, तहां षट् मतकौ भेद न होय॥
चौथा काल सदा जहां राजै, प्रलैकाल कब हीं नहिं जोय।
तप करि साध विदेह होत सो, भूविदेह सरधैं बुध सोय॥८॥
इक सौ साठ विदेह विराजैं, वीसौं तीर्थंकर नित ठाहिं।
कौन जिनेस्वर कौन थानमैं, यह ब्यौरा सब जानैं नाहिं॥
द्यानत जाननि कारन कीनैं, हंसौ मती हौं सठ बुधि माहिं।
जिह तिह भांति नाम जिन लीजै, कीजै सब सुख दुख मिटि जाहिं।

दोहा।

वीसौं तीर्थंकर उहां, इहां न जानै कोय।
सरधा निहचै मन धरैं, सम्यक निरमल होय॥१०॥

इति वर्तमानवीसी-दशक।

अध्यात्मपंचासिका।

दोहा।

आठ करमके बंधमैं, बँधे जीव भववास।
करम हरे सब गुन भरे, नमौं सिद्ध सुखरास॥ १॥
जगत माहिं चहु गतिविषैं, जनम-मरन-बस जीव।
मुकति माहिं तिहु कालमैं, चेतन अमर सदीव॥ २॥
मोख माहिं सेती कभी, जगमैं आवै नाहिं।
जगके जीव सदीव ही, कर्म काटि सिव जाहिं॥ ३॥
पूरव कर्म उदोततैं, जीव करै परनाम।
जैसैं मदिरा पानतैं, करै गहल नर काम॥ ४॥
तातैं बांधै करमकौं, आठ भेद दुखदाय।
जैसैं चिकने गातपै, धूलि पुंज जम जाय॥ ५॥
फिर तिन कर्मनिके उदै, करै जीव बहु भाव।
फिरकै बाँधै करमकौं, यह संसार सुभाव॥ ६॥
सुभ भावनतैं पुन्य है, असुभ भावतैं पाप।
दुहु आच्छादित जीव सो, जान सकै नहिं आप॥७॥
चेतन कर्म अनादिके, पावक काठ बखान।
खीर नीर तिल तेल ज्यौं, खान कनक पाखान॥ ८॥
लाल बंध्यौ गठरी विषैं, भान छिप्यौ घन माहिं।
सिंह पींजरेमैं दियौ, जोर चलै कछु नाहिं॥ ९॥
नीर बुझावै आगिकौं, जलै टोकनी (?) माहिं।
देह माहिं चेतन दुखी, निज सुख पावै नाहिं॥ १०॥
जदपि देहसौं छुटत है, अंतर तन है संग।
सो तन ध्यान अगनि दहै, तब सिव होय अभंग॥११॥

रागदोषतैं आप ही, परै जगतके माहिं ।
ग्यान भावतैं सिव लहै, दूजा संगी नाहिं ॥ १२ ॥
जैसैं काहू पुरुषकौ, दरव गढ़ा घर माहिं ।
उदर भरै कर भीखसौं, व्यौरा जानैं नाहिं ॥ १३ ॥
ता दिनसौं किनही कहा, तू क्यौं मागै भीख ।
तेरे घरमैं निधि गढ़ी, दीनी उत्तम सीख ॥ १४ ॥
ताके वचन प्रतीतिसौं, हरख भयौ मन माहिं ।
खोदि निकाले धन विना, हाथ परै कछु नाहिं ॥१५॥
त्यौं अनादिकी जीवकैं, परजै-बुद्धि वखान ।
मैं सुर नर पसु नारकी, मैं मूरख मतिमान ॥ १६ ॥
तासौं सदगुरु कहत हैं, तुम चेतन अभिराम ।
निहचै मुकति-सरूप हौ, ए तेरे नहिं काम ॥ १७ ॥
काल लब्धि परतीतिसौं, लखौ आपमैं आप ।
पूरन ग्यान भये विना, मिटै न पुन्य न पाप ॥ १८ ॥
पाप कहत हैं पापकौं, जीव सकल संसार ।
पाप कहैं हैं पुन्यकौं, ते विरले मति-धार ॥ १९ ॥
वंदीखानामैं पर्यौ, जातैं छूटै नाहिं ।
बिन उपाय उद्यम कियैं, त्यौं ग्यानी जग माहिं ॥२०॥
साबुन ग्यान विराग जल, कोरा कपड़ा जीव ।
रजक दच्छ धोवै नहीं, विमल न लहै सदीव ॥ २१ ॥
ग्यान पवन तप अगनि विन, देह मूस जिय हेम ।
कोटि वरषलौं राखियै, सुद्ध होय मन केम ॥ २२ ॥
दरव-करम नोकरमतैं, भाव करमतैं भिन्न ।
विकलप नहीं सुबुद्धिकैं, सुद्ध चेतनाचिन्न ॥ २३ ॥

च्यारौं नाहीं सिद्धकैं, तू च्यारौंके माहिं ।
च्यारि विनासैं मोख है, और वात कछु नाहि ॥२४॥
ग्याता जीवन-मुकत है, एकदेस यह वात ।
ध्यान अगनि करि करम वन, जलै न सिव किम जात॥
दरपन काई अथिर जल, मुख दीसै नहिं कोय ।
मन निरमल थिर विन भयैं, आप दरस क्यौं होय२६
आदिनाथ केवल लह्यौ, सहस वरस तप ठान ।
सोई पायौ भरतजी, एक महूरति ग्यान ॥ २७ ॥
राग दोष संकल्प हैं, नयके भेदविकल्प ।
दोय भाव मिटि जायं जव, तव सुख होय अनल्प २८
राग विराग दुभेदसौं, दोय रूप परनाम ।
रागी भ्रमिया जगतके, वैरागी सिवधाम ॥ २९ ॥
एक भाव है हिरनकैं, भूख लगैं तिन खाय ।
एक भाव मंजारकैं, जीव खाय न अघाय ॥ ३० ॥
विविध भावके जीव वहु, दीसत हैं जग माहिं ।
एक कछू चाहैं नहीं, एक तजैं कछु नाहिं ॥ ३१ ॥
जगत अनादि अनंत है, मुकति अनादि अनंत ।
जीव अनादि अनंत हैं, करम दुविध सुनि संत ॥३२॥
सबकैं करम अनादिके, कर्म भव्यकैं अंत ।
करम अनंत अभव्यकैं, तीन काल भटकंत ॥ ३३ ॥
फरस वरन रस गंध सुर, पाचौं जानै कोय ।
वोलै डोलै कौन है, जो पूछै है सोय ॥ ३४ ॥
जो जानै सो जीव है, जो मानै सो जीव ।
जो देखै सो जीव है, जीवै जीव सदीव ॥ ३५ ॥

जानपना दो बिध लसै, विषै निरविषै भेद ।
निरविषई संवर लहै, विषई आस्रव वेद ॥ ३६ ॥
प्रथम जीवसरधानसौं, करि वैराग उपाय ।
ग्यान क्रियासौं मोख है, यही वात सुखदाय ॥ ३७ ॥
पुद्गलसौं चेतन बंध्यौ, यह कथनी है हेय ।
जीव बंध्यौ निज भावसौं, यही कथन आदेय ॥ ३८ ॥
बंध लखै निज औरसौं, उद्दिम करै न कोय ।
आप बंध्यौ निजसौं समझ, त्याग करै सिव होय ॥३९॥
जथा भूपकौं देखिकै, ठौर रीतिकौं जान ।
तब धन अभिलाखी पुरुष, सेवा करै प्रधान ॥ ४० ॥
तथा जीव सरधान करि, जानै गुन परजाय ।
सेवै सिव धन आस धरि, समतासौं मिलि जाय ॥४१॥
तीन भेद व्यवहारसौं, सरब जीव सम ठाम ।
बहिरंतर परमातमा, निहचैं चेतनराम ॥ ४२ ॥
कुगुरु-कुदेव-कुधर्मरत, अहंबुद्धि सब ठौर ।
हित अनहित सरधै नहीं, मूढ़नमैं सिरमौर ॥ ४३ ॥
आप आप पर पर लखै, हेय उपादे ग्यान ।
अव्रती देशव्रती महा,-व्रती सबै मतिमान ॥ ४४ ॥
जा पदमैं सब पद लसैं, दरपन ज्यौं अविकार ।
सकल विकल परमातमा, नित्य निरंजन सार ॥ ४५ ॥
बहिरातमके भाव तजि, अंतर आतम होय ।
परमातम ध्यावै सदा, परमातम है सोय ॥ ४६ ॥
बूंद उदधि मिलि होत दधि, वाती फरस प्रकास ।
त्यौं परमातम होत हैं, परमातम अभ्यास ॥ ४७ ॥

सब आगमकौ सार जो, सब साधनकौ धेव ।
जाकौं पूजैं इंद्र सौ, सो हम पायौ देव ॥ ४८ ॥
सोहं सोहं नित जपै, पूजा आगम सार ।
संतसंगतिमैं बैठना, एक करै व्यौहार ॥ ४९ ॥
अध्यातम पंचासिका, माहिं कह्यौ जो सार ।
द्यानत ताहि लगे रहौ, सब संसार असार ॥ ५० ॥

इति अध्यातमपंचासिका ।



अक्षर-बावनी।

ॐकार सरव अच्छरकौं, सब मंत्रनकौं राजा जी।
तीन लोक तिहुं काल सरव घट, व्यापि रह्यौ सुखकाजा जी ॥
श्रीजिनवानी माहिं बतायौ, पंच परमपदरूपी जी।
द्यानत दिढ़ मन कोई ध्यावै, सोई मुकत-सरूपी जी॥१॥
अमर नाम साहिबका लीजै, काम सबै तजि दीजै जी।
आतम पुग्गल जुदे जुदे हैं, और सगा को कीजै जी ॥
इस जग मात पिता सुत नारी, झूठा मोह बढ़ावै जी।
ईत भीत जम पकड़ मंगावै, पास न कोई आवै जी ॥२॥
उसका इसका पैसा ठगि ठगि, लछमी घरमैं लावै जी।
ऊपर मीठी अंतर कड़वी, बातैं बहुत बनावै जी ॥
रिन ले सुख हो देते दुख हो, घरका करै संभाला जी।
रीस विरानी करै देखिकै, बाहिर रचै दिवाला जी ॥ ३ ॥
लिखै झूठ धन कारन प्रानी, पंचनमैं परवानी जी।
लीन भयौ ममतासौं डोलै, बोलै अंमृत बानी जी ॥
ए नर छलसौं दर्व कमाया, पाप करम करि खाया जी।
ऐन मैन (?) नागा हो निकला, तागा रहन न पायाजी ॥४॥
ओस बूंद सम आव तिहारी, करि कारज मनमाहीं जी।
औसर जावै फिरि पिछतावै, काम सरै कछु नाहीं जी ॥
अंतर करुनाभाव न आनै, हिंसा करै घनेरी जी।
अहि सम हो परजीव सतावै, पावै दुखकी ढेरी जी ॥ ५॥
काम धरमके करै अधूरे, सुख लोरे भरपूरे जी।
खाया चाहै आंब गंडेरी, बोवै आक धतूरे जी ॥

गुरुकी सेवा ठानत नाहीं, ग्यान प्रकास निहारे जी।
घरमैं दान देय नहिं लोभी, बंछै भोग पियारे जी ॥ ६ ॥
नेक धरमकी बात न भावै, अधरमकी सिरदारी जी।
चरचामाहिं बुद्धि नहिं फैलै, विकथाकी अधिकारी जी ॥
छिन छिन चिंता करै पराई, अपनी सुधि बिसराई जी।
जामन मरन अनेक किये तैं, सो सुध एक न आई जी॥७॥
झूठे सुखकौं सुख कर जाना, सुखका भेद न पाया जी।
निराकार अविकार निरंजन, सौ तैं कबहुं न ध्याया जी॥
टेक करै बातनिकी प्रानी, झूठे झगड़े ठानै जी।
ठौर ठिकाना पावै नाहीं, संजम मूल न जानै जी ॥ ८ ॥
डरै आपदासौं निसवासर, पाप करम नहिं त्यागै जी।
ढूढ़ै बाहिर स्वारथ कारन, परमारथ नहिं लागै जी ॥
निसदिन बाँध्यौ आसाफासी, डोलै अचरज भारी जी।
तब आसा बंधनसौं छूटै, होय अचल सुखकारी जी ॥ ९॥
थिरता गहि तजि फिकर अनाहक, समता मनमैं आनौ जी।
दरसन ग्यान चरन रतनत्रै, आतमतत्त्व पिछानौ जी ॥
धरम दया सब कहैं जगतमैं, पालैं ते बड़भागी जी।
नेम बिना कछु बनि नहिं आवै, भाव न होय विरागी जी १०
पंच परम पद हिरदैं धरियै, सुरग मुकतिके दाता जी।
फिरो अनंत बार चहु गतिमैं, रंच न पाई साता जी ॥
बिनासीक संसारदसा सब, धन जोवन घनछाहीं जी।
भूला कहां फिरत है प्राणी, कर थिरता मन माहीं जी ११
मंत्र महा नौकार जपौ नित, जपैं तिहूं जग इंद्रा जी।
यही मंत्र सुनि भए नाग जुग, पदमावति धरनिंद्रा जी ॥

राखौ सम्यक सात विसन तजि, आठ मूल गुन पालौ जी।
लगन लगाय प्रथम प्रतिमासौं, बारै वरत संभालौ जी॥१२॥

वह मन महा चपल थिर कीजै, सामायिक रस पीजै जी।
सिव अभिलाख धरौ पोसहव्रत, भोजन सचित न कीजै जी॥
षट निसभोजन नारी संगत, तजिकैं सील संभारौ जी।
सब आरंभ परिग्रह भाई, अघ उपदेस संभारौ जी॥१३॥

हरि ममता सब धन परिजनकी, करि निरभै भुव वासा जी।
लेहु अहार उदंड-विहारी, तजि कायाकी आसा जी॥
छिन छिन आतम आतम पर पर, यही भावना भाऊं जी।
बावन अच्छर पढ़ौं अर्थसौं, अथवा मौन लगाऊं जी॥ १४॥

सुद्ध असुद्ध भाव दो तेरे, सुभ अरु असुभ असुद्धं जी।
असुभ भाव सरवथा विनासौ, सुभमैं हो प्रतिबुद्धं जी॥
सुद्ध भाव जिह बिध बनि आवै, सोई कारज धारौ जी।
द्यानत जीवन निपट सहल है, जगतैं आप निकारौ जी॥१५॥

इति अक्षरबावनी।

नेमिनाथ-बहत्तरी।

अडिल्ल।

वंदौं नेमि जिनंद, चंद निरधार हैं।
वचन किरन करि, भ्रम तम नासनिहार हैं॥
भवि चकोर बुध कुमुद, नखत मुनि सुक्खदा।
ग्यान-सुधा भौ-तपत, नास पूरन सदा॥ १॥

मथुरामैं हरि कंस, विधंस किया जबै।
समुदविजै दस भ्रात, किस्न हलधर सबै॥
जरासिंधसौं डरि, सौरीपुरकौं चले।
आए सागर तीर, चतुर सब ही मिले॥ २॥

होनहार श्रीनेम, जिनंद प्रभावतैं।
नारायनकौ पुन्य, हली लखि चावतैं॥
आयौ देव तुरंत, द्वारिका पुर किया।
महाबली लखि राज, किस्नजीकौं दिया॥ ३॥

गरभ छमास अगाऊ, धनपति आइयौ।
जनक भवन तिहुं काल, रतन बरसाइयौ॥
कनक रतनमै, अति सोभा पुरकी करी।
मात सिवादेवी सोई, बहु सुख भरी॥ ४॥

सोलै सुपने देखे, पच्छिम रातमैं।
गज पावक अभिराम, उठी सो प्रातमैं॥
समुदविजै पै जाय, सुपन फल सुन लिया।
तिहुजगपति सुत होसी, अति आनंद किया॥ ५॥

कमलवासिनी देवी, सब सेवा करैं।
पंद्रह मास रतन, बरसासौं घर भरैं ॥
आसन कांप्यौ इंद्र, जनम जिनकौ भयौ।
ऐरावति चढ़ि आए, सब सुर सुख लयौ ॥ ६ ॥
गजपै कोड़ सताइस, अपछर नाचहीं।
देवी देव चहूं विध, मंगल राचहीं ॥
इंद्रानी प्रभु लाय, इंद्र करमैं दियौ।
गज चढ़ि छत्र चमर बहु, मेर गमन कियौ ॥ ७ ॥
पांडुक सिल सिंघासनपै, प्रभु थापियौ।
सहस अठोतर कलस, धार जै जै कियौ ॥
पूजा अष्ट प्रकार, करी अति प्रीतिसौं।
नेमिनाथ यह नाम, दियौ गुन रीतिसौं ॥ ८ ॥
मात पिताकौं सौंप, निरत बहु विध भया।
देवकुमारन थाप, आप थानक गया ॥
खान पान पट भूषन, देवपुनीत हैं।
भए कुमर दस गुन, तिहुं ग्यान सुरीत हैं ॥ ९ ॥
सारथ-वाह रतन ले, चक्रीपै गयौ।
जरासिंधु मन कोप, कृस्न ऊपर भयौ ॥
हरि पूछै तब आय, जीत प्रभु कौनकी।
वदन खुसी लखि, जान्यौ हम जै हौनकी ॥ १० ॥

सोरठा।

जरासिंधुकौं जीत, सुर नर खग सब वसि करे।
सोल सहस तिय प्रीत, तीन खंड राजा भये ॥ ११ ॥

भूप कुमर सब साथ, इक दिन कृस्न सभा गये।
उठे सबै नरनाथ, सिंघासन बैठे प्रभू ॥ १२ ॥
बात चली बलरूप, एक कहैं पांडौ बड़े।
एक कहैं हरि भूप, कंस जरासंध जिन हते ॥ १३ ॥
बलभद्र तिह ठाम, कहैं त्रिजग तिहुं कालमैं।
मति लो झूठा नाम, नेमिनाथ सम बल नहीं ॥ १४ ॥
कृस्न कहै तिह बार, स्वबल दिखाऊं स्वामिजी।
सुनि आई सब नारि, लखैं झरोखेमैं खरीं ॥ १५ ॥
नेमि सहज कर वाम, दई कनिष्ठा अंगुली।
मेर अचल ज्यौं स्वाम, कृस्न हलाय सक्यौ नहीं ॥१६॥
नारायन सत भाय, कहै जोर अपनो करौ।
ताही अंगुली लाय, कृस्न उठाय फिराइयौ ॥ १७ ॥
छोड़ि दियौ ततकाल, दीनदयाल दयाल है।
बोल्यौ कृस्न खुस्याल, राज हमारौ अटल है ॥ १८ ॥
नाम भजैं जैकार, देव पहुप-वरषा करैं।
गुन थुति करि बहु वार, विदा किये प्रभु मान दे॥१९॥
हरिकौं फिकर अपार, राज सुथिर मेरौ कहां।
जब लौं नेमिकुमार, मन सोचै देखौ हली ॥ २० ॥

मोतीदाम।

बल तब हरिकौं समझावै, इन तिहुं-जग-राज न भावै।
कछु कारन देखि धरैंगे, दिच्छा सिवनारि बरैंगे ॥ २१॥
तब रितु वसंत सुभ आई, सब भागि चले मिलि भाई।
नेमीस्वर हरि बल सारे, परिजन तिय संग सिधारे ॥२२॥

क्रीड़ा बहु करि वनमाँहीं, हरि तिय भेजी प्रभु पाहीं ।
सब नाचैं गाय बजावैं, होली सम ख्याल मचावैं ॥ २३ ॥
बोली जंबवंती नारी, तुम व्याह करौ सुखकारी ।
प्रभु रंच भए न सरागी, सुचि जल न्हाए वड़ भागी ॥२४॥
यह धोती धोय हमारी, सुनि जंववती रिस धारी ।
मैं कृस्नतनी पटरानी, तिन हू न कही ए बानी ॥ २५ ॥
जिन संख धनुष फनि साधे, ए काम कठिन आराधे ।
जब तुम तीनौं करि आवौ, तव धोती बात चलावौ ॥२६॥
सुनि बोली रुकमनी रानी, सो दिन तू क्यौं विसरानी ।
प्रभु कृस्न उठाय फिरायौ, तव धोती धो गुन गायौ ॥२७॥
जब नेमीस्वर मन आई, जल रेखा सम गरमाई ।
अहिसेजा धनुष चढ़ायौ, नासासौं संख वजायौ ॥ २८ ॥
सुर असुरन अचिरजकारी, अदभुत धुनि सुनि नर नारी ।
भई धूम देसमैं भारी, डरि कंपन लाग्यौ मुरारी ॥ २९ ॥
जांववंती विध सुनि आयौ, प्रभुकौं हरि सीस नवायौ ।
तुम सम तिहु जग बल नाहीं, जिन खुसी गए घरमाहीं ॥३०॥

चौपई ।

तव हरि उग्रसैनसौं भाखी, राजमती कन्या अभिलाखी ।
उत्तम नेमि कुमर वर दीजै, समदविजै नृप समदी कीजै ३१॥
उग्रसैन नृप सुनि हरखाया, नेमिकुमार जमाई पाया ।
छट्ठ सुकल सावन ठहराया, व्याह लगन नृप भौन पठाया ३२
कुल आचार दुहूं घर कीने, मंगल कारज आनंद भीने ।
दान अनेक सबनि सुखदानी, बहु ज्यौनार बहुत विध ठानी॥

चली बरात विविध विसतारी, गान नृत्य वादित्र अपारी ।
जादौ छप्पन कोड़ि तयारी, और भूप बहु विध असवारी ३४
रथ ऊपर श्रीनेमि विराजैं, छत्र चमर सिंघासन छाजैं ।
देवपुनीत[1] दरव सब सोहैं, सुर नर नारिनके मन मोहैं ॥ ३५ ॥
पसु पंखी घेरे वन माहीं, सबनि पुकार करी इक ठाहीं ।
तुम प्रभु दीनदयाल कहाऔ, कारन कौन हमैं मरवाऔ ३६॥
यह दुख-धुनि सुनि नेमिकुमारं, सारथिसौं पूछी तिह वारं ।
प्रभु तुम व्याह निमित सब घेरे, संग मलेच्छ भूप बहुतेरे ३७॥
कंटक-भै पैनही[2] पग माहीं, जीवसमूह हनैं डर नाहीं ।
पर प्राननि करि प्रान भरैं हैं, प्रानी दुरगति माहिं परैं हैं ॥३८॥
धिग यह व्याह नरकदुखदानी, ततछिन छोड़ि दिये सब प्रानी
खुसी सरब निज थान सिधारे, प्रभु तुम वंदी छोर हमारे ३९॥
कुल हरिवंस पुनीत विराजै, यह विपरीत तहां क्यौं छाजै ।
राज-काज हरि यह विधि ठानी, प्रभु मनमैं बातैं सब जानी ४०

चौपई, दूजी ढाल ।

प्रभु भावैं भावन निहपाप, भवतनभोग अथिर थिर आप ।
चहु गति सब असरन सिव सर्न, सिद्ध अमर जग जंमन मर्न॥
एक सदा कोई संग नाहिं, निहचैं भिन्न रहै तन माहिं ।
देह असुच सुच आतम पर्म, नाव छेक जल आस्रव कर्म ॥४२॥
संवर दिढ़ वैराग उपाव, तप निर्जरा अवंछक भाव ।
लोक छदरव अनादि अनंत, ग्यान भान भ्रम तिमर हनंत ४३
काम भोग सब सुख लभ लोय, एक सुद्ध पद दुरलभ सोय ।
लौकांतिक आए तिह घरी, कुसुमांजली दे बहु थुति करी ४४॥

---

१ देवोपनीत-दिव्य । २ जूतियाँ ।

चतुर निकाय देव सब आय, छीरोदधि जल कलस न्हुलाय।
सीस मुकुट पट भूषन माल, मुकति वधू-वर वने रसाल॥४५॥
चढ़ि सुखपाल चले भगवंत, सुर नर खग जै जै उचरंत।
मात सिवादेवी बिललाय, दौरि पालकी पकरी आय॥४६॥
भई मूरछा सुधि बुधि खोय, ज्यौं त्यौं कीनी चेतन सोय।
अहो पुत्र तुम कुल सिंगार, मुझ दुखियाकौ को आधार॥४७॥
जीव भ्रम्यौ जग दुःख अपार, जनम मरन कीने वहु वार।
निज पर भौ भाखे समझाय, गरभवास अव वस्यौ न जाय ४८
तुम माता, चाहो सुख मोहि, हमैं दुखी लखि दुखिया होहि।
मैं जग तरौं वरौं सिव नार, सुत गुन सुनि तुम हरखौ सार ४९
हल वलभद्र कहैं वहु भाय, राज करौ हम सेवैं पाय।
राज विनासी सो किह काज, हम पायौ परमातमराज॥५०॥

दोहाकी ढाल।

जै जै स्वामी नेमिजी, नमौं स्वपद दातार हो।
आप स्वयंभूनैं धरी, दिच्छा गढ़ गिरनार हो॥ ५१॥
एक सहस नृप साथ ले, सिद्धरूप उर धार हो।
इंद्र करी थुति वंदना, सब मिलि वारंवार हो॥ ५२॥
वेलासौं उठि पारना, प्रासुक खीर अहार हो।
वरदत नृप घरमैं भए, पंचाचरज अपार हो॥ ५३॥
खग मृग ले फल फूल सो, वंदैं सीस नवाय हो।
जाकै दरसन देखतैं, जनम वैर मिटि जाय हो॥ ५४॥
छप्पन दिनमैं पाइयौ, केवल ग्यान अपार हो।
समोसरन धनपति कियौ, कहत न आवै पार हो॥५५॥

रजमति अति विललायकैं, ग्यारह प्रतिमा धार हो।
सवै आरजामैं[1] भई, गैननी[2] पद सिरदार हो॥ ५६॥
सूरज सम तम नासकैं, ससि सम वचन प्रकास हो।
मेघ समान सुखी करे, सुरतरु सम गुणरास हो॥ ५७॥
हरि वल सव पूजा करैं, पूजैं इंद्र समस्त हो।
गनधर ठाड़े थुति करैं, पावैं वंछित वस्त हो॥ ५८॥
नारायन वलदेवनैं, पूछी प्रभुसौं वात हो।
द्वारापुर अरु किसनकी, कितनी थिति विख्यात हो॥५९॥
मदके दोष प्रभावतैं, द्वीपायन नर-नाह हो।
इनतैं वारै वर्षमैं, नगर द्वारिकादाह हो॥ ६०॥
हरिकौं जरदकुमारकौं, वाण लगैगौ आय हो।
तातैं संजम लीजियै, घर वासा दुखदाय हो॥ ६१॥
किसन दई पुर घोषणा, दिच्छा लो नरनारि हो।
मैं काहू रोकौं नहीं, नेमि-वचन उर धारि हो॥ ६२॥

दोहाकी दूसरी ढाल।

हो स्वामी भौ जल पार उतार हो। (आंचली)
सतभामा रुकमिनि सबै जी, प्रदमनि आदि कुमार।
वहुतनिनैं दिच्छा लई जी, जान अथिर संसार हो॥६३॥
नगर जरन हरिकौ मरन जी, कहैं वढ़ै विसतार।
वलभद्दर दिच्छा धरी जी, भयौ सुरग अवतार हो॥६४॥
पांचौं पांडौनैं लई, दिच्छा सहित कुटंब।
सुन सुन निज परजायकौं जी, जान्यौ जगत विटंब हो६५

१ आर्यिकाओंमें। २ गणनी-अर्जिकाओंके संघकी स्वामिनी।

नाम कहा लौं मैं कहूं जी, धनि धनि नेमिकुमार।
बंदी छोरे परमजती जी, सब जग तारनहार हो॥ ६६॥
सुगुन अनंत महंत हौ जी, प्रगट छियालिस भास।
दोष अठारे छय गये जी, लोकालोक प्रकास हो॥ ६७॥
बहु नारी प्रतिबोधिकैं जी, भेजीं सुरगति सार।
रजमति तिय लिंग छेदिकैं जी, सोलै सुरग मझार हो॥६८॥
बहुतनकौं सुरपद दियौ जी, बहुतनकौं सिवठाम।
तीन सतक तेतीस संग जी, भये अमर सुखधाम हो॥६९॥
तन कपूर ज्यौं खिर गया जी, रहे केस नख धार।
सुगंध दरव धरि अगन सुर जी, मुकट नम्यौ तिह वार हो७०
कथा तिहारी मुनि कहैं, हमनैं लीनौ नाम।
दो अच्छर नर जे जपैं जी, सीझैं वंछित काम हो॥ ७१॥
सांचे दीन दयाल हौ जी, द्यानत लौ तुम माहिं।
अपनौ पन प्रतिपाल हौ जी, चिंता व्यापै नाहिं हो॥७२॥

इति नेमिनाथवहत्तरी।

वज्रदंत कथा

चौपई।

बैठौ वज्रदंत भूपाल, माली लायौ फूल रसाल॥ (टेक)।
कमल माहिं मृत भ्रमर निहार, चक्री मन कंप्यौ तिह बार१॥
नासा वसि इन खोई देह, मैं सठ कियौ पंचसौं नेह॥ २॥
मति सुत अवधि ग्यानकौं पाय, मैं न कियौ तप मोख उपाय३
भव तन भोगनिकौं धिकार, दिच्छा धरौं वरौं सिव नार॥४॥
सुतकौं सर्व संपदा देय, सो वैरागी राज न लेय॥ ५॥
पुत्र हजार सबनसौं कहा, वौंनै जेम किनहू नहिं गहा॥ ६॥
आपनि मुकत होत हौ भूप, हमकौं क्यौं डोवौ जगकूप॥७॥
पोतेकौं दे राज समाज, आपन चले मुकतिके काज॥८॥
पिता तीर्थंकरके ढिग जाय, नव निधि रत्न तजे दुखदाय॥९॥
तीस सहस नृप पुत्र हजार, साठि सहस रानी संग धार॥१०॥
आप मुकति सब सुगतिमझार, द्यानत नमौं सुपद दातार११

इति वज्रदंतकथा।

---

१ वमन-कैके समान किसीने राज्य नहीं लिया।

आठ गणछन्द ।

दोहा ।

वरधमान सनमति महा, वीर अति महावीर ।
वीर पंच जिस नाम सो, नमौं अंत जिन धीर ॥ १ ॥

सोरठा ।

सब संसार अनित्य, नित्य एक परमातमा ।
वंदि कहूं सुन मित्त, आठ छंद गन आठके ॥ २ ॥

यगण ।

अकर्ता च कर्ता अभुक्ता च भुक्ता,
अनेका अनित्ता निता एक उक्ता ।
मरै ऊपजै ना मरै ना पजै है,
सदा आतमा स्वांग ऐसे सजै है ॥ ३ ॥

रगण ।

चेतना आन है आन देही यही,
तेयपै भेद ज्यौं भेद जानौ सही ।
त्यागियै देहके नेहकी थापना,
देखियै जानियै आतमा आपना ॥ ४ ॥

तगण ।

जो देह सो देह जो ग्यान सो ग्यान,
संबंधके होततैं होत ना आन ।
जो भेदविग्यान धारंत धीवंत,
सो नास भौ-वास स्यौ-वास वासंत ॥ ५ ॥

भगण ।

केवल दर्सन ग्यान विराजत,
लोक अलोक लखैं गुण छाजत ।
कर्म ढक्यौ नहिं आप पिछानत,
सो परमातम क्यौं नहि जानत ॥ ६ ॥

जगण ।

न राग न दोष न बंध न मोष,
सदा अपने गुनमंडित कोष ।
सुभाव रमै पर भावनि खोय,
तिसै परमातमकौ पद होय ॥ ७ ॥

सगण ।

जिसकी थुति इंद्र करै हरखै,
जिसके गुन साध सदा परखै ।
जिसकौं नित वेद बतावत है,
सु तुही निजमैं किन ध्यावत है ॥ ८ ॥

नगण ।

धरम गगन जम अधरम,
वध अवध पुदगल करम ।
पर विरहत सुपदसहत,
सुगुन गहत सु सुख लहत ॥ ९ ॥

मगण ।

सत्तोहं तत्तोहं गेयोहं ग्याताहं,
ग्यानोहं ध्यानोहं ध्येयोहं ध्याताहं ।
पर्मोहं धर्मोहं सर्मोहं बुद्धोहं,
रिद्धोहं वृद्धोहं सिद्धोहं सुद्धोहं ॥ १० ॥

सोरठा ।

बारै अच्छर छंद, चार सहस अरु छयानबै ।
द्यानत हम मतिमंद, भेद कहां लौं कहि सकैं ॥ ११ ॥

इति आठगणछंद ।

धर्म-चाह गीत ।

मैं देव नित अरहंत चाहूं, सिद्धकौ सुमिरन करौं ।
मैं सूरि गुरु मुनि तीन पदमैं, साध पद हिरदै धरौं ॥
मैं धरम करुनामई चाहूं, जहां हिंसा रंच ना ।
मैं सास्त्रग्यान विराग चाहूं, जासमैं परपंच ना ॥ १ ॥

चौवीस श्रीजिनराज चाहूं, और देव न मन वसै ।
जिन वीस खेत विदेह चाहूं, वंदतैं पातिग नसै ॥
गिरनार सिखर समेद चाहूं, चंपापुर पावापुरी ।
कैलास श्रीजिनधाम चाहूं, भजत भाजै भ्रम-जुरी ॥ २ ॥

नौ तत्त्वका सरधान चाहूं, और तत्त्व न मन धरौं ।
षट्‌ दरव गुन परजाय चाहूं, ठीक तासौं भै हरौं ॥
पूजा परम जिनराज चाहूं, और देव नहीं सदा ।
तिहुं कालका मैं जाप चाहूं, पाप नहिं लागै कदा ॥ ३ ॥

सम्यक्त दरसन ग्यान चारित, सदा चाहूं भावसौं ।
दसलच्छनी मैं धरम चाहूं, महा हरष बढ़ावसौं ॥
सोलहौं कारन दुखनिवारन, सदा चाहूं प्रीतिसौं ।
मैं नित अठाई परव चाहूं, महा मंगल रीतिसौं ॥ ४ ॥

मैं वेद चार्‍यौं सदा चाहूं, आदि अंत निबाहसौं ।
पाए धरमके चारि चाहूं, अधिक चित्त उछाहसौं ॥
मैं दान चार्‍यौं सदा चाहूं, भौन वसि लाहा लहूं ।
मैं चारि आराधना चाहूं, अंतमैं एही गहूं ॥ ५ ॥

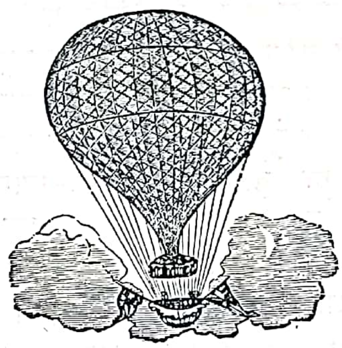
मैं भावना बारहौं चाहूं, भाव निरमल होत है ।
मैं वरत बारै सदा चाहूं, त्याग भाव उदोत है ॥

प्रतिमा दिगंबर सदा चाहूं, ध्यान आसन सोहना ।
सब करमसौं मैं छुटा चाहूं, सिव लहौं जहां मोह ना॥६॥

मैं साहमीकौ संग चाहूं, मीत तिनहीकौं करौं ।
मैं परवके उपवास चाहूं, सरव आरंभ परिहरौं ॥
इस दुखम पंचम काल माहीं, कुल सरावग मैं लहा ।
सब महाव्रत धरि सकूं नाहीं, निवल तन मैंने गहा ॥७॥

यह भावना उत्तम सदा, भाऊं सुनौ जिनराय जी ।
तुम कृपानाथ अनाथ द्यानत, दया करनी न्याय जी ॥
दुख नास कर्म विनास ग्यान, प्रकास मोकौं कीजियै ।
करि सुगतिगमन समाधिमरन, भगति चरनकी दीजियै ॥८॥

इति धर्मचाहगीत ।



आदिनाथस्तुति ।

रेखता ।

तुम आदिनाथ स्वामी, वंदौं त्रिकाल नामी ।
तुम गुन अनंत भारी, हम तनक बुद्धिधारी ॥ १ ॥
थुति कौन भांति गावैं, यह बुद्धि कहां पावैं ।
तुम ही सहाय हूजौ, प्रभु सम न देव दूजौ ॥ २ ॥
सर्वार्थसिद्धिवासी, तिहुं ग्यान सुखविलासी ।
गर्भ मास षट अगाऊ, सुर कियौ नगर चाऊ ॥ ३ ॥
भवि भाग जोग आए, सुर मेरपै न्हुलाए ।
नाभिरायके दुलारे, मरुदेविके पियारे ॥ ४ ॥
जब आंठ वरस धारे, अनुविरत सब संभारे ।
षट लाख पुव्व आए, लखि सवनि सुक्ख पाए ॥ ५ ॥
नाभिराय चित विचारी, संतानवृद्धिकारी ।
तुम परम गुरु सबनके, हम नाम गुरु भवनके ॥ ६ ॥
कहना हमारा कीजै, पानिग्रहन करीजै ।
प्रभु मोह उदै बूझा, चुप रहे भाव सूझा ॥ ७ ॥
तब इंद्र भी आया ही, दो भूप सुता ब्याही ।
भए एक सौ कुमारं, दो सुता गुन अपारं ॥ ८ ॥
सव आप ही पढ़ाए, हुन्नर सबै सिखाए ।
जब कलपवृच्छ भागे, सब नाभि चरन लागे ॥ ९ ॥
नृप ले सवनिकौं आए, प्रभुकौं वचन सुनाए ।
यह प्रजा राखि लीजै, सवहीकौं सुखी कीजै ॥ १० ॥
प्रभु कालथिति विचारी, गई भोगभूमि सारी ।
तब ही सुधर्म आए, षट कर्म सब लगाए ॥ ११ ॥

कलसाभिषेक कीनौं, नाभिनैं स्वराज दीनौं ।
बीस लाख पुव्व आए, तव प्रजापति कहाए ॥ १२ ॥
सब दान सबकौं दीनैं, सब लोग सुखी कीनैं ।
कियौ राज सुख उदारं, सब भोग बहु प्रकारं ॥ १३ ॥
प्रभु भोग तजत नाहीं, इंद्र फिकर चित्त माहीं ।
तव अपछरा पठाई, सो नाचिकै बिलाई ॥ १४ ॥
लखि जगत-थिति विनासी, भए पुव्व लख तिरासी ।
वैराग भाव भाए, लौकांत इंद्र आए ॥ १५ ॥
दियौ भरत राजभारं, किय भूप सब कुमारं ।
चौ सहस भूप साथं, भए जती जगतनाथं ॥ १६ ॥
षट मास जोग दीनौं, तन अचल मेर कीनौं ।
सब साथतैं सु भागे, छुध तृषा काज लागे ॥ १७ ॥
प्रभु पाय जग परे हैं, फल फूल लै धरे हैं ।
नमि विनमि तहां आए, प्रभुकौं वचन सुनाए ॥ १८ ॥
सुत सरव भूप कीनैं, हम क्यौं विसारि दीनैं ।
धरनेंद्र तहां आया, वामनका भेष लाया ॥ १९ ॥
तुम जाहु भरत पासैं, अब राज लेहु वासैं ।
तुझकौं कवन बुलावै, को भरत कौन जावै ॥ २० ॥
इनका कहा करैंगे, इनहीकै हो रहैंगे ।
तब इंद्र भगति भीने, खगपती भूप कीने ॥ २१ ॥
प्रभु जोग पूरा कीना, आहार चित्त दीना ।
आए नगरके माहीं, विधि जानैं कोई नाहीं ॥ २२ ॥
वन माहिं फिर सिधारे, समताके भाव धारे ।
दिन चार सै भए हैं, गजपुरमैं तब गए हैं ॥ २३ ॥

नौ भौंकौ नेह जानौ, दाता श्रेयंस ठानौ।
लिया ईखरस नवीना, सुर पंचचरज कीना ॥ २४ ॥
तब भरत भूप धाया, श्रेयांस भुवन आया।
मौनीकी वात जानी, क्यौंकर तुमैं पिछानी ॥ २५ ॥
कही भरतसौं विख्यातं, भव आठकेरी वातं।
वज्रजंघ श्रीमतीका, सब कहा भेद नीका ॥ २६ ॥
तब दान विधि वताई, सवहीके मन सुहाई।
तप कियौ वहु प्रकारं, भए वरस इक हजारं ॥ २७ ॥
चहु करम तव भगाया, तव ग्यान भान पाया।
सुर कियौ समोसरना, सो कापै जाय वरना ॥ २८ ॥
सुर नर असुरनैं पूजा, तुही देव नाहिं दूजा।
बानी सु मेघ वरसै, सुनि सरव जीव हरसै ॥ २९ ॥
गनधर भए चौरासी, वहु मुनि भए निरासी।
स्रावक अनेक कीनैं, सवहीकौ वरत दीनैं ॥ ३० ॥
पसु नरकतैं निकारे, सुर मुकति सुख विथारे।
सब देस करि विहारं, इक लाख पुव्व सारं ॥ ३१ ॥
मुनि एक सहस संगं, भए अमर सुख अभंगं।
तन खिरा ज्यौं कपूरं, इंद्र भए सब हजूरं ॥ ३२ ॥
करि वंद बार बारं, नख केश संसकारं।
रज सीस लै लगाई, भावना चित्त भाई ॥ ३३ ॥
जे गुन तिहारे ध्यावैं, पूजा करैं करावैं।
जे नामकौं भजै हैं, सब पापकौं तजै हैं ॥ ३४ ॥
जे कथा तेरी गावैं, जे सुनैं प्रीति लावैं।
जे चित्तमैं धरै हैं, सब दुःखकौं हरै हैं ॥ ३५ ॥
तुम कथा है वहुतसी, मैं कही है तनकसी।
यह चूक वकस दीजौ, द्यानतकौ याद कीजौ ॥ ३६ ॥

इति आदिनाथस्तुति।

शिक्षापंचासिका।

दोहा।

राग विरोध विमोह वस, भ्रमैं जीव संसार।
तीनौं जीतै देव सो, हमैं उतारौ पार ॥ १ ॥
धंधेमैं दिन जात है, सोवत रात विलात।
कौन वेर है धरमकी, जब ममता मरि जात ॥ २ ॥
नरकी सोभा रूप है, रूप सोभ गुनवान।
गुनकी सोभा ग्यानतैं, ग्यान छिमातैं जान ॥ ३ ॥
आव गलै अघ नहि गलै, मोह फुरै नहिं ग्यान।
देह घटै आसा वढ़ै, देखौ नरकी वान ॥ ४ ॥
चेतन तुम तौ चतुर हौ, कहा भए मतिहीन।
ऐसौ नर भव पायकैं, विषयनमैं चित दीन ॥ ५ ॥
ग्याता जो कुकथा करै, पीछै, निंदै सोय।
मूरख ग्यान वखानिकै, आदर करै न लोय ॥ ६ ॥
त्याग करै त्यागी पुरुष, जानै आगम भेद।
सहज हरष मनमैं धरै, करै करमकौ छेद ॥ ७ ॥
बालपने अग्यान मति, जोवन मदकर लीन।
वृद्धपने है सिथिलता, कहौ धरम कब कीन ॥ ८ ॥
बालपने विद्या पढ़ै, जोवन संजमलीन।
वृद्धपने संन्यास ग्रहि, करै करमकौं छीन ॥ ९ ॥
जाहर जगत विलात है, नाहर जममुख माहिं।
ता हरकै हूजै सुखी, चाह रहै कछु नाहिं ॥ १० ॥
भमता जीव सदा रहै, ममता रत परजाय।
समता जब मनमैं धरै, जम तासौं डर जाय ॥ ११ ॥

लोभसैन विनसै भलौ, रमा विसन सविमार ।
जैत करन सुनरक तजै, रंचा जगत मग चार (?) १२
जैसैं विषै सुहात है, तैसैं धर्म सुहाय ।
सो निहचैं परमारथी, सुख पावैं अधिकाय ॥ १३ ॥

सोरठा ।

सम्यक अरु साचार, सज्जनता अरु सील गुन ।
मागैं मिलैं न चार, पूरवले पुन्नों बिना ॥ १४ ॥
जे न करैं दस चार, ते बारह पच-पन कहे ।
जे हैं छप्पन ठार, आठ आठ पद सिद्धकौं ॥ १५ ॥

दोहा ।

जैनधर्म सब धर्मपै, सोभै तिलक समान ।
आन धर्म लागैं नहीं, ज्यौं पटबीजन भान ॥ १६ ॥

चौपई ।

विविध प्रकार राजकौं त्याग, जिन सिव साधी ध्यान समाज ।
भिच्छा मांगि उदर तू भरै, अपनौ काज न काहे करै १७

दोहा ।

चिंता चिता दुहू विषैं, बिंदी अधिक सदीव ।
चिंता चेतनिकौ दहै, चिता दहै निरजीव ॥ १८ ॥
'देहु' वचन यह निंद है, 'नाहिं' वचन अति निंद ।
'लेहु' वचन सुभरूप है, 'नाहिं' महा सुभ इंद ॥१९॥
जुगल राग अरु दोषकी, हानि करौ बुधवंत ।
रुकै करम सिव पाइयै, यह 'जुहार' विरतंत ॥ २० ॥

१ दूसरी तीसरी प्रतिमें 'रचा गमत (?) मग चार' पाठ है।
२ जुगनू या खद्योत ।

वन वन होत न कलपतरु, तन तन बुध न अगाध ।
फन फन होत न मन सहत, जन जन, होत न साध २१
सुगुन बढ़ै अभ्यासकौं, भाग बढ़ै नहिं कोय ।
कान बढ़ावै जोपिता, आंख बड़ी क्यों होय ॥ २२ ॥
निसिका दीपक चंद्रमा, दिनका दीपक भान ।
कुलका दीपक पुत्र है, तिहुं-जगदीपक ग्यान ॥ २३ ॥
दोप बुरे सबके लगैं, आतम दोप सुहाय ।
धूआं सवहीका बुरा, अगर धूम सुखदाय ॥ २४ ॥
घरकी सोभा धन महा, धनकी सोभा दान ।
सोभै दान विवेकसौं, छिमा विवेक प्रधान ॥ २५ ॥
एक समैमैं सब लखा, ऐसा समरथ सोय ।
आगैं पीछैं सो लखै, जो दृगहीना होय ॥ २६ ॥
पूरन घट बोलै नहीं, अरध भए छलकंत ।
गुनी गुमान करै नहीं, निरगुन मान करंत ॥ २७ ॥
मैं मधु जोख्यौ नहिं दियौ, हाथ मलै पछिताय ।
धन मति संचौ दान दो, माखी कहै सुनाय ॥ २८ ॥
कला बहत्तरि पुरुषकी, तामैं दो सिरदार ।
एक जीवकी जीविका, दूजै जी-उद्धार ॥ २९ ॥
सोम सुक्र गुरु चंद सुभ, मंद भौम रवि भान ।
बुद्ध उभै सुर प्रात सुभ, कहै सुरोदय ग्यान ॥ ३० ॥
घर वसि दान दियौ नहीं, तन न कियौ तप लेस ।
'जैसैं कंता घर रहे, तैसैं गए विदेस' ॥ ३१ ॥

१ स्त्री ।

नर भौ पायौ धरमकौं, किया अधर्म बनाय ।
'बिटते (?) कारन आनकैं, पूंजी चले गमाय' ॥ ३२ ॥

चलौ भविक तहां जाइयै, जहां वसत जिनराज ।
दुःखनिवारन सुखकरन, 'एक पंथ दो काज' ॥ ३३ ॥

कर भाजन कूआ निकट, गुन बिन लहै न नीर ।
सो गुन क्यौं नहिं धारियै, जो बुधि होय सरीर ॥३४॥

तन बल धन बल कपट बल, टाल बांह-बल जोय ।
अजस पापतैं ना डरै, पंच कहावै सोय ॥ ३५ ॥

पंच परम पद नित जपै, पंचेंद्री सुख टारि ।
पंचनके पीछै चलै, पंच वही सिरदार ॥ ३६ ॥

एक कनक अरु कामिनी, ए दोनौं दिढ़ बंध ।
त्यागैं निहचैं मोख है, और बात सब धंध ॥ ३७ ॥

मान मुधा रस दूरि करि, दान छुधा रस देय ।
ध्यान छुधारस ठानिकैं, ग्यान सुधारस पेय ॥ ३८ ॥

समरथ हैं ते मीत नाहिं, मीत न समरथ कोय ।
दोनौं बातैं कठिन हैं, औषधि मीठी होय ॥ ३९ ॥

समरथ प्रीतम प्रभु बड़े, तिन सेवौ मन लाय ।
इह पर भौ इन सम नहीं, मनवांछित सुखदाय ॥४०॥

कहूं सफल आदर विना, कहुं आदर फल नाहिं ।
दोनौं लहियै धर्मतैं, वृच्छ सफल अरु छाहिं ॥ ४१ ॥

क्रोध समान न सत्रु है, छमा समान न मित्र ।
निंदा सम न गिलान है, प्रभुकी सम न पवित्र ॥४२॥

सोरठा ।

कहुं बिन ग्यान विराग, कहूं ग्यान वैराग विन ।
दोनौं बिना अभाग, ग्यान विराग सहित सुधी ॥ ४३ ॥

चौपाई ।

देव धरम गुरु आगम मानि, चार अमोलक रतन समान ।
तजि मन क्रोध लोभ छल मान, भजि जिन साहिब मेरु समान

दोहा ।

पाप पुन्य दोनौं बसैं, दरब माहिं भ्रम नाहिं ।
'द्यानत' कीने पाप हैं, पुन्य अमानत माहिं ॥ ४५ ॥

बड़े वृच्छकौं सेइयै, पूरन फल अरु छाहिं ।
जो कदाचि फल दे नहीं, छाहिं बहुत तप नाहिं ॥४६॥

ताड़ ताप छेदन कसन, कनक-परीच्छा चार ।
देव धरम गुरु ग्रंथसौं, सम्यक परखौ सार ॥ ४७ ॥

दाना दुसमन हू भला, जो पीतम सनबंध ।
बड़े भाग्यतैं पाइयै, 'सोना और सुगंध' ॥ ४८ ॥

धन जोरैतैं ऊंच नहि, ऊंच दानतैं होत ।
सागर नीचैं ही रहै, ऊपर मेघ उदोत ॥ ४९ ॥

यह सिच्छा पंचासिका, कीनी 'द्यानतराय' ।
पढ़ैं सुनैं जे मन धरैं, सब जनकौं सुखदाय ॥ ५० ॥

इति शिक्षापंचासिका ।

जुगलआरती।

दोहा।

(१)

पंचाचार छतीस गुन, सात रिद्धि चहुं ग्यान।
गनधर पद बंदौं सदा, आचारज सुखदान ॥ १ ॥

चौपई।

एक परम परतीति विख्याता, दो दिच्छा सिच्छाके दाता।
तीन काल सामायिक धारी, चारौं वेद कथन अधिकारी ॥२॥
पंच भेद स्वाध्याय बतावैं, पट आवस्यक सब समझावैं।
सातौं प्रकृति हनी दुखदानी, आठौं अंग अमल सरधानी ३॥
नौ विध प्रायचित्त सिखलावैं, दस विध परिगह त्याग करावैं।
ग्यारै विथा जोग जिन मानैं, बारै अंग कथन सब जानैं ४
तेरै राग प्रकृति सब नासैं, चौदै जीवसमास प्रकासैं।
पंद्रै मोह प्रकृति सब नासी, सोलै ध्यान-रीति परकासी ॥५॥
सत्रै प्रकृति लखै उदवेली, ठारै खै उपसम विधि झेली।
परनै जिन उनईस बखानैं, वरतमान बीसौं जिन मानैं ६
इकइस गनत भेद सब सूझैं, बाइस भाव दसम गुन बूझैं।
भवनत्रिक तेईस बताए, कामदेव चौवीस सुनाए ॥ ७ ॥
विकथा नाम पचीस बखानैं, छव्विस गुन दरवौंके जानैं।
क्रोध भेद सत्ताइस भाखे, अट्ठाईस विषै सब नाखे ॥ ८ ॥
रतनत्रै उनतीस प्रकारं, तीसौं चौवीसी निरधारं।
करम भेद इकतीस सिखाये, खेत विदेह बतीस सुहाये ॥९॥
तेतिस देव इंद्रके थानं, चौंतीसौं अतिसै परिमानं।
पैंतिस धनुष कुंथ तन बंदै, छत्तिस गुन पूरन अभिनंदै ॥१०॥

दोहा।

एक एक गुनमैं कहे, हैं अनेक समुदाय।
'द्यानत' प्रभुकौं बंदतैं, मोह धूरि झरि जाय ॥ ११ ॥

(२)

सोरठा।

ग्यारै अंग बखान, चौदै पूरव समझ सब।
गुन पच्चीस प्रधान, उपाध्याय बंदौं सदा ॥ १ ॥

चौपाई।

पहला आचारांग बखानं, पद अट्ठारै सहस प्रमानं।
दूजा सूत्रकृतं अभिलाखं, पद छत्तीस सहस गुरु भाखं २
तीजा ठानाअंग सुजानं, सहस वियालिस पद सरधानं।
चौथा समवायांग निहारं, चौसठि सहस लाख इक धारं ॥३॥
पंचम व्याख्याप्रगपति दरसं, दोय लाख अट्ठाइस सहसं।
छट्ठा ग्यातृकथाविस्तारं, पांच लाख छप्पन हज्जारं ॥ ४ ॥
सातम उपासकाध्ययनंगं, सत्तरि सहस ग्यार लख भंगं।
अष्टम अंतकृतं दस ईसं, ठाई सहस लाख तेईसं ॥ ५ ॥
नवम अनुत्तर दस सु विसालं, लाख बानवै सहस चवालं।
दसम प्रसनव्याकरन विचारं, लाख त्रानवै सोल हजारं ६
ग्यारम विपाकसूत्र सुभाखं, एक कोरि चौरासी लाखं।
चार किरोर पंदरै लाखं, दो हजार पद गुरु सब भाखं ७
बारम दिष्टवाद अवधारं, तामैं पंच बड़े अधिकारं।
प्रकरनसूत्र प्रथम अनुयोगं, पूरव अरु चूलिका नियोगं ॥ ८ ॥
चारौं पद छप्पन हज्जारं, तेरै कोड़ी लाख अठारं।
पूरव प्रथम नाम उतपातं, ताके एक कोड़ि पद ख्यातं ॥९॥

पूरव अग्रनीय जुग नामं, लाख छानवै पद अभिरामं ।
तीजा पूरव बीरजवादं, पद हैं सत्तर लाख अनादं ॥१०॥
चौथा पूरव अस्त-नास है, साठ लाख पद बुध प्रकास है।
पंचम पूरव ग्यान प्रवीनं, एक कोड़ि पद एक विहीनं ॥११॥
छट्ठा पूरव सत्य वखानं, एक कोड़ि षटपद परवानं ।
सातम पूरव आतमवादं, पद छब्बिस कोड़ी सुख स्वादं १२
आठम पूरव करम सु भाखं, एक कोड़ि पद अस्सी लाखं ।
नौमा पूरव प्रत्याख्यानं, पद चौरासी लाख वखानं ॥१३॥
दसमा पूरव विद्या जानं, पद इक कोड़ि लाख दस ठानं ।
ग्यारम पूर्व कल्यान वखानं, पद छब्बिस कोड़ी परधानं १४
द्वादस पूरव प्राणावादं, पद किरोर तेरह अविखादं ।
तेरम पूरव क्रियाविसालं, नौ किरोर पद वहु गुनमालं ॥१५॥
चौदम पूरव विंद त्रिलोकं, साड़े वार कोड़ि पद धोकं ।
साड़े पच्चानवै किरोरं, पंच अधिक पूरव पद जोरं ॥ १६॥
इकसौ बारै कोड़ि बखाने, लाख तिरासी ऊपर जाने ।
ठावन सहस पंच अधिकाने, द्वादस अंग सरव पद माने ॥ १७
क्यावन कोड़ि आठ ही लाखं, सहस चौरासी छैसै भाखं ।
साढ़ इकीस सिलोक बताए, एक एक पदके ए गाए ॥ १८ ॥
ए पच्चीसौं सदा विथारैं, स्वपर दया दोनौं उर धारैं ।
भौ सागरमैं जीव निहारैं, धरम वचन गुन धार निकारैं॥१९॥

दोहा ।

केवलग्यानि समान पद, स्रुतकेवलि जग माहिं ।
उपाध्याय द्यानत नमौं, बढ़ै ग्यान भ्रम नाहिं ॥ २० ॥

इति जुगलआरती ।

वैरागछत्तीसी ।

दोहा ।

अजितनाथ पद वंदिकैं, कहूं सगर अधिकार ।
साठि सहस सुत आप नृप, सरव चरम तन धार ॥१॥

चौपाई ।

नगर अजुध्याकौ चक्रेस, सुर नर खग वस दिपै दिनेस ।
भूप गयौ वंदन जिनराय, परभौ मित्र मिल्यौ सुर आय ॥२॥
हम तुम हुते विदेह मझार, तुम थे मो भगनी-भरतार ।
तुमरै दोय पुत्र थे धीर, एक पुत्र खायौ जमवीर ॥ ३ ॥
दूजे सुतकौं देकरि राज, हम तुम तप लीनौ हित काज ।
उपजे सोलै स्वर्ग मझार, तहां कियौ था तुमौं करार ॥४॥
पहलैं जा सो दिच्छा लेय, इहां रहै सो सिच्छा देय ।
सुतवियोग दिच्छा परनए, तातैं साठि सहस सुत ठए ॥५॥
भोगे भोग तृपति न लगार, दिच्छा गहौ न लावौ वार ।
समझ बूझ नृप लह्यौ लुभाइ, पुत्रमोह छोड़्यौ नहिं जाइ॥६॥
सुर जानौ इसकै संसार, फिरि आयौ मुनिकौ व्रत धार ।
जोवनवंत काम उनहार, रवि ससितैं दुति अधिक अपार ७
चारन रिद्धि महा तपवान, नृप वंद्यौ चैत्याले आन ।
पूछै भूप तज्यौ क्यौं गेह, ब्यौरा सरव कहौ धरि नेह ॥८॥
घर वंदीखाना सुत पास, नारी सकल दुःखकी रास ।
राजा सुनिकै रह्यौ लुभाइ, मोह उदैवस कछु न वसाइ ॥९॥
इक दिन सरव कुमारन आइ, कह्यौ भूपसौं वचन सुनाइ ।
तुमैं काम करना है जोय, हमकौं आग्या दीजै सोय ॥१०॥

भूप कहै मेरैं यह काम, भोगौ भोग सरव सुखधाम।
गए विलखकैं सरव कुमार, फिरि आए सब ह्वै असवार॥११॥
हमकौं काम कहौ कुछ सार, हम तव ही करि हैं आहार।
जब हम छत्रीकुल जगमाहिं, आप कमाई लछिमी खाहिं १२
खंड छहौं मैं साधे सबै, मुझे साधना कुछ नहीं अबै।
कुमर कहैं अब होहि दयाल, हमैं काम करि करौ खुस्याल १३
भूप कहैं कैलास पहार, तहां बहत्तरि जिनगृह सार।
आगैं काल होयगा दुष्ट, तिनकी रच्छा कीजै पुष्ट ॥ १४॥
दंड लेइ ता खाई करौ, गंगा लाइ तासमैं भरौ।
सुनत वचन सब चले कुमार, खाई करि जल भरि सुख धार१५
इस औसर सुर ह्वै फनधार, कियौ मूरछा सरव कुमार।
सुनी खबर मंत्रिनने सही, नृप सुत मोह जान नहिं कही १६
तब सुर भयौ वृद्ध द्विजराय, मृतक पुत्र इक कंठ लगाय।
धर्मभूप तू दीनदयाल, मेरौ पुत्र हन्यौ है काल ॥ १७॥
तेरे राज दुखी नहिं कोय, मम सुख होय करौ तुम सोय।
भूप कहै सुनि हो द्विजराय, जमसौं काहूकी न वसाय॥१८॥
सिद्ध बिना सबहीकौं खाय, काल गालमैं है षटकाय।
जो तू जीता चाहै तेह, पुत्र मोह तजि दिच्छा लेह ॥१९॥
बांभन कहै सांच जो बात, तो सुनियै विनती विख्यात।
भूप कहै धोका नहिं कोय, दिच्छा बिन जम नास न होय २०
मेरा सुत इक मारा सार, मारे तेरे साठि हजार।
जो तुम लखौ अथिर जग धाम, दिच्छा क्यौं न धरौ नर स्वाम
मेरा बैरी तनक कृतांत, तेरा बैरी बड़ा न भ्रांत।
तुम क्यौं नहिं जीतौ जमराय, अमर होहु सब दुख मिटिजाय

दोहा।

वात कहन भूपरि गमन, करन खड्ग खगधार।
कथनी कथ करनी करैं, ते विरले संसार ॥ २३ ॥

चौपाई।

सुन [illegible]रछा नृपकौं भई, सीतल-दरव-जोग मिटि गई।
भू[illegible]भावै भावन चार, भौ-तन-भोग अथिर संसार २४

दोहा।

भूप कहै संसार सव, कदली वृच्छ समान।
केले माहिं कपूर ज्यौं, त्यौं यामैं निरवान ॥ २५ ॥
दुर्लभ नर भव पायकैं, जो मैं साधौं मोष।
तो मेरौ जीवन सफल, मिटै सरव दुखदोष ॥ २६ ॥
पुत्र मोह फांसी पर्यौ, मैं न लख्यौ हित काज।
अव सव फांसी कटि गई, दियौ भगीरथ राज ॥२७॥
जहां धरम दिढ़ जिन तहां, पहुंचे वहु नृप संग।
दिच्छा लीनी भावसौं, सुर हरख्यौ सरवंग ॥ २८ ॥

चौपाई।

गयौ जहां थे साठि हजार, किये सचेतन सरव कुमार।
पिता वारता सबसौं कही, मैं तुम कुलकौ प्रोहित सही ॥२९॥

सोरठा।

धन्य हमारे तात, राज काज तजि वन वसे।
हम हूं जाय विख्यात, पिता किया सोई करैं ॥ ३० ॥

चौपाई।

सब कुमरन तब दिच्छा लई, देव प्रगट ह्वै बानी चई।
इम कीनौ अपराध अपार, छमा करौ तुम सब मुनि सार ३१

मुनि बोले सब जगत टटोय, तुम सम उपगारी नहिं कोय ।
भोग कीचतैं सर्व निकार, धरे मोखमैं धनि तू यार ॥३२॥
मधुर कठिन दो बात बनाय, करै धरम उपदेस सुनाय ।
सो पीतम कहियै सिरदार, इस भौ पर भौ सुखदातार ३३

दोहा ।

नरम कहै करड़ी कहै, करै पाप उपदेस ।
सो बैरी तातैं बढ़ै, दोनौं जनम कलेस ॥ ३४ ॥
देव सुखी थानक गयौ, सव मुनि करि तप घोर ।
करम काटि सिवपुर गए, बंदत हौं कर जोर ॥ ३५ ॥
सगर-विरागछतीसिका, हेत भवानीदास ।
कीनी द्यानतरायनैं, पढ़ौ सवन सुखरास ॥ ३६ ॥

इति वैरागछत्तीसी ।

वाणी-संख्या ।

दोहा ।

बंदौं वानी वरन जुग, वरग किये पट जास ।
अच्छर एक घटाइकै, अंग उपंग प्रकास ॥ १ ॥
'नेमिचंद' मुनिराजपद, वंदौं मन वच काय ।
जस प्रसाद गिनती कहूं, जैनवचन-समुदाय ॥ २ ॥

चौपई ।

अच्छर दोय गनतके काज, राखे भाखे स्रीजिनराज ।
तिनकौ वरग फलै विसतार, एक वरगसौं एक निहार ॥३॥
तातैं लीजै अच्छर दोय, वरग छहौं इस विध अवलोय ।
पहला वरग चार परवान, दूजा सोलै वरग बखान ॥४॥
तीजा दोसै छप्पन अंक, भाखौ चौथा वरग निसंक ।
पैंसठ सहस पांचसै धार, छत्तिस अच्छर अधिक निहार ॥५॥
चार सतक उनतीस किरोर, लाख पचास एक कम जोर ।
सतसठि सहस दुसै छानवै, पंच वरग गिनती यह ठवै ॥६॥

दोहा ।

इक लख चौरासी सहस, चौसै सतसठि जान ।
इनकौ कोड़ाकोड़ि करि, आगैं सुनौ बखान ॥ ७ ॥
लाख चवालिस जानियै, सात सहस सै तीन ।
सत्तर एते कोर हैं, और कहूं परवीन ॥ ८ ॥
लाख कहे पच्चानवै, सहस एक पंचास ।
छै सै सोलै गनतका, छठा वरग परकास ॥ ९ ॥

१ अंकोंमें यथा—१८४४६७,४४०७३७०,९५५१६१६ ।

बीस अंककी दूसरी, गनती कहुं समुझाय ।
सावधान ह्वै कै सुनौ, सब संसै मिटि जाय ॥ १० ॥

सोरठा ।

विंजन हैं तेतीस, आदि ककार हकार लौं ।
स्वर हैं सत्ताईस, ह्रस्व पुलत दीरघ नमौं ॥ ११ ॥
जोगवहा है चार, अं अः लख परगट वरन ।
चौसठि जैन मझार, आनमती भाखैं कमी ॥ १२ ॥
दीरघ ऌ ॡ नहिं संसकृत, देस भाषमैं जान ।
ए ऐ ओ औ ह्रस्व ए, प्राकृत भाषा मान ॥ १३ ॥
मूल वरन चौसठि कहे, अरु संजोग अनेक ।
ते अच्छर पुनरुक्त सव, परमागम यह टेक ॥ १४ ॥
एई चौसठि वरनकौं, भिन्न भिन्न करि राख ।
इक इक पर दो दो धरौ, गुनौ परस्पर साख ॥ १५ ॥

चौपई ।

पहले दो दूजे दो चार, तीजे दो गुन आठ निहार ।
चौथे सोलै पांच छतीस, छट्ठे चौसठि कहे गनीस ॥१६॥
सात गिनौ सौ अट्ठाईस, आठैं दो सै छप्पन दीस ।
इस बिध चौसठि लौं गिन सार, बीस अंक उपजैं निरधार १७

दोहा ।

इक[1] वसु चौ चौ षट सपत, चौ चौ नभ सत तीन ।
सत नभ नौ पन पंच इक, षट इक षट गिन लीन ॥१८॥
लीने थे दो एककै, पूरव गनती काज ।
सो या माहिं कमी करौ, यौं भाख्यौ मुनिराज ॥१९ ॥

1 यथा अंकोंमें—१८४४६७४४०७३ ७०९५५१६१६ ।

बीस अंक गिनती विषैं, छै सै सोलै अंत ।
एक घटा बाकी रहे, छै सै पंद्रै संत ॥ २० ॥
इक[1] वसु चौ चौ षट सपत, चौ चौ विंदी सात ।
तिय सत नभ नौ पंच पन, इक षट इक पन ख्यात ॥२१॥
अब इनके पद वरनऊं, सो पद तीन प्रकार ।
प्रथम अरथ परमान बिय, त्रितिय मध्य पद धार ॥२२॥
जेते अच्छर जोरिकैं, कहैं परोजन नाम ।
धरम करौ यौं आदि दै, प्रथम अरथ पद धाम ॥२३॥

सोरठा ।

नमः समयसाराय, आठ वरनतैं आदि दे ।
सो प्रमान पद गाय, भूपर परगट देखियै ॥ २४ ॥

दोहा ।

इक षट तिय चौ आठ तिय, नभ सत वसु वसु आठ ।
ए अच्छर ग्यारै करै, कह्यौ मध्यपदपाठ ॥ २५ ॥

चौपई ।

सोलै सै चौतीस किरोर, लाख तिरासी ऊपर जोर ।
सात सहस आठसै वखान, अट्ठासी अच्छर पद मान ॥२६॥

दोहा ।

बीस अंक इक पांचलौं, इक पद ग्यारै अंक ।
भाग दिए कितने भए, पद गन लेहु निसंक ॥ २७ ॥
एक एक दो आठ तिय, पंच आठ नभ सुन्न ।
पंच सकल पद वंदना, कीजै लीजै पुन्न ॥ २८ ॥

1 यथा—१८४४६७४४०७३ ७०९५५१ ६१५ ।

सोरठा ।

इक सौ बारै कोर, लाख तिरासी जानियै ।
सहस अठावन जोर, पंच अधिक पद होत हैं ॥ २९ ॥
वसु नभ इक नभ आठ, एक सात पन वरन वसु ।
बाकी राखा पाठ, यातैं हुवा न एक पद ॥ ३० ॥
आठ कोड़ि इक लाख, आठ सहस अरु एक सौ ।
पचहत्तर हू भाख, ए अच्छर बाकी रहे ॥ ३१ ॥
पदकै द्वादस अंग, कीनै गौतम स्वामिने ।
चौदै भेद उपंग, ते बाकी अच्छरनिके ॥ ३२ ॥

चौपई ।

द्वादस चौदस अंग उपंग, भद्रबाहु जानैं सरवंग ।
नाम मात्र हूं वरननि करौं, अदभुत धीरज हिरदै धरौं ॥३३॥
पहला आचारांग प्रधान, तामैं जतिआचार विधान ।
सहस अठारै पद हैं तास, वंदन करौं क्रिया परकास ॥३४॥
सूत्रक्रान्त है दूजा अंग, धर्मक्रियाके सूत्र प्रसंग ।
पद छत्तीस हजार प्रमान, वंदन करौं जोरि जुग पान ॥३५॥
तीजा ठानाअंग विसेख, तामैं दरव थान बहु पेख ।
एक जीव जग सिध द्वै भेद, उतपति वै ध्रुव तीन निवेद ॥३६॥
गतिसौं चार भावसौं पांच, चौ दिस अध ऊरध षट सांच ।
सात भंग बानीतैं सात, इस प्रकार बहु थानक बात ॥३७॥
पुदगल एक खंध अनु दोय, सरव दरव थानक यौं जोय ।
सहस वियालिस पद अवधार, वंदौं सुद्ध थानदातार ॥३८॥
चौथा समवायांग विसाल, तहां कथन सम बहुविध भाल ।
दरव खेत काल अरु भाव, जुदे जुदे वरनौं विवसाव ॥३९॥

दरवित धरम अधर्म समान, खेत पंच पैंताले जान ।
सरवारथ सिध सातम जान, तेतिस सागर काल समान ४०
केवल ग्यान बराबर जान, केवल दरसन भाव समान ।
पद इक लख चौसट्ठि हजार, वंदौं मनमैं समता धार ॥४१॥
व्याख्याप्रगपति पंचम अंग, ताके भेद कहौं सरवंग ।
जीव अस्तिकौ क्यौं करि नास, किह विध नित्य अनित्य प्रकास
साठि हजार प्रसनके काज, सब उत्तर व्याख्यान समाज ।
अट्ठाईस सहस द्वै लाख, पद वंदौं उत्तर रस चाख ॥ ४३ ॥
धर्मकथा है छट्ठा नाम, रतनत्रै दसलच्छन धाम ।
पांच लाख छप्पन हज्जार, पद वंदौं मैं धरम विचार ॥४४॥
सातम उपासकाअध्यैन, तामैं स्रावककी विधि ऐन ।
पूजा दान संघ उपगार, ग्यारै प्रतिमा वरनन सार ॥४५॥
अनाचार अतिचार विचार, घरकी सब किरिया विसतार ।
ग्यारै लाख छपन हज्जार, पद वंदौं स्रावकपदकार ॥४६॥

दोहा ।

अंतकृतंदस अष्टमा, अंग कहे पद तास ।
तेईस लाख बखानियै, सहस अठाइस भास ॥ ४७ ॥
इक इक जिन बारै भयौ, दस दस गुन उपसर्ग ।
सहि सहि सब सिवपुर गए, कथन सकल रिषिवर्ग ॥४८॥
अनुत्तरोउपपाददस, नौमा अंग बखान ।
लाख बानवै पद कहे, सहस चवालिस जान ॥ ४९ ॥
दस दस मुनि उपसर्ग सहि, पहुंचे पंच विमान ।
एक एक जिनके समै, तिनकौ कथन विनान ॥ ५० ॥

चौपई ।

प्रसन व्याकरण दसमा अंग, ताके भेद सुनौ बहु रंग ।
दूत प्रस्न सुनि भाखै बात, धन कन लाभ अलाभ विख्यात५१
सुख दुख जनम मरन जय हार, और भेद सुनि चार प्रकार।
अच्छेदिनी थपै निज धर्म, विच्छेपिनी हरै पर मर्म ॥५२॥
धर्मप्रभावक संवेजनी, भव दुख उदास निरवेजनी ।
लाख तिरानू सोल हजार, पद वंदौं संदेह निवार ॥ ५३॥
विपाकसूत्र ग्यारमा देख, कर्म उदैकी बात विसेख ।
तीव्र मंद सुभ असुभ सुभाख, एक कोरि चौरासी लाख॥५४॥
ग्यारै अंग कहे समझाय, नाम अर्थ पद संख्या गाय ।
चार किरोर पंदरै लाख, दो हजार सबके पद भाख ॥५५॥
मिथ्यादृष्टी बहु विध जीव, झूठ धर्ममैं मगन सदीव ।
जान तीनसै त्रेसठ जात, थोरे माहिं कहूं सब बात॥५६॥
किरियावाद असी सौ जीय, अक्रियावादी चौरासीय ।
अग्यानवादी सतसठि दीस, विनैवादधारी बत्तीस ॥ ५७॥
सबकौं जीतै नै समझाय, विविध भांति बहु जुगति उपाय।
सोई दिष्टवाद है अंग, द्वादसमा जानौ बहु भंग ॥ ५८ ॥

सोरठा ।

इक सौ आठ किरोर, अड़सठ लख छप्पन सहस ।
पंच अधिक पद जोर, कहे बारमैं अंगके ॥ ५९ ॥
पंच भेद हैं तास, प्रथम परकरन सूत्र विध ।
प्रथमान जोग भास, पूरव गन अरु चूलिका ॥ ६० ॥
पंच भेद परकर्न, ससि रवि जंबूद्वीप भनि ।
दीप उदधि सुनि कर्न, व्याख्याप्रगपती सहित ॥ ६१ ॥

चौपई ।

चंद्रप्रगपती सुनौ वखान, ससि ग्रह नछत्र तारे जान ।
आव काय गति उंदै निहार, बत्तिस लाख पांच हज्जार ॥६२॥
सूर्यप्रगपती माहिं विचार, देवी देव सकल परिवार ।
सूरजविंवतना विस्तार, पांच लाख पद तीन हजार ॥६३॥
जंबूद्वीप प्रगपती जान, मेरु कुलाचल आदि वखान ।
तीन लाख पच्चीस हजार, वंदौं चैत्याले सिर धार ॥ ६४॥
दीप उदधि प्रगपत्ती सोय, असंख्यातकी कथनी होय ।
नाम मानि वरनन पद सार, बावन लाख छतीस हजार॥६५॥
व्याख्याप्रज्ञप्ती है नाम, जीव अजीव दरव अभिराम ।
रूप अरूप विंव पद दीस, चौरासी लख सहस छतीस ॥६६॥

दोहा ।

प्रथम भेद परकरन यह, पद इक कोर वखान ।
लाख इकासी जानियै, सहस पंच परवान ॥ ६७ ॥

चौपई ।

सूत्र भेद दूजौ परवान, जीव अबंध अकरता जान ।
सुपरप्रकासक बहु विध भाख, याके पद अट्ठासी लाख ॥६८॥
प्रथमानजोग तीजा जथा, त्रेसठ पुरुष सलाका कथा ।
नाम काय थिति भेद प्रकास, पंच हजार कहे पद तास ६९
पूरव चौथा भेद वखान, ताके चौदै नाम सुजान ।
साड़े पंचानवै किरोर, पंच अधिक सब पदका जोर ॥७०॥
प्रथम कह्यौ पूरव उतपात, एक कोरि पद कहे विख्यात ।
उतपत व्यय ध्रुव तीनौं काल, नौ विध दरव भेद बहु साल७१

अग्रनीय दूजौ अभिराम, तहां सुनै दुरनै वहु नाम ।
भेद सात सै तिनके कहे, लाख छानवै पद सरदहे ॥ ७२॥
तीजा वीरजवाद विसाल, निजवल परवल जुग वल भाल।
खेत काल तप भाव अपार, सत्तर लाख कहौ पद सार ॥७३॥
चौथा अस्तिनास्ति है नाम, तामैं सप्तभंग अभिराम ।
दर्व अस्ति साधनिकौं कहे, साठि लाख पद पंडित गहे ॥७४॥
पंचम ग्यानप्रवाद विधान, पांच ग्यान तीनौं अग्यान ।
संख्या विषै रूप फल जोर, एक घाटि पद एक किरोर ॥७५॥
छठा सत्य परवाद विचार, द्वादस भाषाकौ अधिकार ।
दस विध सत्य वचन तहं कहे, एक कोर षट पद सरदहे॥७६॥

दोहा ।

आतम प्रवाद सातमा, पूरव सवतैं जोर ।
जीव भाव अधिकार वहु, पद छव्वीस किरोर ॥७७॥

चौपई ।

कर्मप्रवाद नाम आठमा, ग्यानावरनादिककी जमा ।
सत्ता वंध आदि वहु भाख, एक कोर पद अस्सी लाख ॥७८॥
नौमा पूरव प्रत्याख्यान, पापक्रियाकौ त्याग विधान ।
भेद संघनन पालन काज, पद चौरासी लाख समाज॥ ७९॥
दसमा पूरव विद्या भाख, पद इक कोरि कहे दस लाख ।
लघु सात सै पांच सै महा, विद्या अष्ट निमित सव कहा॥८०॥
कल्यानवाद ग्यारमा पेख, पंच कल्यानक कथन विसेख ।
षोड़सकारन भावन जहां, पद छैवीस कोर हैं तहां ॥८१॥
द्वादस पूरव प्रानावाद, इडा पिंगला सुषमना स्वाद ।
अंग उपंग प्रान दस भेद, तेरह कोड़ तास पद वेद॥८२॥

तेरम पूरव क्रियाविसाल, कला वहत्तरि कही रसाल ।
चौसठ गुन नारीके कहे, सील भेद चौरासी लहे ॥ ८३ ॥
गरभ आदि सौ आठ प्रकार, सम्यक भेद पचीस प्रकार ।
नौ किरोर पद जग व्योहार, जिनवानी सवतैं सिरदार॥८४॥
विंद त्रिलोकसार चौदहां, लोक अलोक कथन है जहां ।
अकृत अनादि अनंत प्रकास, वारै कोरि लाख पंचास ॥८५॥

दोहा ।

पूरव चौथे भेदका, कह्यौ सकल व्यौहार ।
नाम चूलिका अव कहूं, पंचम भेद विचार ॥ ८६ ॥

चौपई ।

जल थल माया नभ अरु रूप, पंच भेद चूलिका अनूप ।
पद दस कोड़ि लाख उनचास, सहस छियालिस वरन्यौ तास

सोरठा ।

दो किरोर नौ लाख, सहस नवासी दोय सै ।
एक एकके भाख, पांचौंके पद एकसे ॥ ८८ ॥

चौपई ।

नाम जलगता कौ आरंभ, जलमैं मगन अगनकौ थंभ ।
अगनि माहिं परवेस निकार, मंत्र जंत्र अरु तंत्र विचार॥८९॥
नाम थलगता कहियै सोय, मेरु कुलाचलमैं गम होय ।
सीघ्र गमन भुवमैं परवेस, मंत्रादिक किरिया उपदेस ॥९०॥
मायागता नाम है तास, इंद्रजाल विक्रिया प्रकास ।
मंत्र जंत्र तप भेद वखान, जिनवानी सवतैं परधान ॥९१॥
नाम अकासगता है तहां, व्योम गमन वहुविध है जहां ।
जप तप क्रिया अनेक प्रकार,उपजै चारनरिद्धि निहार॥९२॥

रूपगता है ताकौ नाम, हयगय आदि रूप अभिराम।
चित्र काठ अरु लेप अनेक, धातवाद रसवाद विवेक॥९३॥

सोरठा।

द्वादस अंग सरूप, पदसंख्या पूरा भया।
वाहज अंग अनूप, सो चौदै विध वरनऊं॥ ९४॥

चौपई।

इहां पदनिकी संख्या नाहिं, थोरे अच्छर हैं इन माहिं।
आठ किरोर अधिक कछु भने, चौदै बाहज अंगनितने॥९५॥
पहला सामायिक है सोय, समभावनिमैं आयक होय।
नाम थापना दरवित भाव, खेत काल पट भेद लखाव॥९६॥
दूजा स्तव कहिये है सोय, चौवीसौं जिनकी थुति होय।
तीजा भेद वंदना जान, एक जिनेस नमन विधि ठान॥ ९७॥
चौथा प्रतिक्रम कहियै सोय, किया दोष निरवारै जोय।
पंचम विनै पंच परकार, ग्यान दरस व्रत तप उपचार॥९८॥
छट्ठा कृतक्रम क्रिया विसाल, पंच परम गुरु भगत त्रिकाल।
सातम दसवैकालिक कहा, मुनि अहार विध सुध सरदहा ९९
आठम नाम उत्तराध्यैन, सब उपसर्ग परीसै जैन।
नौमा नाम कल्प व्यौहार, मुनि विधि गहन अवध परिहार१००
कलपाकलप दसम लख लेहु, सिख्या कथन कहा गुन गेहु।
दरवित खेत काल अरु भाव, मुनिकौ जोग अजोग लखाव
महाकलप ग्यारम अभिधान, साध क्रिया उतकिष्ट प्रधान।
पुंडरीक द्वादसम बखान, चउविध सुर उपजनि तप दान॥
तेरम नाम महापुंडरीक, इंद्र उपजनि क्रिया तप लीक।
चौदम नाम निषध परवान, दोष प्रमाद त्याग गुनखान॥

दोहा।

चौदै वाहज अंग ए, अगले वारह अंग।
वीस अंककी गिनतिका, पूरन भया प्रसंग॥ १०४॥
मनपरजै मति औधिकी, केवल संग्या नाहिं।
स्रुतकेवलि केवल कह्यौ, वड़्यौ ग्यान जग माहिं १०५
लिंगज स्रुत अच्छररहित, सवदज अच्छर रूप।
दोय भेद स्रुत ग्यानके, सवदज स्रुत सुभरूप॥ १०६॥

चौपई।

विकल चतुक एकेन्द्री माहिं, लिंगज स्रुतमैं सम्यक नाहिं।
चहुं गति सैनी सवदज ग्यान, उपजै सम्यक दरस प्रधान॥
स्रीजिन गुन अनंत भंडार, ओंकार रूप धन सार।
इच्छा विना अनच्छर झरै, अच्छरमै ह्वै संसै हरै॥१०८॥
धुनि समझैं गनधर भ्रम नाहिं, और सुनैं निज भाखा माहिं।
प्रभुकौ कथन समझ गनधार, सो गनती को लखै अपार १०९
जो गनधरने रचना करी, सो बहु हम कहं तक विस्तरी।
यामैं भूल चूक जो होय, बुध जन सोध लीजियै सोय ११०
रवि ससि दीपक तम नहि हरै, अंतर तमवानी छै करै।
सो वानी नित करौ उदोत, हमैं तुमैं परमातम जोत १११

दोहा।

द्यानत बानी कथनतैं, वढ़ै ग्यान घट माहिं।
ज्यौं नैननितैं देखियै, घट पट धोखा नाहिं॥ ११२॥

इति वानीसंख्या।

पल्ल-पचीसी।

दोहा।

कलप अनंतानंत लौं, रुलै जीव विन ग्यान।
सम्यकसौं सिवपद लहै, नमौं सिद्ध भगवान ॥ १ ॥
जो कोई पूछै इहां, एक कलपका काल।
कितना सो व्यौरो कहौ, कहौं सुनौ तजि लाज ॥ २ ॥

चौपई।

एक कलपके सागर कहे, कोड़ा कोड़ बीस सरदहे।
इक सागरके पल्ल बखान, कोड़ाकोड़ी दस परवान॥३॥

दोहा।

तीन भेद हैं पल्लके, प्रथम पल्ल 'व्यौहार'।
दूजा पल्ल 'उधार' है, तीजा 'अद्धा' धार ॥ ४ ॥

सोरठा।

प्रथम रोम गिन देह, दूजा दीप उदधि गिनै।
तीजा थौ-तिथि एह, चहु गति जिय वस करमके ॥५॥

दोहा।

प्रथम पल्ल व्यौहारकौं, कहूं जिनागम जोय।
अंक पंच चालीसकी, गनती जातैं होय ॥ ६ ॥

सवैया-इकतीसा।

नभका प्रदेस रोकै पुद्गल दरव अनूं,
औधिग्यानी देखै नैनगोचर न सोई है।
अनंत अनंत मिलि खंध सन्नासन्न नाम,
रजरैन त्रटरैन रथरैन होई है ॥

उत्तम भू मध्यम जघन कर्मभूमि बाल,
लीख तिल जौ अंगुल वारै रास जोई है।
सन्नासन्न अंगुललौं वारै आठ आठ गुनै,
जिनवानी जानी जिन तिन संसै खोई है ॥ ७ ॥

दोहा।

भोगभूमि उत्तम विषै, उपजेके सिरवाल।
जनम सात दिनके कहे, महामहीन रसाल ॥ ८ ॥
तिनसेती कूवा भरौ, जोजन एक प्रमान।
अति सूच्छम सब कतरिकैं, खंड होहि नहिं आन ॥९॥
भोगभूमि उत्तम मधम, जघन करम भुवि लीख।
तिल जौ अंगुल आठ ए, भेद लेहु तुम सीख ॥ १० ॥
अंगुल हाथ धनुष कहे, कोस जु जोजन पंच।
तीन भेद पांचौं लखे, संसै रहै न रंच ॥ ११ ॥
प्रथम नाम उत्सेध है, दूजा नाम प्रमान।
तीजा आतम नाम है, अंगुल तीन बखान ॥ १२ ॥

सवैया इकतीसा।

वाल आदि गनती सो उतसेध अंगुलतैं,
चारौं गति देह नर्क स्वर्गके प्रसाद हैं।
यातैं पांचसै गुनेकौ अंगुल प्रमान तातैं,
दीपोदधि सैल नदी जैनधाम आद हैं ॥
छहौं काल वृद्ध हानि आतम अंगुल तातैं,
भौन घट रथ छत्र आसन धुजाद हैं।
इसी भांति हाथ चाप कोस अरु जोजन हैं,
सबकौ लखैया जीव ताके गुन याद हैं ॥ १३ ॥

उत्तम सु भोगभूमि मेष बाल कोमल हैं,
मध्यम जघन्य कर्म भूमिनकौ बार है ।
लीख तिल जौ अंगुल आठौं आठ आठ गुनै,
अंगुल चौबीसनकौ एक हाथ धार है ॥
चारि हाथ एक चाप दो हजार चापनकौ,
एक कोस चारि कोस जोजन विचार है ।
ऐसैं पांचसै गुनैकौ जोजन प्रमान एक,
ताकौ पल्लकूप गोल ढोलके अकार है ॥ १४ ॥
बाल महा जोजन लौं गनती लंबाई करौ,
नव अंक पट सून्य सब पंद्रै दीस हैं ।
लंबाई चौराईसेती गुनैं हाथ तीस अंक,
पंद्रैकी ऊंचाई गुनौ भए पैंतालीस हैं ॥
गोलकी कसर काज उन्निस गुनो समाज,
चौविसका भाग देहु भाखत मुनीस हैं ।
सत्ताईस अंक ठारै सुन्य पल्ल रोम कहे,
धन्न जैन वैन सब वैननिके ईस हैं ॥ १५ ॥

८०५३०६३६८०००००००॥ ६४ ८५१८३४६३४१३
५१४२४०००००००००००००॥ ५२२५५९५४० ७३५१९
८०३४ ७३०६८०३२०००००००००००००००००००॥ ९९२
२८६३१२७३९६८७६२६५९८८२९२६०८००००००००००
०००००००००॥ ४१३४५२६६३०३०८२०३१७७७४९५
१२१९२०००००००००००००००००००००॥ एते एकठे भए॥

सवैया इकतीसा ।

एक महा जोजनके उतसेध अंगुल हैं,
अड़तीस कोड़ि लाख चालीस बताइए ।

बीस लाख सत्तानूं सहस एक सौ बावन,
अंगुलके एते रोम दुहूंकौं फलाइए ॥
आठ कोड़ा कोड़ी पांच लाख तीस ही हजार,
सहस छत्तीस कोड़ि असी लाख गाइए ।
एही पंदरैकौ घन किए अंक पैंतालीस,
एते काल जीव भम्यौ ऐसे भाव भाइए ॥ १६ ॥

अंकनाम, अडिल्ल ।

चौ इक तिय चउ पांच दोय पट तीन हैं ।
नभ तिय नभ वसु दो नभ तिय इक कीन हैं ॥
सत सत सत चौ नौ पन इक दो इक कहे ।
नौ दो आगैं ठारै सुन्न सरब लहे ॥ १७ ॥

सवैया इकतीसा ।

चार सै तेरैकौ पट बार कोटि पैंतालीस,
लाख सहस छब्बीस सत तीन तीन जी ।
पंच चारि कोडि आठ लाख बीस हैं हजार,
तीन सत सत्रै चार चार कोड़ी कीन जी ॥
सतत्तर लाख सहस उनंचास सै पंच,
बारहकौ तीन बार कोड़ा कोड़ी बीनजी ।
उनईस लाख बीस ही हजार कोड़ा कोड़ी,
पैंतालीस हैं अनादि भाखे न नवीन जी ॥ १८ ॥

दोहा ।

इक इक रोम निकारिए, सौ सौ वरस मझार ।
जब जब खाली कूप है, यही पल्ल व्यौहार ॥ १९ ॥

सवैया इकतीसा ।

सब रोमकौं फलाय एक एक न्यारौ करौ,
असंख्यात कोड़ि वर्षके सभै फलाइए ।
एती एती रोम एक एक रोम पर राखौ,
सबकी गनतीकै उधार पल्ल गाइए ॥
कोड़ा कोड़ी पच्चीसके दीपोदधि राजू माहिं,
उद्धार रोम सौ सौ बरसमैं गिनाइए ।
सोई अद्धापल्ल दस कोड़ा कोड़ीके सागर,
ऐसी थिति भोगिकै कषाय न घटाइए? ॥ २० ॥

चौपई ।

चहुगति माहिं रुला तू जीव, अधापल्ल थिति लही सदीव ।
तेतिस सागर नरक मझार, इकतिस सागर ग्रैवक धार ॥२१॥
जगमैं दुख सुख लहे अनेक, पायौ नाहीं ग्यान विवेक ।
सबमैं दुलभ नर अवतार, आय सुघाट चलै मतिहार ॥२२॥

दोहा ।

इस गिनतीका हेत यह, जानि होय वैराग ।
जो सुनिकै समझै नहीं, ताके बड़े अभाग ॥ २३ ॥
कही सुनी भोगी लखी, जिन यह थिति बहु भाय ।
सो हम जान्यौ आतमा, रहूं तास लौ लाय ॥ २४ ॥
गोमटसार निहारिकैं, भाषी द्यानत सार ।
भूलचूक यामैं कह्यौ, लीजौ संत सुधार ॥ २५ ॥

इति पल्लपचीसी ।

षट्गुणी-हानि-वृद्धि-वीसी ।

दोहा ।

संख असंख अनंत गुन, भए वृद्धि षट हान ।
सुद्ध अगुरुलघु गुनसहित, नमौं सिद्ध भगवान ॥ १ ॥
पुग्गल धर्म अधर्म नभ, काल पंच जड़रूप ।
छहौं दरव ग्यायक सदा, नमौं सिद्ध चिद्रूप ॥ २ ॥

सवैया इकतीसा ।

धर्म अधरम नभ एक एक दर्व सब,
काल असंख्यात दर्व चेतन अनंत हैं ।
पुग्गल अनंतानंत काहूकी न आदि अंत,
परजै उतपात वै गुन ध्रुववंत हैं ॥
जीव दर्व ग्यायक सरीर आदि पुग्गल है,
धर्माधर्म दर्व गति थिति हेत तंत हैं ।
व्योम ठौर देत काल नौ[1]-जीरन भाव हेत,
ऐसी सरधासौं संत भौ-जल तरंत हैं ॥ ३ ॥
एक एक दरवमैं अनंत अनंत गुन,
अनंत अनंत परजाय पेखियत है ।
एक एक गुन माहिं अनंत अनंत भेद,
एक एक भेद न्यारे न्यारे देखियत है ॥
केई भेद काहू समै वृद्धिरूप परनमैं,
केई भेद काहू समै हानि लेखियत है ।
अद्भुत तमासा ग्यान आरसीमैं प्रतिभासा,
दर्वित अलेख कर्मसेती भाखियत है ॥ ४ ॥

१ नवीन तथा जीर्ण (पुराना) करनेका कारण है ।

दोहा।

अस्ति अमूरत अगुरुलघु, दर्व प्रदेस प्रमेय।
वस्त अचेतन मूरती, चेतन दस गुन गेय॥ ५॥

सवैया इकतीसा।

दर्व खेत काल भाव चारौं गुन लियैं अस्त,
परसंग बात सान(?) सदा गुन वस्त है।
उतपात वै ध्रुव परनतसौं दर्व तत,
गहै उड़ै नाहिं सो अगुरुलघु समस्त है॥
दर्व गुन परजायकौ अधार परदेस,
आपकौं जनावै गुन परमेय लस्त है।
मूरत अमूरत अचेतन चेतन दसौं,
गुन छहौं दर्वमाहिं जानैं भ्रम नस्त है॥ ६॥
जीव माहिं चेतन अमूरत ए दोन्यौं गुन,
पुग्गलमैं मूरत अचेतन दो पाइए।
अमूरत अचेतन ए दोऊ हैं तिहूं काल,
धर्माधर्म नभ काल चारौंमैं बताइए॥
अस्त वस्त दरवतैं परमेय परदेस,
अगुरु लघु ए छहौं सबहीमैं गाइए।
तातैं एक एक दर्व माहिं आठ आठ सधैं,
मुख्य गुन चेतनकौ ध्यान माहिं ध्याइए॥ ७॥
जो तौ दर्व गुरु होय भूमैं वसि जाय सोय,
जो तौ दर्व लघु होय उड़ जाय तूल ज्यौं।
ताहीतैं अगुरु लघु बड़ा गुन दर्व माहिं,
जातैं दर्व अविनासी सदा मेरमूल ज्यौं॥

ताही गुनका विकार ताके बारै भेद धार,
केवलीके ग्यानमें विराज रहे थूल ज्यौं।
तिन्हैं कहि सकै कोय समझै सो बुध होय,
किंचितसे भाखत हौं मिटै धर्म भूल ज्यौं॥ ८॥
जीवमैं अनंत गुन तामैं एक ग्यान नाम,
मूल पंच भेद भेद उत्तर अनंत हैं।
दूजे गुन दर्सनके चार भेद मूल कहे,
उत्तर अनेक भेद लोकमैं भनंत हैं॥
तीजा गुन सुख सुखी चक्री जुगलिये जीव,
फनी इंद अहमिंद सिद्धजी महंत हैं।
चौथा बल गज सिंघ चक्री देव जिनराज,
ऐसैं ही अनंतकौं जे ध्यावैं तेई संत हैं॥ ९॥
पुग्गल दरवमैं अनंत गुन रूखा एक,
ताके बहु भेद धूल राख रेत मान है।
दूजे चिकनेके भेद हैं अनेक रूप पानी,
छेरी गाय भैंसि ऊंटनीकौ दूध जान है॥
तीजा गुन कड़वा है भेद निंब इंद्रायन,
विष और महाविष लोकमैं निदान है।
चौथा गुन मीठा गुड़ खांड़ सर्करा पीयूष,
ऐसैं ही अनंतनिसौं मेरौ ग्यान आन है॥ १०॥
दर्वमैं अनंत गुन एक जीवमैं अनंत,
एक अस्त भाव ताके चौदै गुनथान हैं।
एक पुदगलमैं अनंत बीस नाम कहे,
एक फास वेल काठ हाड़ औ पखान है॥

चारौं दर्व माहिं तौ विभाव गुन जमा नाहिं,
सुध भाव गुन भेद साधैं बुधवान है ।
आतमके साधनकौं साधन बताए सब,
वस्त सिद्ध भए साध हेत दुखदान है ॥ ११ ॥
चार अंक भाग दोय गुण करैं सोलै होय,
नव भाग तीन गुन एक असी धन(?) हैं ।
सोलहकौ भाग चार गुनतैं दोसै छप्पन,
पच्चिसका भाग पांच सवा छसै गुन हैं ॥
छत्तिसका भाग षट गुन बारै सै छानवै,
सौ भाग दस गुन दस हजार सुन हैं ।
संख्यात असंख्यात अनंत यौंही भाग गुण,
षट वृद्धि षट हानि जानत निपुन हैं ॥ १२ ॥
बारै अंक दोय भाग षट तीन भाग चार,
चार भाग तीन षट भाग दोय जाने हैं ।
बारै दुगुने चौबीस तिगुने छत्तीस दीस,
चौगुने अठतालीस पांच साठ ठान हैं ॥
इसी भांति उतकिस्ट मध्यम जघन्य भेद,
भागाकार गुनाकार भावनमैं माने हैं ।
आलसकौं टारि नैंक अंतर विचार देखौ,
परनाम भेद जान मिथ्याभाव भाने हैं ॥ १३ ॥
अनंत-भाग-वृद्धि औ असंख्यात-भाग-वृद्धि,
संख-भाग-वृद्धि संख-गुन-वृद्धि थानजी ।
असंख्यात-गुन-वृद्धि औ अनंत-गुन-वृद्धि,
अनंत-भाग-हानि असंख-भाग-हानजी ॥

संख-भाग-हानि संख गुनहानि असंख्यात,
गुन-हानि औ अनंत गुन-हानि मानजी ।
एई परनामनके बारै भेद थूल कहे,
एक एक भेदमैं अनेक भेद जानजी ॥ १४ ॥
काहूसमै संख-भाग भावनिकी वृद्धि होय,
काहू समै संख-गुन भाववृद्धि रिद्ध है ।
काहू समै असंख्यात-भाग भाववृद्धि होय,
काहू समै असंख्यात-गुन-वृद्धि निद्ध है ॥
काहू समैमैं अनंत-भाग भाववृद्धि होय,
काहू समैमैं अनंत-गुन-भाव वृद्ध है ।
इसी भांति छहौं भेद हानिकौं लगाय लीजै,
धन्न ग्यान केवलमैं सब बात सिद्ध है ॥ १५ ॥
जहां लौं गिनै सो संख्यात अगिन असंख्यात,
जाकौ अंत नाहिं सो अनंत ठहराया है ।
संख भेद संखके असंखके असंख भेद,
जाहीके अनंत भेद सो अनंत भाखा है ॥
जातैं भेद घाट होय भाग नाम कह्यौ सोय,
जातैं भेद बाढ़ होय सोई गुन गाया है ।
संख्यात असंख्यात अनंत भाग गुन षट,
वृद्धि हानि बारै भाव सूधा समझाया है ॥ १६ ॥
ग्यान गेय माहिं नाहिं गेय हू न ग्यान माहिं,
ग्यान गेय आन आन ज्यौं मुकुर घट है ।
ग्यान रहै ग्यानी माहिं ग्यान बिना ग्यानी नाहिं,
दुहूं एकमेक ऐसैं जैसैं सेतपट है ॥

भाव उतपात नास परजाय नैन भास,
दरवित एक भेद भावकौ न वट है।
द्यानत दरव परजाय विकलप जाय,
तव सुख पाय जव आप आप रट है ॥ १७ ॥
निहचैं निहार गुन आतम अमर सदा,
विवहार परजाय चेतन मरत है।
मरना सुभाव लीजे जीव सत्ता मूल छीजै,
जीवरूप विना काकौ ध्यान को धरत है ॥
अमर सुभाव लखै करुना अतीव होय,
दया भाव विना मोखपंथ को चरत है।
अविनासी ध्यान दीजै नासी लखि दया कीजै,
यही स्वादवादसेती आतमा तरत है ॥ १८ ॥
षट गुनी हानि वृद्धि भाव हैं सुभावहीके,
सुद्धभाव लखैंसेती सुद्धरूप भए हैं।
सरवथा कहनेकौं आप जिनराजजी हैं,
आचारज उवझाय साधु परनए हैं ॥
कुंदकुंद नेमिचंद जिनसेन गुनभद्र,
हम किस लेखे माहिं सूधे नाम लए हैं।
द्यानत सवद भिन्न तिहूं काल मैं अखिन्न,
सुद्ध ग्यान चिन्न माहिं लीन होय गए हैं ॥ १९ ॥

दोहा।

बुद्धिवंत पढ़ि बुधि वढ़ै, अबुधनि बुधि दातार।
जीव दरवकौ कथन सव, कथननिमैं सिरदार ॥ २० ॥

इति षट्गुणी हानिवृद्धि।

पूरण-पंचासिका।

सवैया इकतीसा।

नाथनिके नाथ औं अनाथनिके नाथ तुम,
तीनलोक नाथ तातैं सांचे जिननाथ हौ।
अष्टादस दोष नास ग्यानजोतकौं प्रकास,
लोकालोक प्रतिभास सुखरास आथ हौ ॥
दीनके दयाल प्रतिपाल सुगुननि-माल,
मोखपुर पंथिनकौं तुमी एक साथ हौ।
द्यानतके साहव हौ तुमही अजायव हौ,
पिंड ब्रहमंड माहिं देखनिकौं माथ हौ ॥ १ ॥

चौबीसा-छंद (आठ रगण)

भान भौ-भावना ग्यान लौ लावना,
ध्यानकौं ध्यावना पावना सार है।
स्वामिकौं अच्चिकै कामकौं वच्चिकै,
रामकौं रच्चिकै सच्चकौं धार है ॥
सल्लकौं भेदिकै गल्लकौं छेदिकै,
अल्लकौं वेदिकै खेद खैकार है।
रोषकौं नट्ठकै दोषकौं भट्ठकै,
सोपकौं लट्ठकै अट्ठकौं जार है ॥ २ ॥

सवैया इकतीसा।

चाहत है सुख पै न गाहत है धर्म जीव,
सुखकौ दिवैया हित भैया नाहिं छतियां।
दुखतैं डरै है पै भरै है अघसेती घट,
दुखकौ करैया भयदैया दिन रतियां ॥

ल्यायौ है बबूलमूल खायौ चाहै अंब भूल,
दाहजुर नासनकौं सोवै सेज ततियां।
द्यानत है सुख राई दुख मेरकी कमाई,
देखौ रायचेतनिकी चतुराई बतियां॥ ३॥

सवैया तेईसा।

को गुरु सार वरै सिव कौन, निसापति को किह सेव करीजै।
कौन बली किम जीवनकौ फल, धर्म करैं कब क्या अघ छीजै॥
कर्म हरै कुन कौन करै तप, स्वामिकौ सेवक कौन कहीजै।
द्यानत मंगल क्यौं करि पाइयै, पारस नाम सदा जपि लीजै४
कौन बुरा तम कौन हरै, तजियै न कहा किहकौं तजि दीजै।
क्या न करै किहकौं न धरै, किहसूं लरियै किहमैं न रहीजै॥
का सहुभिन्न चलै कि नहीं, व्रत स्वामिकौ देखिकैं क्या उचरीजै
द्यानत काम निरंतर कौन सो, पारस नाम सदा जपि लीजै५
का सहु दान कहा उपजै अध, को गृह ऊपर काहि पड़ीजै।
कौन करै थिर कैसे हैं दुर्जन, क्यौं जस कौन समान गनीजै॥
का कहु पालियै धर्म भजै किम, धर्म बड़ा कहु कौन कहीजै।
द्यानत आलस त्याग कहा सुभ, पारस नाम सदा जपि लीजै६

सवैया इकतीसा।

निज नारि खोय पूछैं पसुपंछी वृच्छ सब,
तुम कहीं देखी सु तौ तीनलोक ग्याता है।
हर्नाकुस पेट फार्यौ कंस जरासिंधु मार्यौ,
ताकौं कहैं कृपासिंधु संतनिकौ त्राता है॥
बैल असवार दोय नार औ त्रिसूल धार,
गलमैं वघंबर दिगंबर विख्याता है।

ऐसी ऐसी बात सुनि हांसी मोहि आवत है,
सूरजमैं अंधकार क्यौं करि समाता है॥ ७॥
चारौं गति भाव यार सोलहौं कषाय 'सार',
तीनौं जोग 'पासे' ढारै दोष 'दाव' परैं हैं।
जीवै मरै कर्म रीत सुभा सुभ 'हार जीत'
संयोग वियोग सोई मिलि मिलि बिछुरैं हैं॥
चवरासी लाख जोनि ताके चवरासी भौन,
चारौं गति विकथामैं सदा चाल करैं हैं।
चौंपरके ख्यालमैं जगत चाल दीसत है,
पंचमकौं पाय ख्यालकौं उठाय धरैं हैं॥ ८॥
सुनि हो चेतन लाल क्यौं परे हौ भवजाल,
बीते हैं अनादि काल दीसत कंगाल हौ।
देखत दुख विकराल तिन्हीसौं तेरौ ख्याल,
कछु सुध है संभाल डोलत बेहाल हौ॥
घरकी खबरि टाल लागि रहे और हाल,
विष गहि सुधा चाल तज दीनी बाल हौ।
गेह नेहके जंजाल ममता लई विसाल,
त्यागिकै हूजै निहाल द्यानत दयाल हौ॥ ९॥

सवैया तेईसा।

संग कहा न विषाद बढावत, देह कहा नहिं रोग भरी है।
काल कहा नित आवत नाहिं नैं, आपद क्या न नजीक धरी है
नर्क भयानक है कि नहीं, विषयासुखसौं अति प्रीति करी है।
प्रेतके दीप समान जहानकौं, चाहत तो बुधि कौन हरी है १०

क्रोध सुई जु करै करमौंपर, मान सुई दिढ़ भग्न (?) बढ़ावै ।
माया सुई परकष्ट निवारत, लोभ सुई तपसौं तन तावै ॥
राग सुई गुरु देवपै कीजियै, दोष सुई न विषै सुख भावै ।
मोह सुई जु लखै सब आपसे, द्यानत सज्जन सो कहिलावै ११
पीर सुई पर पीर विडारत, धीर सुई जु कषायसौं जूझै ।
नीति सुई जो अनीति निवारत, मीत सुई अघसौं न अरूझै ॥
औगुन सो गुन दोष विचारत, जो गुन सो समतारस बूझै ।
मंजन सो जु करै मन मंजन, अंजन सो जु निरंजन सूझै १२
ध्यान सुई कछु चिंत करै नहीं, ग्यान सुई कछु बात न गूझै ।
दान सुई जु विवेकसौं दीजियै, जान सुई दुख जानकैं ऊझै ।
वानि सुई सुभ ग्यान बढ़ै घट, ग्यान सुई परमैं नहिं मूझै ।
मंजन सो जु करै मन मंजन, अंजन सो जु निरंजन सूझै १३

मालिनी ।

कर कर नर धर्मं पर्म सर्मं प्रदाता,
हर हर नर पापं दुःख संताप भ्राता ।
यह जिन उपदेसं सर्व संसार सारं,
भवजलनिधि धारं जान चढ़ि (?) होहि पारं ॥१४॥

वसंततिलका।

तूही जिनेस करुनाकर दीनबंध,
स्वामी त्रिलोकपति ईसुर ग्यानखंध ।
वंदौं त्रिकाल जगजाल निकाल मोहि,
दाता महंत भगवंत प्रसन्न होहि ॥ १५ ॥

सुन्दरी ।

रहित दोष अठारै देव हैं, गुरु सदा निरग्रंथ सु एव हैं ।
धरम श्रीजिनभाख प्रमान है, मुकतिपंथ यही सरधान है १६

भुजंगप्रयात ।

सहे दुःख नर्कं निगोदं अपारं,
अजौं नाहिं छाड़ंत अक्षं विकारं ।
सुहैकै विवेकी भए जात वारे,
भले जी भले जी भले प्राणप्यारे ॥ १७ ॥

करखा (सर्व लघु) ।

अथिर सब जगत वन तनक नहिं कहिं सरन,
चतुरगति दुख धरन हरन साता ।
इक सु अध उरध भुव अन सु तन अन सु तव,
असुच पुदगल अधुव तजत ग्याता ॥
ममत असरव करत निरममत सवर रत,
सुहित निरजर भरत धरत ध्याता ।
मुनत त्रिभुवन अचल गुनत अवगम अटल,
दुलभ अनभव अमल सिव प्रदाता ॥ १८ ॥

सवैया तेईसा ।

भूख लगै दुख होहि अनंत, सुखी कहियै किम केवलग्यानी ।
खात विलोकत लोक अलोककौं, देखि कुदर्व भखै नहिं प्रानी
खायकैं नींद करैं सब जीव, न स्वामिकैं नींदकी नाम निसानी
केवलग्यानी अहार करैं नहिं, सांची दिगंबर ग्रंथकी वानी १९

जिनगुणसम्पत्ति व्रतके तिरेसठ उपवास, छप्पय ।

षोड़सकारन जान, ठान पड़िवा व्रत सोलै ।
पंच कल्यानक सांच, पांच पांचै अघ छोलै ॥
दस जनमत दस ग्यान, बीस गुन बीसौं दसमी ।

चौदै गुन सुरकृत्य, बार दस चौदस धरमी ॥
गुन आठ प्रातहारजनिके, आठ अष्टमी कीजियै ।
द्यानत त्रेसठ उपवास कर, तीर्थंकर पद लीजियै २०

विश्वाराघातभावत्याग, सवैया इकतीसा ।

भूमि कहै मोपै गिरि सागरकौ बोझ नाहिं,
कौलसेती टलै दुष्ट ताकौ महा भार है ।
दसरथ बोल सार रामकौं दियौ निकार,
राजनीति लंघी बात लंघी न करार है ॥
नख सिख अंगनिमैं एकै मुख गुनकार,
सांच वचन प्रभुजीकै भयौ ओंकार है ।
ऊंट वाड़ गाड़ी पाड़ चलता ही भला कहै,
ऐसे वे सरमके जीवनकौं धिकार है ॥ २१ ॥

धैर्य भाव ।

अंजनी सुसर सास मात तातनैं निकास,
सीता सती गर्भवती रामजीनैं छारी है ।
प्रदुमन सिला तलैं धर्यौ पाप ताप भर्यौ,
रामचंद वनवास महा त्रासकारी है ॥
पंडवा निकलि गए कैसे कैसे कष्ट भए,
सिरीपाल कोटी भट सह्यौ खेद भारी है ।
द्यानत बड़ौंका दुःख छोटनिकौं सीख कहै,
दुखमाहिं सुख लहै सोई ग्यानधारी है ॥ २२ ॥
दर्सनविसुद्धि विनै सदा सील ग्यान भनै,
संवेग सुदान तप साधकी समाधजी ।

वैयावृत अरहंतभक्ति आचारजभक्ति,
बहुश्रुतभक्ति प्रवचनभक्ति साधनी ॥
षट आवस्यक काल मारगप्रभाव चाल,
वातसल्ल प्रतिपाल सोलहौं अराधजी ।
तीर्थंकर कारन हैं कर्मके निवारन हैं,
मोखसुख धारन हैं टारन उपाधजी ॥ २३ ॥
उनसठि लाख सहस सत्ताईस चालीस,
कोड़ाकोड़ि वर्ष आदिनाथजीकी आव है ।
तीन कोड़ाकोड़ि ग्यारै लाख चौ सहस कोड़,
एते वर्ष ब्रह्मा आव लोकमैं कहाव है ॥
उन्नीस लाख पचपनसै पचपन ब्रह्मा,
आदिनाथ आवमैं हुए मुए फलाव है ।
एक कोड़ाकोड़ि बहत्र लख असी हजार,
कोड़ि वर्ष बाकी रहे जानौ धर्म न्याव है ॥ २४ ॥

सवैया तेईसा ।

इंद्र अनेक विवेककी टेक, तुही प्रभु एककौं सीस नवावैं ।
मौलि महा मनि नैन दिखैं धन, लाल सुपेद नखौं महि आवैं ॥
पाटल वर्न रमाघर चर्न, सरोज उभै गुन प्रीति बढ़ावैं ।
भौं रज नाहिं धरैं जड़भाव हरैं, सुमरैं सुख क्यौं नहिं पावैं २५
बुद्धि कहै बहुकाल गए दुख, भूर भए कबहूं न जगा है ।
मेरौ कह्यौ नहिं मानत रंचक, मोसौं विगार कुनार सगा है ॥
देहु री सीख दया तुम जा विध, मोहकौ तोरि दै जेम तगा है ।
गावहुंगी तुमरौ जस मैं, चलरी जिसपै निज पेम पगा है २६

धर्मप्रशंसा, सवैया इकतीसा।

चिंतामन जान कहीं पारस पाखान कहीं,
कल्पवृच्छ थान कहीं चित्रावेलि पेखियै।
कामधेनु रूप कहीं पोरसा अनूप कहीं,
बनी है रसायन जवाहर विसेखियै ॥
नृपकौ प्रताप कहीं चंद भान आप कहीं,
दीपजोति व्याप कहीं हेमरासि लेखियै।
फैलि रह्यौ ठौर ठौर भेख गह्यौ और और,
एक धर्म भूप सब लोक माहिं देखियै ॥ २७ ॥

रतनौंकी खानि कहीं गंगाजल पानि कहीं,
सीत माहिं घाम पौन सीतल सुगंध हैं।
बड़े वृच्छ फल छांहिं अतर गुलाब माहिं,
मेघकी भरन परै बहु मेवा खंध है ॥
तंदुल सुवास कहीं आभूषन रास कहीं,
अंबर प्रकास अति मोहकौ निबंध है।
एक धर्मसेती सब ठौर जै जै कार होय,
ताही धर्म बिना घर बाहरमैं धंध है ॥ २८ ॥

नर्क पसुतैं निकास करै स्वर्ग माहिं वास,
संकटकौं नास सिवपदकौ अंकूर है।
दुखियाकौ दुख हरै सुखियाकौं सुख करै,
विघन विनास महामंगलकौ मूर है ॥
गज सिंह भाग जाय आग नाग हू पलाय,
रन रोग दधि बंध सबै कष्ट चूर है।

ऐसौ दयाधर्मकौ प्रकास ठौर ठौर होहु,
तिहुं लोक तिहुं काल आनंदकौ पूर है ॥ २९ ॥
इधै कोट उधै बाग जमना बहै है बीच,
पच्छमसौं पूरवलौं असीन (?) प्रवाहसौं।
अरमनी कसमीरी गुजराती मारवारी,
नरौंसेती जामैं बहु देस बसैं चाहसौं ॥
रूपचंद बानारसी चंदजी भगोतीदास,
जहां भले भले कवि द्यानत उछाहसौं।
ऐसे आगरेकी हम कौन भांति सोभा कहैं,
बड़ौ धर्मथानक है देखियै निवाहसौं ॥ ३० ॥
सहरमैं नहर है ठौर ठौर मीठे कूप,
बाजार बहुत चौरा बसती सघन है।
आन देसौंसेती जहां स्रावक अधिक बसैं,
सुखी सब लोग अति ही उदार मन है ॥
दान नित देत पूजा भावसौं परम हेत,
सास्त्र सुनैं हैं सचेत होत जागरन है।
इंद्रपथ नाम बन्यौ इंद्रहीकौ सांचौ धाम,
दिल्ली सम और देस माहिं नाहिं धन है ॥ ३१ ॥
आगरेमैं मानसिंह जौहरीकी सैली हुती,
दिल्ली माहिं अब सुखानंदजीकी सैली है।
इहां उहां जोर करी यादि करी लिखी नाहिं,
ऐसे भाव आलससौं मेरी मति मैली है ॥
आगरेमैं बड़े उपकारी थे बिहारीदास,
तिन पोथी लिखवाई तब थोरी फैली है

दिल्ली माहिं लागू होय पोथी पूरी लिखवाई,
ऐसौ साहिवराय सुगुननकी थैली है ॥ ३२ ॥
दिल्लीमैं नहरि आई तैसैं यह कविताई,
धाम धाम जल ठाम ठाम यह वानी है ।
केई पूजा पढ़ैं केई पद रागसेती रटैं,
सुनि सुख बढ़ै बहु धर्मबुद्धि सानी है ॥
बहुत लिखावैं बहु सास्त्रकौं बचावैं सदा,
लिख लेय जावैं बहु सांच प्रीत ठानी है ।
दिल्ली माहिं सब ठौर ग्रन्थ यह फैलत है,
तैसैं सब देस फैलौ सबै सुखदानी है ॥ ३३ ॥
आगरौ गुननिकौ जहानाबाद रहै कोय,
सुधरूप धरमविलासकौ प्रकास है ।
धरमविलास धर्मके कियैं सदा विलास,
धर्मकौ विलास यह धरम विलास है ॥
धर्मकौं करै है कोय आपहीमैं धर्म होय,
वस्तुकौ सुभाव सोय कभी नाहिं नास है ।
निज सुद्ध भावमैं मगन रहौ आठौं जाम,
बाहज हू हेत बड़ौ ग्रंथकौ अभ्यास है ॥ ३४ ॥
पूजा बहु परकार दानके कवित्त सार,
चरचा अपार षट दर्वकौ विचार है ।
भगतिकौ अधिकार पदनिकौ विसतार,
अध्यातमकौ निहार बानीकौ विथार है ॥
अखर बावनी धार लोकालोक निरधार,
कोप भाव निरवार कथा हू उदार है ।

धरम विलासमैं अनेक ग्यान परकास,
सब माहिं भगवान भगवान भगवान तार है ॥३५॥
अग्र नाम तपसी वसेसौं अगरोहा भया,
तिसकी संतान सब अग्रवाल गाए हैं ।
ठारैं सुत भए तिन ठारैं गोत नाम दये,
तहांसौं निकसिकैं हिसार माहिं छाए हैं ॥
फिर लालपुर आय व्यौंक 'चौकसी' कहाय,
गोलगोती वीरदास आगरेमैं आए हैं ।
ताहीके सपूत स्यामदासके द्यानतराय,
देस पुर गाम सारे साहमी कहाए हैं ॥ ३६ ॥

छप्पय ।

पुरनि माहिं आगरौ, आगरौ आन नाहिं तुल ।
अगर सुवास प्रकास, तास सम अगरवाल कुल ॥
वीरदास महावीरदासतैं, नाम धर्यौ जन ।
नेमिनाथ तन स्याम, दासतैं स्यामदास भन ॥
धन द्यानतदार विचारिकैं, द्यानत नाम प्रवानिया ।
कवि नगर नाम दादा पिता, निज नामारथ आनिया ३७

सवैया इकतीसा ।

सत्रहसय तेतीस जन्म व्याले पिता मर्न,
अठताले व्याह सात सुत सुता तीन जी ।
छयाले मिले सुगुरु बिहारीदास मानसिंघ,
तिनौं जैन मारगका सरधानी कीन जी ॥
पछत्तर माता मेरी सील बुद्धि ठीक करी,
सतत्तरि सिखर समेद देह खीन जी ।

कछु आगरेमैं कछु दिल्ली माहिं जोर करी,
अस्सी माहिं पोथी पूरी कीनी परवीनजी ॥ ३८ ॥

छप्पय ।

गाय हंस उतकिष्ट, मधम मृतिका सुक जानौ ।
चलनी छाजं पखान, फूटघट महिष प्रवानौ ॥
जोंक बोक फनधार, और मंजार उलू ह्व ।
ए दस भेद जघन्य जान, स्रोता चौदह धुव ॥
जो जो सुभाव धारक सहज, सो सो नाम धरावई।
सो धन्य पुरुष संसारमैं, धरम ध्यान मन लावई ३९

सवैया इकतीसा ।

सात विस्न त्याग वारै व्रतसौं कियौ है राग,
कंदमूल फूल साग सब त्याग करे हैं ।
बैंगन करोंदे तूत पेठा बेर तरबूज,
जामुन गौंदी अंजीर खिरनीसौं टरे हैं ॥
चामघीव तेल जल हींग वासी पकवान,
विदल अचार मुखेसौं (?) थरहरे हैं ।
जल छान लेत रात पानी नाज तजि देत,
दर्सनसौं हेत ऐसे ग्याता गुन भरे हैं ॥ ४० ॥

छप्पय ।

आप पढ़ा कछु होय, सुना कछु होय जथारथ ।
समझ ग्यान वैराग, क्रिया नित करत मुकत पथ ॥
नई उकति नहिं धरै, जुगत बहु विध उपजावै ।
पिछले आगम देखि, कठिनकौं सरल बनावै ॥
सुभ अच्छर छंद प्रगट अरथ, परमारथ वरनन करै ।
द्यानत ममता त्यागी सुकवि, जब जस बानी विसतरै ४१

सवैया इकतीसा ।

कोयलकौ बोल जहां काक हू कलोल करैं,
मोरनिकौ धोर तहां मैंडककौ सोर है ।
तूतीकौ सबद उहां तीतुर हू बोलत हैं,
पानी माहिं मच्छकौ न मछलीकौ जोर है (?) ॥
खग विद्याधर खग पंछी नभ गौन करैं,
वनमैं मृगेंद्र मृग चाल ताही ओर है ।
तैसैं बहु कवि तामैं मैं भी लघु कवि तामैं,
गुन लीजौ दोष मति कीजौ लखि खोर है ॥ ४२ ॥
भानके प्रकास दीपके उजास दीसैं वस्तु,
राह माहिं बारी माहिं गज दिष्टि आवै है ।
उरदू बाजार छोटे बड़े हैं दुकानदार,
थोरा व्रत बहु व्रत व्रती नाम पावै है ॥
राजा परजाकैं सुतका उछाह एक सा है,
नौ ग्रहमैं (?) हीरा अरु मूंगा हू कहावै है ।
तैसैं कविताकी गिनतीमैं हम कविता है,
वचन विलाससेती न्यारौ आप भावै है ॥ ४३ ॥
घातिया करम नास लोकालोक परकास,
सरवग्य कैसौ ग्यान हम कहां पायौ है ।
संसकृत प्राकृत न भाषा हू अलप बुद्धि,
नाममाला पिंगल हू पूरा नाहिं आयौ है ॥
इस माहिं कवि चातुरी कछु करी है नाहिं,
सूधा धर्म मारगकौ उपदेस गायौ है ।
भूमंडल माहिं रविमंडल ज्यौं उदै करै,
धरमविलास सबहीके मन भायौ है ॥ ४४ ॥

छप्पय ।

अच्छर मात्रा छंद, अरथ जो अमिल बखाना ।
जान अजान प्रमाद, दोषतैं भेद न जाना ॥
संत लेहु सब सोध, बोधधर हो उपगारी ।
बालक ऊपर कटक, कौन धारै मतिधारी ॥
इस सबद गगनमैं सुकविखग, अपना सा उद्यम गहै ।
पावै न पार सुभ थान वसि, परमानंद दसा लहै ॥४५॥

सवैया इकतीसा ।

अकवर जहांगीर साहजहां भए बहु,
लोकमैं सराहैं हम एक नाहिं पेखा है ।
अवरंगसाह बहादरसाह मौजदीन,
फरकसेरनैं जेजिया दुख विसेखा है ॥
द्यानत कहां लग बड़ाई करै साहबकी,
जिन पातसाहनकौ पातसाह लेखा है ।
जाके राज ईत भीत विना सब लोग सुखी,
बड़ा पातसाह महंमदसाह देखा है ॥ ४६ ॥
जैनधर्म अधिकार दीसै जगमाहिं सार,
और मतके फकीरसेती जती सुखी है ।
सब मत माहिं रात दिन पसु जेम खाहिं,
स्रावक विवेकी निसत्यागी गुरुमुखी है ॥
जल अनछानेसौं नहारू आध व्याध होय,
पानी पीयैं छान कभी होत नाहिं दुखी है ।
सांच धर्म सब लोक जान जान सुखी होय,
सांच बात कही, नाहिं कही आप रुखी है ॥ ४७ ॥

चैत सब मास माहिं उत्तम वसंतसेती,
सर्व सिद्धा त्रोदसी कहैं हैं सब लोकमैं ।
सतभिखा है नछत्र सतकौ कथन अत्र,
सुभ जोग महा सुभ धर्मके संजोगमैं ॥
गुरु पूजनीक गुरुवार कृस्न पच्छ धार,
सेत हैं हैं तीन वार आगम प्रयोगमैं ।
सत्रहसै अस्सी सोलै भाव रीत चित्त वसी,
ग्रंथ पूरा कीना हम सुद्ध उपयोगमैं ॥ ४८ ॥
एक सुध आतम सधै हैं सात भंगनतैं,
आठौं गुनमई परभावनसे सुंन है ।
यही सुभ संवतके सोलै सब आंक भए,
सोलै भावसेती बंधै तीर्थंकर पुंन है ॥
इसमैं अधिकार भी उनासीके सोलै आंक,
सोलहौं कषाय नासकारी महा गुंन है ।
जातनमैं ग्यान जात बातनमैं ध्यान वात,
धातनमैं बड़ी धात जैसैं हेम हुंन (?) है ॥ ४९ ॥

छप्पय ।

जबलौं मेर अडोल, छोड़ि भ्रम रुचि उपजाऊ ।
जबलौं सूर प्रताप, पाप संताप मिटाऊ ॥
जबलौं चंद उदोत, जोति सबके घर भासै ।
जबलौं स्री जिनधर्म, सर्वकौ सुख परकासै ॥
जबलौं भुव मंगल गगन थिर, तबलौं ग्यान हिये धरौ ।
इस धर्मविलास अभ्याससौं, सब ही भवसागर तरौ॥५०॥

सवैया इकतीसा ।

कथा देखौ आदिनाथजीके दस परजाय,
वृत संघ निक्रीडत चंद्रामन भेव है ।
गनती अनंत विरलन देय औ सलाक,
दीपोदधि नाम गिनौ आवै नाहिं, छेव है ।
जीव कर्म दर्व तत्त्व ग्यान पूजा ठानी लोक,
सबै वहु भेद भाखैं तीर्थंकर देव है ।
भोग चक्रवर्तिजीकै समोसर्नकी विभूति,
जैनधर्मके समान जैनधर्म एव है ॥ ५१ ॥
बुद्धिका निवास होय सुद्धता प्रकास होय,
मुद्धता विनास होय उद्धता प्रभावना ।
दानकी पिछान होय ग्यानका निदान होय,
ध्यानका विग्यान होय मानका मिटावना ॥
इंद्री सब जेर होय मन जैसैं मेर होय,
मोहका अंधेर खोय जोतिका जगावना ।
जगतैं निकास लेह मोख माहिं करै गेह,
धरमविलास ग्रंथ आगमकी भावना ॥ ५२ ॥

छप्पय ।

सावन जल विन दियैं, मैल गुनका सब खोवै ।
जाका डर अवधार, कवित निरदूखन होवै ॥
जो दुख देय न सोय, कौन सम ताकौं जानौ ।
दोष विराने चूरि, आपने सिरपै ठानौ ॥
यह दुष्ट पुरुष जैवंत जग, चार बड़े उपगार हैं ।
दुरजनकौं सज्जन सम लखैं, ते ग्याता सिरदार हैं ५३

कुंडलिया ।

अच्छरसेती तुक भई, तुकसौं हुए छंद ।
छंदनसौं आगम भयौ, आगम अरथ सुछंद ॥
आगम अरथ सुछंद, हमौंनैं यह नहिं कीना ।
गंगाका जल लेय, अरघ गंगाकौं दीना ॥
सबद अनादि अनंत, ग्यान कारन विन मच्छर ।
मैं सबसेती भिन्न, ग्यानमय चेतन अच्छर ॥ ५४ ॥

छप्पय ।

धन धन स्री जिनराज, काज सब जियके सारौ ।
धन धन सिद्ध प्रसिद्ध, रिद्ध सब विध विसतारौ ॥
धन धन हौ तुम सुर, सूर दुखकौ निरवारौ ।
धन धन हौ उवझाय, लाय अंमृत विष डारौ ।
जग धन्न धन्न सब साधु तुम, वकता स्रोता सुख करौ ।
द्यानत हे माता सरसुती, तुम प्रसाद सब नर तरौ ॥५५॥

इति पूरण पंचासिका ।

समाप्त ।